

॥ ओ३म ॥

॥ नमः श्रीवर्द्धमानाय ॥

श्रीमद् जैनाचार्य श्री १००८ अमरसिंहजी महाराजका जीवन चरित्र ।

(नमस्कार मंत्र की व्याख्या सहित)
लेखक—

जैनाचार्य श्रीअमरसिंहजी महाराजकी संप्रदाय

के उपाध्याय श्रीमान् जैनमुनि स्वामी

आत्मारामजी महाराज

और

संशोधक — श्रीमान् पंडित जैनमुनि

ज्ञानचन्द्र जी महाराज ।

प्रकाशक—श्रीयुत लाला मिहोमल्ल, लाला हरमगवान्वास
ला० बसन्तामल्ल, बाबू कुन्दनलाल सवमोहरसीयर

श्रीधर निर्माण सं० २४३९ । पूज्य अमरसिंह सं० ३३ ।

संवत् १९७० । सम १९१४ ई०

पञ्जाब एकामोमीकल्ल / य आलय लाहौर में प्रिण्टर

लाला लालमन जैनी के अधिकार से छपा ।

प्रथमावृत्ति १५०६]

[बिना मूल्य वितरण

* प्रार्थना *

प्राज्ञ पुरुषो ! मैं आपसे सविनय निवेदन करता हूँ कि यह परम पवित्र जीवन चरित्र रूप पुस्तक श्रीमान् परम पं० उपाध्यायजी महाराजने लिख कर मुझ क्षुल्लक चेतना को सशोधन करने के लिये प्रदान किया अतः मैंने आपकी आज्ञानुकूल इस पुस्तक को स्वचुद्धचनुसार सशोधन किया है यदि अब भी प्रेस तथा मेरे प्रभाव से कोई अशुद्धि रह गई हो तो सख्यावान् पुरुष क्षमा करें। क्योंकि कहा भी है कि -अक्षरमात्रपदस्वर हीन व्यञ्जनसन्धि । विश्वर्जित रेफम् साधुभिरत्र समक्षतव्य । कोनविमुह्यति शास्त्रसमुद्रे॥१॥इति अपितु इस पुस्तक को श्रीयुत लाला मिट्ठीमल्ल, धावूराम, लुधियाना निवासी तथा ला० हरभगवान् दास, शकरदास कपर्यलावाले भावडा डब्बो धाजार लाहौर वा लाला कृपाराम, धसतामल्ल, सैक्रेट्री जैनसभाअमृतसर और धावूकुन्दनलाल सव ओरसीयर, सदानन्द, लुधियाना निवासी, इन धर्म प्रेमी महाशयों ने स्वव्ययसे प्रकाशित कराया है जिसके प्रभाव से उक्त महाशयों ने पर्यसे भी अतीव सुप्रख्याति की प्राप्ति की है ॥

जैनमुनि पण्डित ज्ञानचन्द्र ।

प्रस्तावना ।

विदित होवे सर्व सुखजनों को इस संसार चक्र में प्राणी मात्र को एक धर्म ही का आधार है ॥

धर्म के ही प्रभाव से आत्मा सद्गति को प्राप्त होता है। सो मानुष भव पाने का सारपदार्थ धर्म का निर्णय करना ही है अर्थात् धर्म निर्णय से सम्यक्त्व रत्न की प्राप्ति होजाती है ॥

किन्तु इस भनादि प्रवाहरूप संसार चक्र में अनेक प्रकार के धर्म प्रचलित हो रहे हैं जोकि (सय सय पससता गरहतापरंघयं) इससूत्रके कथनानुसार वर्ताव कर रहे हैं अर्थात् स्व, मतकी प्रशंसा परमत की निंदा, करते हैं ॥

किन्तु विद्वानों का यह पक्ष नहीं है कि पर सत्यपदार्थ को नो अपनी कुयुक्तियों द्वारा कलंकित करना। विद्वानों का यही धर्म है कि सत्यासत्य का निर्णय करके सत्य को ग्रहण असत्य का परित्याग करना अपितु इस भारत भूमि में अनेक प्रकारके मत प्रबुत हो रहे हैं जैसे कि—
स्वामी व्यासनान्द सरस्वती जी ने वेद वा एक ईश्वर को ही सृष्टि कर्ता माना है ॥

शंकराचार्य ने एक शिव को ही सर्वोत्तम यतछाया है ॥

व्यासश्रुतिने एक वेदान्तदर्शन को ही मुख्य रक्खा है ॥

कपिलवेष ने सांख्यदर्शन में पञ्चविंशति प्रकृतियों से ही सबकुछ मान लिया है इस प्रकार कणादमुनि गौतमाचार्य ने भी निम्न २ पदार्थ माने हैं ॥

किन्तु मनुभादि श्रुतियोंनेयज्ञकर्म वा सृष्टिरत्न विषय अङ्कादि से माना है पूर्य मोर्मांसको ने वेदविहित हिंसा को अहिंसा ही करके लिखा है ॥

बौद्धोंने आत्मपदार्थ को क्षणमर तथा दीपक प्रकाशवत् लोगों को समझाया है तथा रुद्रिचन् यक्ष्णी इसलाम जैसे—कामिण्या, ब्यामिया, मनसूरिया, भयासीना, नादस्या, इफभाळिया, तारकिया-शतानिया, मज्जामिया, कुदरिया, सुनी, कयरिया, यहापोया, इत्यादि अनेक ही इस के मेद हैं और देवसमाज ब्रह्मसमाज राधास्वामितत्व बालसा गहरंगनी गरीयदासीये चारथाक् ब्रह्माण्ड पुराण, धागाका लुकामठ, मलूकदासिये, चद्रमक्त, सांखी, मनुष्यमक्त, देवु, नानकपथी, धाममार्गादि अनेक प्रकार के मत अनेक प्रकार के तत्वमिन्न २ प्रकार से निरूपण करते हैं तथा स्वः स्वः मत की धूम्रये कटिबद्धसदेव ही हो रहे हैं ॥

किन्तु काट ता केवल जिज्ञासु जनों को ही प्राप्त हो रहा है कि ये किस मतको सच्चा मानें और किस मतको त्यागने योग्य या प्रदण करने वाला मानें किन्तु सत्योपदेष्टासर्वज्ञप्रणीत केवल एक जैनधर्म ही है जो सर्व प्रकार स प्राणोमाय की रक्षा करने में कटिबद्ध है या उद्यत हो रहा है भार दया का सर्वत्र प्रचार करने का उपदेश कर रहा है ॥

भार स्वादादरूपी तरंगा से समुद्रवत् ज्ञानसे प्रतिपूर्ण है तत्त्वपदार्थों का पूर्ण प्रकार से उपदेष्टा है जिस की स्तुति अनेक विद्वान् सततमुखसे कर रहे हैं तथा अनेक विद्वद्वी विद्वान् भी जैनमत के तथ्यों की वैश्वकर् अति महत्त्वता प्रगट करते हैं ॥

तथा जैनसूत्रों के अनेक सरलार्थ अपापनी माया में उन लोगों ने करलिये हैं या कर रहे हैं क्योंकि यह घटी अनेकस्त मत है जोकि पूर्ण कालमें जपगी सत्य रूपी विद्या से जय प्राप्त करता था और पञ्चमान कालमें भी जय प्राप्त कर रहा है ॥

और सर्वमतों से प्राचीन है क्योंकि इस जैनमत ही की अदिता रूपी मुद्रा सर्व मतापरि अंकित हो रही है ॥

अपितु दास से सिखाया पड़ता है कि गदो कटकी वैसे विधिप्रदा

है कि जिस जैनमत को परमोच्चश्रेणी में गणन करा जाता था भाज्य उस जैनमत को बहुत से लोग नास्तिकादि नामों से पुकारते हैं ॥

तथा इस परम पवित्र अनेकान्तमतको घृणासे देखते हैं अनुचितता से व्यवहार करते हैं अर्थात् वर्ताव करते हैं ॥

तो क्या यह भायपुरुषोंको खेदका स्थान नहीं है अवश्यमेव है ॥

तो विचारनीय बात है कि यह छोकोऽपवाद केवल परस्पर की द्वेषता का ही प्रमाण है ॥

क्योंकि वर्तमान समय में भीजैनमत की तीन शाखायें हैं जैसे कि श्वेताम्बर जैन १ श्वेताम्बरमूर्तिपूजक जैन २, दिगम्बरजैन ३, किन्तु श्वेताम्बरमूर्तिपूजक जैनोंकी भी दो शाखायें हैं जैसे कि श्वेताम्बरमूर्तिपूजकजैन १, और पीताम्बरमूर्तिपूजकजैन २, तो प्रायः पीताम्बरमूर्तिपूजकजैन अनुचित उपदेश या लिखन में सकुचित भाव नहीं करते हैं—जैसे कि पीताम्बराचार्य्य भारमारामजी का बनाया हुआ—तत्त्व निर्णय प्रासाद नामक ग्रंथ विक्रमाब्द १९५८ मुबई ईशु प्राकश आप्स्टांक कं०ली०को प्रकाशित हुआ है जिसके पूर्व भारमारामजी का चरित्र भी लिखा है जिसमें श्वेताम्बरमतको अनेक कटुक शब्द तथा अतथ्यलेख लिखे हैं सो इन्ही कारणों से उक्त भाक्षेप जैनमनों पर छोक करते हैं ॥

तो यथास्थान कितनेक भाक्षेपों का इस पुस्तक में उल्लेख भी लिखा जायेगा क्योंकि यह पुस्तक एक महाभाचार्य्य श्री के जीवन की चरित्रा दिखलाने वाला है मनु खंडन महान को ॥

अपिच विचारशीलपुरुषों का धर्म है कि सत्यमापणसत्यलेखन द्वारा भ्रम्यसीधों के द्वितैपो धनं जिससे फिर अनुक्रम स मोक्षाधिकारी हों क्योंकि शम दम युक्त सुहृ पुरुषोंके गुणानुवाद करनेसे अनंत कर्मों

को धर्मेणा से जीवमुक्त हो जाता है और फिर अनंत ज्ञान की प्राप्ति होती है ज्ञान से ही सर्वत्रयया है ॥

यदुक्तम् (पदमंमाणतउदया) अर्थात् प्रथम ज्ञानतत्पश्चात् क्या है सो सम्यक् ज्ञान से ही सम्यक् दर्शन प्रगट होता है तथा सम्यक् दर्शन पूर्णक ही सम्यग्ज्ञान होता है ॥

युगपत् सम्यक् होने से सम्यक् चारित्र भी मोहनीकर्म की क्षयोपशमता से प्राप्त हो जाता है सो इस पुस्तक में सम्यग् ज्ञान सम्यक् दर्शन सम्यक् चारित्र युक्त ही महान् पुरुष के चरित्र छिछने के लिये ही उद्यत हुआ हूँ ॥

शाशा है यह चरित्र रूप ग्रंथमस्य जीवों के मोक्ष रूपपथमें अवश्य ही सहायक दायेंगा । जिहासु जनों को अवश्यमेव ही अकंठा होवेगी कि ऐसे त्रिगुणयुक्त महा पुरुषका क्या नाम । वा किल काष्ठ में हुये इत्यादि ॥

सो महाराज जो का ऐसा नाम है यथा भीक्षुगोमयसूचमर्म्म शठछीय महाभाषाट्यं श्रीमत्पूज्य भमरसिंहजी महाराज ॥

जिन्होंने अपनी मायुको धर्मार्थ अर्पण किया है जिन्होंने महान् परिणामों के साथ शुद्धसत्य को धारण करके महान् ही परोपकार किया है ॥

किन्तु पञ्चापदेश में तो स्वामीजीमहाराजजी ने स्वामि विघ्नर को महान् ही परोपकार किया है क्योंकि भाषाट्यमहाराज वा ऐसा वैराग्य मयःपदेश था कि जिससे मय्यजीय शीघ्र ही सम्यक्त्व के लक्ष्य को उठातेये ॥

पुनः स्वामी जी भी परोपकारियों कि वंक्ति में शिरोमणी थे । और फिर जैनमार्ग के परमोपदेष्टा श्रीपूज्यजी महाराज हुए ॥

क्या मय्यगण उन महारामजी के ज्ञान से मुक्त हो सकते हैं कदापि नहीं भला ऐसा कीन है जो ऐसे महान् परोपकारों महारामजी का

जीवन चरित्र सुनना न चाहे तथा ऐसा कौन है जो ऐसे महात्मा के गुणानुवाद न करे या ऐसा कौन है जो परम शान्ति मुद्राधारी सत्योपदेष्टा सद् गुणालङ्कृत भाषार्थ्यपद के धारक श्रीमान् पूज्य महाराज के गुणों में रक्त न हो। अर्थात् भव्यगण गुणादि में सर्वैष ही रक्त हैं ॥

भव्य जीवों के चतुर्वर्णीय कमल में बस महाशक्ति के गुण सर्वैष ही विराजमान रहते हैं ॥

भव्यजीव अपने तरने के वास्ते उक्त भाषार्थ्यमहाराज जी के सर्वैष ही गुण कीर्तन करते रहते हैं क्योंकि जिन्होंने सूर्य समान जिनमत का इसलोक में प्रकाश किया अर्थात् स्याद्वादवाणी के द्वारा जीवकर्म को निम्नर करके दिखलाया तथा जिनके सुंदर अनेकान्तमत के व्याख्यान में अनेक ही सदृशदृश्य उपस्थित होते थे ऐसे महामुनि का यह जीवन चरित्र है ॥

इस चरित्र ग्रंथमें श्रीमान् परमपंडित भाषार्थ्य धर्म्य सर्वैषहीजय विजय करने वाले जैनधर्म में सूर्य समान श्री १०८ पूज्यसोहनलाल जी महाराज जी ने मुझको बहुत ही सहायता दी है साथ में बहुत से जीर्ण पत्र भी प्रदान किये हैं जोकि यथास्थान इस ग्रंथ में लिखे आयेगे ॥

और श्री श्री १०८ गणा वरुणदेवकउपाधि विभूषित श्रीस्थामी गणपतिराय जी महाराज जी ने भी बहुत से पृथक् इतिहास सुनाये हैं जो कि यथास्थान में दिए आयेगे ॥

और श्रीमान् लाल वसीलाल सोताराम मलेरी नामा वाले ने भी इस पुस्तक के लिखते समय बहुत से पुस्तकों की सहायता दी है ॥

और बहुत से भव्यजीवों की सम्मति से यह ग्रंथ लिखा गया है। अशाहकिमभ्यजीवोंके लिये यह ग्रंथ अवश्यमेषही हितकारीहोगेगा ॥

उपाध्याय जैनमुनि श्री आत्मारामजी ।

* जीवन चरित्र *

नमोऽसमणस्स भगवतो महा वीरस्सण ।

अथ श्री श्री श्री १००८ श्रीसुधर्मगच्छाचार्य श्रीमद् पूज्य
अमरसिंहजी—महाराज जी का जीवन चरित्र लिखते हैं ॥

विदित होये पछाल (पञ्चाब) दश म एक अमृतसर नामक नगर
वसता है । जो प्राचीन नगरों के गुणों परके विमूर्षित हो रहा है ॥

जिन की मेदनी शुशामित दारही है मोर नामा प्रकार के पा
नाना देशों के वसने वाले नामा ही प्रकार के व्यापारी लोग व्यापार
करते हैं ॥

प्राय धन करके भी लोग मलङ्कग दारहे हैं विविध प्रकारके अला
शय अपनी २ सुदृढता दिगा रहे हैं आरामादि करके भी नगर मलङ्कग
हो रहा है नामा ही प्रकार की लताये पुरम (पुष्प) प्रदान करती हैं ॥
उक्तपुर अन्यदेशों में *शिष्य लोगों का तीर्थ माना जाता है ॥

किन्तु उक्त नगर में ही परम रमणीय जल करके सुशोभित
एक तडाग (तलाब) है जिसमें स्नान करके मंडन दयतपापापमय
(सगमरमरका) एक स्थान बना हुआ है जिस में शिष्य लोगों का धर्म
पुस्तक गुरु ग्रंथ साहिब स्थापित किया हुआ है अपितु उस स्थान का
दरिमदिर जी के नाम से लोग पुकारते हैं ॥

जिस की यात्रा व लिये अन्यदेशों के सहस्रों लोकमाते हैं अर्थात्
अमृतसर नामक नगर नागरिक गुणों परके संपुष्ट हो रहा है ॥

* व्याकरण में शास्त्रमनुशिष्टी धाम में कथप्रायपाम्ति हो कर
शिष्यशब्द सिद्ध होता है किन्तु अपर्युक्त स्थान शिष्य ही भाषा
में सर्वत्र प्रसिद्ध हो रहा है ॥

सो तिस नगर में एक मोसवाळ वत्तख गोत्रवाला शेट (ब्रेष्ट शब्द का अपभ्रंश शेट वा सेठ शब्द है) खुशालसिंह बसता था क्योंकि महाराजा रणजीतसिंह के प्रभाव से बहुत सी छातियों में सिंहनाम की प्रथा चल पड़ी थी। सा मद्यापि पर्यन्त भी कई छातियों में वह प्रथा उसी प्रकार चली आरही है ॥

किन्तु वह वत्तखगोत्री खुशालसिंह शेट ज्यादातर की दुकान करता था ॥

सो खुशालसिंह शेट के तीन पुत्र उत्पन्न हुए जैसे कि युद्धसिंह, चैनसिंह, ओघनसिंह, छाला चैनसिंह के परिवार में छाला मोहनलाल मोहनलाल रछेशाह फगु शाह इत्यादि सुपुरुष हुए छाला ओघनसिंह के वंश में छाला घनेयामल्ल, छाला मइयामल्ल, छाला मजुनमल्ल इत्यादि यह सब छाला ओघनसिंह के परिवार के हैं और छाला युद्धसिंह के तीनपुत्र हुए जैसे कि छाला मोहरसिंह, मेहरचंद इन का वंश भी सुदूर प्रख्यातियुक्त हुआ जैसे कि :—

छाला मेहुमल्ल, कमकुमल्ल, मानेशाह इत्यादि यह एक वंश के हैं ॥

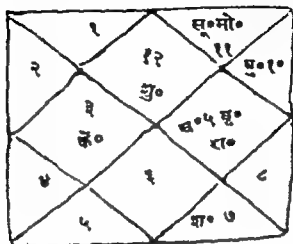
तृतीय पुत्र महा तेजवंत चन्द्र सहृदय सौम्य भीमती माता कर्मों की कुल से विक्रमाब्द १८६२ वैशाख कृष्ण द्वितीया के दिन उत्पन्न हुआ अर्थात् भमरसिंहजी का जन्म हुआ ॥

पिता जी ने निजपुत्र का जन्म महोत्सव अत्यानंद से किया पाचक लोगों को मलीप्रकार धाम देकर तृप्त किया पुनः तत् कालही सुप्रसिद्ध गणिक द्वारा भमरसिंहजी की अम कुबली बनवाई छाला युद्ध सिंह भमरसिंहजी के मस्तक को देखकर परमानंद होता था ॥

कर्मोमाताजी भी प्रियपुत्र को देखकर अपने नेत्र तृप्त करती थी किन्तु इस अनित्य ससार को भी नित्य ही समझने लगी ॥

* मोसवाळों की उत्पत्ति का स्वरूप देखो जैन समुदाय शिक्षा अपरनाम गृहस्थाश्रम शील सौभाग्य भरण माला नामग्रंथ में ॥

सम्बत् १८६२ तत्र कुंभाऽर्के ६ तत्र सूर्येष्ट जन्म लग्न



साय हे ऐसे वैधव्य पुत्र के वर्जम से कौन नहीं भानेवहोता
मर्यात् सर्व हो होते हैं ॥

क्योंकि भमरसिंहजी पादवायस्था में हो गान्धीय चातुर्य से पुनः
पुनः माता पिता की विनय भक्ति करते थे ॥

फिर यथा योग्य कर्णवैधादि संस्कारों के पश्चात् विद्या अभ्यास
संस्कार किया गया मर्यात् भमरसिंहजी पढन सगे अपितु बुद्धि ऐसी
तीक्ष्ण थी कि मन्त्रफाल में ही लघक गणितदि सुविद्या में निपुण
होगये फिर अपनी बुद्धि का काम करने लग गये योपनायस्था जब
प्राप्त हुई तब पिताजी न भति महोत्सव के साथ, स्पाटकोट में, छाळा
होराठालजी (जो कि सहवाले ऐसे नाम से प्रसिद्ध हैं) की धर्मपत्नी
पार्वी आत्मादेवी जी की पुत्री श्रीमती कुमरी ग्यालादेवी जी के साथ
पालिप्रहण करवाया फिर विद्याभ्यास करके भमरसिंह में भाये और
भार्यामंद से फिर दिन जाने लगे ॥

किंतु यह समार भगिण्य है काष्ठक सय के शिरोपदि भूमदा है ॥
किंतु मोह के यग प्राणी काष्ठक का मूल रहे हैं किन्तु बाळ ओष
को भवदय ही घेरलेता है ॥

सो कितने ही काल के पश्चात् अमरसिंह जी के माता पिता स्वर्ग
वास होगये तब मृत्यु संस्कार के पश्चात् शोक दूर किया गया ॥

क्योंकि यह दिन सब पर ही खड़ा हुआ है इत्यादि विचारों से
अब शोक दूर हो गया तब अमरसिंहजी ने सर्व काम अपनी बुद्धि का
अपने हाथ में लिया स्तोक काल में ही नामांकित ज्योहरी हो गये ॥

और अमरसिंह जी के गृहस्थाश्रम में निवास करते हुओं के दो
पुत्रिये उत्पन्न हुई ॥

एक वत्समदेवी द्वितीय मगधान्देवी सो उत्तमदेवी का हुशोयार-
पुर में छाला अम्बीरचंद के साथ विवाह हुआ और मगधान्देवी का
छाला हेमराज के साथ विवाह किया गया अपितु छाला हेमराजजी
(हुशियारपुर के बसने वाले हैं ॥

और छाला अम्बीरचंद के दो पुत्र हुए, छाला नारायणदास १,
छाला कृपाराम २, जिन्होंने अमृतसर में जैनसभा सम्बन्धी बहुतसे
कार्य किये हैं । और छाला नारायणदासजी के पुत्र छाला सुन्दरीराम
हैं । और छाला अम्बीरचंदजी के एक पुत्री हुई जिसका नाम भीमती

नारायणदेवी जी था सो नारायणदेवी जी का विवाह पट्टी नगर जिला
छाहौर छाला बघावेशाह के साथ हुआ जिनके तीन कन्यायें हुई जिनके
यह नाम हैं भीमती इन्द्रकौर १, भीमती पारवती २, भीमती मन्पी ३,
सो भीमती इन्द्रकौरजी का विवाह कपूरथला में छाला गणेशदासजी के
प्रेम पुत्र छाला हरमगवान्दासजी के साथ हुआ जो आजकल छाहौर
शहर में रहते हैं जिन के ४ पुत्र एक कन्या है जिनके यह नाम हैं छाला

करदास १, छाला दीवानचन्द २, छाला मन्सीलाल ३, छाला प्यारेलाल ४, और
गोपीदेवी १ ॥ जोकि इस ग्रंथ के प्रसिद्ध करनेवाले हैं और भीमती
पारवती जी का विवाह छाहौर शहर में छाला दिग्विशाह के साथ
जिनके पुत्र छाला छज्जुमल्ल जी हुए और भीमती सूर्यदेवीजी
कन्या १, और भीमती मन्पी कुमरो का विवाह निदीन शहर में छाला
गोबिन्दचंदकी के साथ हुआ जिनके पुत्र छाला हंसराज जी हैं ॥

भीरू लाला छपारामजी के पुत्र लाला ज्वाहरमल्ल—राजा बंसे
तामल जो कि अमृतसर जैनमठ के मंत्री हैं। भीरू हंसराज, मुखर
राज, पायूराम ॥

यह भी स्वः पितानुकूल धर्म में रक्त हैं भीरू भगवानदेवी जिसका
लाला हेमराज जी के साथ विवाह हुआ था उस के एक दक्षिणदेवी
कन्या उत्पन्न हुई उसका विवाह निवीन में हुआ ॥

किन्तु तिसके गौरी दुर्गादेवी नाम की दो पुत्रियें फकीरघर
नामक एक पुत्र का जन्म हुआ। सो गौरी देवी का विवाह अमृतसर
में लाला धनराज के साथ हुआ भीरू दुर्गादेवी का विवाह सुजानपुर में
किया गया ॥

विषमित्र परो देखिये श्रीपूज्य महापूज्य कौने पिछाल कुल में
उत्पन्न हुए भीरू कौने विस्तीर्ण कीलि युक्त हुए क्योंकि अमरसिंहजी
पुद्गलभूमि में सदाचारी मद्र प्रभुमहति धर्मात्मा पुरुष थे तथा प्रवृत्ति
से ही शास्त्रिकरूप थे ॥

सो पूर्ण पुण्योदय से सामाजिक पदार्थों से विच की निवृत्ति
होने लगी दीक्षा की भांति उत्पन्न हुई ॥

साथ ही पुण्यशाला भारमा (उदितो दिते) उदय में उदय होते हैं,
जब श्री अमरसिंह जी का वैराग्य भाव उत्पन्न हुआ तो अमृतसर
तमब जयपुर में आकरात के पास गये थे सो यहां पर भी हो
छोगा के साथ धर्म विषय मार्गों में हुई ॥

फिर अपना निज भावना मा प्रग - कर दिया तब से नेठ सोने
अमरसिंह जी के भावना का सुन कर भावना में मूढ़ हो गये ॥

पुनः यह कहने लगे कि हे अमरसिंह जी यदि आप दीक्षा
पारण करने चाहते हैं तो हमसे आप - साथ दीक्षा पार
करते तब अमरसिंह जी - साथ ही करें किन्तु मेरी साधना

तब अमरसिंह जी पुनः अमृतसर में आए तो दिनों दिन वैराग्य भाव बढ़ने लगा श्रुति मुक्ति मार्ग में प्रवेश हो गई जो कुछ संसारी पदार्थ थे वे अनित्यता दिखाने लगे मन निर्ममत्व में लग गया मुनि भाव धारण को आकांक्षा बढ़ती गई श्री जिनवाणी ने कर्म या जीव के स्वरूप को निम्न २ कर के दिखा दिया ॥

तब फिर चिन्त में यह निश्चय किया कि किसी मुनिराज के मिलने पर दीक्षा धारण करूंगा ॥

फिर कितनेक समय के पश्चात् श्रीमान् परम पंडित श्रीस्वामी रामलाल जी महाराज श्री मगवान पर्यमान स्वामी के ८५वें पट्टे पर विराजमान अपने अमृत रूपी व्याख्यानो के द्वारा इस प्रांत में मिथ्या पथ का नाश करते थे तब अमरसिंहजी ने चिन्त में निश्चय किया कि मैं श्रीमहाराज का शिष्य होकर श्रीमगवत का मार्ग प्रकाश करूँ जिस करके बहुत से मनुष्य जीव मिथ्या पथ को त्याग कर सुगति के अधिकारी बनें क्योंकि मनुष्य जन्म पानेका यही सार है कि धर्म के द्वारा परोपकार करना तब अमरसिंह जी ने अपनी बुद्धि पर पाँच पुरुष गुमावते (बाँध) करके बठ लाये सब काम उनके समर्पण कर दिया घर का भी नियम पूर्वक कार्य उनके ही कहा गया जिनका नाम यह है ॥

लाला घसीटामल्ल १, महयामल्ल २, सोहनलाल ३, घनैया मल्ल ४, कोटू मल्ल क्षत्री ५, जब आप सब काम कर चुके फिर यथा योग्य घन सम्बन्धियों को भी लेकर दीक्षा के वास्ते अमृतसर से चल पड़े परंतु उस काल में परम पंडित श्री स्वामी रामलाल जी महाराज दिल्ली (इम्प्रस्थ) में विराजमान थे तब श्री अमरसिंहजी दिल्ली को ही चले गये वही उस समय में रोज गाड़ी का प्रचार न होने के कारण से बहुधा लोग इम्प्रस्थ में जाने वाले सूनामादि नामक मगरों से होते हुए दिल्ली में पहुँचते थे ॥

जय श्री भमरसिंह जी सुनाम में गये पुनः धावक लोगों के साथ घर्म सम्बन्धी शार्तालाप हुआ तो दो पुरुष दीक्षा के लिये अन्य भी उद्यत हो गये जिन के नाम यह हैं कि—रामरत्न जी १, जयति दास जी २, तब भी भमरसिंह जी दोनों को साथ ले कर दिवली में पधारे ॥

सत्य है पुण्यात्मा आप तरते हैं अन्य को तार देते हैं इसी वास्ते ही शक्रस्तव में भगवत् की स्तुति समय यह सूत्र आया है यथा—

(तिष्णार्ण तारयार्ण) अर्थात् भगवन् आप तरते हैं अन्य मय जीयों को तारते हैं ॥

जय श्री भमर सिंह जी रामरत्न जी जयति दास जी इन्द्र प्रस्थ में पहुँचे पुनः श्री राम लाल जी महाराज जी के आनन्द पूर्णक दर्शन किये श्री महाराज जी की व्याख्यान रूपी अमृत धारा से हृदय रूपी कमल पवित्र किया पुनः निज भाशय को शरण कमलों में निवेदन किया ॥

तब भी राम लाल जी महाराज ने संयम का पालन भक्ति कठिन दिस्तार पूर्णक कह सुनाया तब भी भमरसिंह जी ने राम रत्न जी ने और जयति दास जी ने सहर्ष मुनि वृत्ति स्वीकार की। क्योंकि सत्य है शूरपीठ के लिये कौनसी बात कठिन है ॥

फिर दिवली वाले भाषकों ने १८९८ में विष्णुमाष्टे और वैशाख पूर्ण द्वितीया व दिन दीक्षा महोत्सव स्थापित किया तब भमर सिंह जी ने रामरत्न जी ने जयतिदास जी ने भीषणित राम लाल जी महाराज के पास उक्त गाँव में दीक्षा धारण करी अर्थात् सामायिक धारित्र ग्रहण किया तत्पश्चात् * पञ्चमहाप्रतपष्टम रात्रि भोजन स्नान रूप छेदोपस्थापनी नामक धारित्र धारण किया ॥

* पाँच महा प्रती का स्वरूप देगा भी वृत्तार्थकालिक सूत्र भी भाग्यार्थ सूत्र, श्री प्रदत्त व्याख्यान सूत्र इत्यादि सूत्रों में मुनि गुण की वचन दिये गये हैं।

और सर्व मुनि गुण युक्त होते हुए भीपक्षित जी महाराजके पास श्रुताध्ययन करने लगे ॥

क्योंकि श्रीभरसरसिंह जी महाराज सप्त गुरु ब्राह्मणे जैसे कि—
श्री दीनदत्त राम जी महाराज १, श्री छोटनदास जी महाराज २,
श्री रामरत्न जी महाराज ३, श्री पूज्य भरसरसिंह जी महाराज ४,
श्री जयतिदास जी महाराज ५, श्री देवी चन्द जी महाराज ६,
श्री घनीराम जी महाराज ७, ये सर्व यथा विधि श्रुताध्ययन करते
हुओं ने विक्रमाब्द १८८८वें का चतुर्मास दिखली में किया ॥

किन्तु शोक से छिन्नमा पड़ता है कि काळ की कैसी विविध
गति है कि श्री रामलाल जी महाराज जो कि पूर्ण विद्वान् थे षट् मास
के अंतरगत ही स्वर्ग प्राप्त हो गये तब भी सब में महान् शोक उत्पन्न
हो गया एक महान् जैन संघ में अमूल्य रत्न की हानी हो गई ॥

परन्तु जब काळके समुक्त तीर्थंकरादि भी स्थिर न रहे तो मला
भान्य पुरुष की तो क्या ही बात है, इत्यादि विचारों से शोक दूर किया
गया अर्थात् उदासी भाव दूर हा गया ॥

श्री भरसरसिंह जी महाराज चतुर्मास के पश्चात् ग्राम नगरों
में जैन धर्म का प्रकाश करते हुओं ने १८९९ वें का चतुर्मास सुनाम
नगर में किया उस काळ में * स्तोक महान् अर्थ सचक शास्त्रों की
दृश्यता प्रगट करने वाला सूक्ष्म ज्ञान सीखा सूत्र भी उत्तम संयोग होने
पर बहुत से अध्ययन किये ॥

अपितु इस द्वितीय चतुर्मास में ही श्री पूज्य जी महाराज
शास्त्रज्ञ पूर्ण हो गये जिनके दर्शन करके लोग यही कहते थे कि यह

* स्तोक शब्द का अपसंश थोकड़ा शब्द बना हुआ है क्योंकि
थोकड़ों में महान् सूत्रों का दृश्यज्ञान भरा हुआ है तथा थोक शब्द
समूह का याची होने से भी ठीक है क्योंकि थोकड़ों में सूत्रों का थोक
ज्ञान है ॥

साधु होनहार हैं जैन धर्म के परमोपासक होयेंगे । साथ ही लागू माया शीघ्र ही फलभूत हो गई ।

पुनः नामा पटियाला छिटायाल इत्यादि नगरों में धर्मोपदेश देते हुआने १९०० का चतुर्मास मन्थाला नगर में किया नगर में धर्मोपोत्त बहुत ही हुआ क्योंकि श्री अमरसिंह जी महाराज धर्मसेता थे सर्वेश्वर ही धर्म बुद्धि में कटि बद्ध थे पुनः धर्म के पूष प्रकार से परचारक थे चतुर्मास के अनंतर बन्ड, जरड रोपड, माछीवाडा, कुधियाना, जगदीया, बूड बन्ड जीरा, फीरोजपुर, इत्यादि नगरों में साथ धर्मोपदेश देते हुए जीवों को भयसागर से तारत हुए बहुत से आत्माओं की भक्ति विद्वत्ति हाने से १९०१ का चतुर्मास फरीदकोट में किया सो भी महाराज न जंगल देश के लोगों पर महान् परोपकार किया, बहुत से भक्तजनों के अमृत रूप जिन घाणी से भक्त करण पवित्र किये क्योंकि श्री महाराज में जिन घाणी के उच्चारण की महान् शक्ति थी और चारोंर की प्राप्ति वेसी थी कि पादिजन दर्शन करके ही विषाद की भाशा त्याग कर दीसा क लिये उद्यत होते थे व्याख्यान की भी शैली अकथनीय थी ॥

श्री महाराज ने इस चतुर्मास में भी उपवाई सूत्रानुसार बहुत ही तप किया तथा सूत्रों का उपधाम नाम छादि (माघम्लदि) भी तप किया, चतुर्मास के परधाम प्रामानु प्राम विदाट करते हुए लोगों के चित्र दे संदाय नाश करते हुए श्री महाराज अमृतसर में पधारे तब नगर में आयागद् हा गया बहुत से लोग परमतपासे दर्शन करने को माते थे पुन दर्शन करके आयागद् हाते थे क्योंकि श्री महाराज पूर्ण स्वस्वरूपा में अमृतसर में एक सुप्रसिद्ध जदीरियों में से नामांशित जीहरी थे ॥

बस बस में ही अमृतसर में श्रीरूपामी नागर मन्थ जी महाराज

का एक*शिष्य बूटेराय जी नामक धिरासमान था जिसने यहाँ पर तप करना प्रारम्भ कर रक्खा था ॥

किन्तु उपवासादि तप करत हुए परिणामों की शिथिलता बढ़ गई थी ॥

अपितु भी पुन्य महाराज बूटेरायजी के मन के भाव न जानते हुए तप कर्म में सहायक हुए किन्तु पाप कर्म गुप्त कब रह सका है इस कहावत के अनुसार अन्यदा समय बूटेराय जी भी महाराज जी से कहने लगे कि हे भगवन्सिंह जी आजकल तो साधु पण का ही व्यवच्छेद है तब भी महाराज ने कहा कि आप अपने आप को क्या समझते हो ॥

तब बूटेरायजी ने कहा कि मैं तो अपने आपको आश्रक मानता हूँ ॥

श्री महाराज ! बूटेराय जी भगवती सूत्र में लिखा है कि पञ्चम काल के अंत समय पर्यन्त भी चतुर् धीसंघ रहेगा, आप अपने मन को मित्यात में क्यों प्रवेश कराते हैं तथा चारिभादि को भी देखीये ॥

बूटेराय ! † मैं तो आश्रक हूँ ॥

* यह वही बूटेराय जी हैं जो एवेताम्बर मत को छोड़ कर पीताम्बर शाखा में गये थे जिनका नामयुद्धि विजय रक्खा गया था किन्तु यह संस्कृत वा हिंदी भाषा भी श्रुत नहीं पड़े हुए थे देखो हमको बनाई हुई मुखपत्ती धरणा नामक पुस्तक अपितु यह एक परिग्रह धारी पीताम्बरी के शिष्य हुए थे ॥

† मुखपत्ती धरणानामक पुस्तक में बूटेरायजी लिखते हैं कि—ममी जैन सिद्धान्त के कहे मुजब कोई साधु हमारे देखने में नहीं आया और हमारे में भी तिस मूजब साधु पणा नहीं हैं तिससे हम भी साधु नहीं हैं इति'धनमात्'इसी प्रकार अर्थात् स्तुति शंकोयार के प्रस्तावना पृष्ठ ११ में भी लिखा है जो राजेंद्र विजय धरणेन्द्र विजय स्वामी का बनाया हुआ है ॥

तब श्री भगवत्सिंह जी महाराज ने छपा करी कि सूत्र में लिखा है कि (गिहिणोवेषावस्त्रिणो) अर्थात् साधु गृहस्थ की पैयायुत्य करे तो अनाधीर्ण है इसी वास्ते मुनि गृहस्थ की पैयायुत्य न करे ॥

सो मैं तो सूत्रानुसार काम करूंगा तब श्री पूज्य जी महाराज ने ठाळा सोहनलाल, ठाळा मोहनलाल इत्यादि, सूत्र धायकों को सत्य वृत्तान्त कह सुनाया तब भावकगणमें श्री घूटेराय जी को बहुत सी हित शिक्षायें दीं किन्तु घूटेराय जी ने एक भी न मानी तब भावक वर्ग ने भी जानलिया कि इस घूटेराय जी का चित्त भस्चिर हो गया है ॥

(सत्य है मादनी कर्म किस २ को नहीं न चाता) भय यह पतित भयदयमेव ही हो जायेगा ॥

सो घैसे ही होगया तब फिर लोगों ने श्री महाराज को चतुर्मास की मृत्युन्त ही विज्ञप्ति करी तब श्री पूज्य मदागज जी ने १९०२ का चतुर्मास अमृतसर में ही किया किन्तु इस बीमास में श्री पूज्य जी मदागज भूतविद्या ही पूर्ण प्रकाश से भाष्ययत करते रह और इस बीमास में परमंत वालों को, बहुतसा लाभ हुआ बीमास के पदयात् स्वालकोट के माईयों की बहुत ही विज्ञप्ति होने से श्री मदागज ने स्वालकोट की ओर विहार कर दिया फिर वसकर गुजरावाला इसका जम्पू इत्यादि गगनों में धर्मोपदेश देने हुए स्वादाद कपी मत से मिट्याय का नाश करते हुआ ने सम्यक् १९०३ का बीमासा स्वालकोट में ही कर दिया तिस बीमासे में ठाळा *सीदागरमन्त्र जी जाबि बड़े दारुप्रह ये निन से बहुतसा लाभ और भी प्राप्त किया ॥

सो चतुर्मास अत्यार्थ से पून हा गया किन्तु इस बीमाने में ठाळा मुस्ताकराय जी का अति नीरव पैराय भाव उत्पन्न हा गया ॥

* यह घदी ठाळा सीदागरमन्त्र जी हैं जिन्हों न एक बार बहुत से दारुओं के प्रमाण देकर घूटेराय जी को समझाया था जब घूटेराय जी ने एक भी दारुप्रह प्रमाण न स्वीकार किया तब सीदागरमन्त्र जी

सत्य है ऐसे ही मिथ्या हठों से जिन मार्गों की यह दशा हो गई
ह अर्थात् नूतन शाखें उत्पन्न हो गई हैं ॥

छाछा मुस्ताकराय जी छाछा हीरालाल खड्ड वाले की पुत्री ज्याला
देवी के सगे भाई थे ॥

चौमासे के पदचात् श्री महाराज ने इन का भी दीक्षित किया यह
"महात्मा जी श्री महाराज के ज्येष्ठ शिष्य हुए फिर श्री पूज्य श्री महा
राज भ्रामानुग्राम विचरते हुए भव्य जीषों को सत्योपदेश देते हुए
छाहौर (छवपुर) में पधारे फिर कुशपुर (कसूर) में फिर फिरोजपुर
इत्यादि नगरों में विचरके फिर फरीदकोट वाले भाईयों की विद्वत्पि को
स्वीकार करके १९०४ का चौमासा फरीदकोट में ही करदिया पूर्ववत्
ही धर्मोद्योत हुआ फिर चौमासे के पदचात् अनुक्रम विचर के १९०५
का चौमास मालेरकोटले में किया सो मालेरकोटले में धर्मोद्योत बहुत
ही हुआ ज्ञान की वा तपादि की वृद्धि भवोव हुई क्योंकि उस काल में
मालेरकोटले में सूक्ष्म ज्ञान का प्रचार था कई ब्राह्मण शास्त्रज्ञ भी थे
अपितु घरों की सख्या भी महत् थी, किन्तु भय भी अन्य नगरों की
अपेक्षा महत् ही है ॥

चौमासे के पदचात् ग्राम नगरों में विचरते हुए धर्मोपदेश देते
हुए भव्यदा समय श्री महाराज नानानगर के समीप ही एक छोट्टा
वाल नामक उप नगर घसता है तिस नगर में पधारे जय रात्री को

ने रामनगर के भावकों से कहा कि यह यूटेराय जी तो सधम से शिष्य
हो गया है तुम क्यों पवित्र मार्ग से पतित होते हो तब रामनगर के
भाइयों ने कहा कि यदि यूटेराय जी पनस्पति विक्रिय भी करने
लगजावे तब भी हम तो गुरु करके ही मानेंगे ॥

* श्री स्वामी मुस्ताकराय जी महाराज के शिष्य स्वामी
हीरालाल जी महाराज हुए तिम के शिष्य श्री स्वामी तपस्वी गोविंद
राय जी महाराज विराजमान हैं ॥

पट्ट से धायक जम एकत्र हुए तो श्री महाराज जी एक दिन स्तुति या मनोहर उपदेशक पद कहने लगे तो एक जयचन्द्र नामक गृहस्थस्वामी का घेठा उपस्थित था तिसने श्री महाराज के स्वर को सुन के कहा कि श्री महाराज का ऐसा स्वर है कि,—

इन का १०० शिष्य का परिवार होवेगा साथ ही स्वरघेठा का कथन शीघ्र ही फली भूत हो गया फिर श्री पूज्य जी महाराज मन्यत्र विहार कर गये किन्तु बहुत से भाइयों की विमर्शित होने से १९०६ का चतुर्मास वृधियाना में किया ॥

धर्मोद्योत बहुत ही हुआ तथा सम्यक्सत्य में लोग दृढ़ हो गये मिथ्या भाग का नाश करते हुए अनुमान कार्तिक मास में ही एक फिरोजपुर नामक नगर से पत्र भाईयों का लिखा हुआ आया तिस में लिखा था कि—श्री योगराज जी के गच्छ के दो साधुओं का मन्त्र बीमास अर्थात् श्री स्वामी गगाराम जी महाराज भार श्री स्वामी हरपाल जी महाराज मित में स्वामी हरपालजी महाराज भक्ति राग पीडित हो रहे हैं इसलिये श्री महाराजजी फिरोजपुर की भार शीघ्र ही विहार कर दें ॥

इस पत्र के समाचार को सुनते ही श्री पूज्य जी महाराज ने वृधियाना से फिरोजपुर की भार विहार कर दिया अनुक्रमता से चलते हुए फिरोजपुर में जब पधार गये तब भायक लोग परमानन्द हुए किन्तु स्वामी हरपाल जी महाराज रोग से भक्ति पीडित हो रहे थे तब श्री महाराजजी ने ब्रह्म क्षत्र कालमाय को देग कर स्वामी हरपाल

* सूत्र श्री स्वामीजी सूत्र अनुपाग द्वार जी में एक स्वर मन्त्र वर्णन किया गया है, तिस मन्त्र में मुख्यतया बर्ये सप्त स्वर दिये हैं जैसे कि—पटञ्ज १ कवम २ गधार ३ मध्यम ४ पञ्चम ५ घेधंत ६ मिपाव ७ इन सप्त स्वरों का फल भी वक्त सूत्रों में ही विस्तार पूर्वक बयन दिया गया है ॥

जी को भनशन करवाया सो वह बल्यकाल में ही देवगत हो गये फिर श्री गंगागमजी महाराज अब एकले ही रहगये तो फिर श्री पूज्य जी महाराज ने विचार किया—यदि एक शिष्य नया हो जावे तो यह श्री गंगा रामजी साधु दो हो जायेंगे तब इन के समय का निर्वाह भी सुख पूर्वक हो जावेगा ॥

सत्य है पुण्यवान् की आशा शीघ्र ही पूर्ण हो आती है तब उस काल में ही एक ओसवाल जगल देश के नीरग्राम के बसने वाले आचक जीधनरामजी दीक्षा लेने वास्ते फिराजपुर में स्वतः ही भागये तब श्री पूज्य जी महाराज ने *जीधनराम जी को भली प्रकार से हद करके और फिराजपुर में ही दीक्षित करके स्वामी गंगारामजी को समर्पण करदिये ॥

धन्य हैं ऐसे परोपकारी महारमा को फिर श्री पूज्य जी महाराज जी भग्यन्न विहार करगये ॥

और ग्राम २ में जैनधर्म का प्रकाश करते हुए अनुक्रमता से दिल्ली नगर में पधारे फिर बहुत से छोगों की विज्ञप्ति होने के कारण १९०७ का चौमास इन्द्रप्रस्थ में ही करविया चतुर्मास में मध्य जीधों को समुत्कृपी सर्वशोक ज्ञान पिलाया और आचक छोगों ने भी जैनधर्म की अनेक प्रकार से प्रभावनायें करीं क्योंकि एक तो श्री पूज्यजी महाराज की दिल्ली में दीक्षा ही हुई थी, द्वितीय श्री महाराज परम पंडित थे इस कारण से लोग जाना प्रकार का उरसाह करते थे ॥

*यह वही श्रीजीधनराम जी महाराज हैं जिनके शिष्य आत्माराम जी हुए थे फिर श्री जीधनराम जी महाराज ने आत्माराम का मयोग्य ज्ञात करके स्वभगवत् से वाञ्छा किया था क्योंकि आत्माराम जी का विशेष यर्पन आगे लिखा जायगा, और जिनके गच्छ के पूज्य श्री चद्र जी विद्यमान है ॥

फिर श्री महाराज ने चतुर्मास के पश्चात् लोगों के परीषकार के वास्ते जयपुर की ओर बिहार किया ॥

किन्तु स्वामी मुस्ताफराय जी महाराज या न्यामी * गुलाबराय जी महाराज की मी यही विज्ञप्ति थी जय श्री महाराज भयपर में पधारे और जिन बाणी का प्रकाश किया सब बहुत से मन्यजनों को धैरान्य माय उपपन्न होगया जिस का फल भागे लियेंगे ॥

भन्यवा समय श्रीपूज्यजी महाराजजी ने जय भयपर से बिहार किया फिर अनुक्रमसे जय जयपुर में पधार गये तब जयपुर में आया १६ सत्पन्न हागया चारों ओर भोजैन द्रवेषके नामका नाद होने लगा—पञ्चापीसाधु नामकी सभासे लाफपुकारने लगे क्योंकि पूर्वकाल में श्रीमान् भाचार्य मन्कचन्द्र जी महाराज ने जयपुर में महान् धर्मोद्योत किया था ॥

फिर चारों ओर से चौमास की विज्ञप्ति होने लगी तब श्री महाराज जी ने १९०८ का चतुर्मास जयपुर का ही स्वीकार करलिया फिर जयपुरके समीप २ बिबरके चौमास के वास्ते जय जयपुर में पधारे तब ही विलागराय जी दीक्षा लेने वास्ते जयपुर में ही भागवे फिर श्री महाराज ने विलागराय जी पर दीक्षित पदके निज शिष्य बनाया ॥

* यह श्री गुलाबराय जी महाराज मी श्री पूज्य जी महाराज जी के ही शिष्य थे किन्तु इन की दीक्षा अनुमान १९०४ या १९०५ की है, मगितु पाठ्यगण क्षमा करें बहुत से दीक्षापत्र मुझे उपलब्ध नहीं हुए हैं इसलिये मैं अनुमान शब्द ग्रहण करता हूँ किन्तु यह महत्तमा जी फरीदपोट के वासी एक सुप्रसिद्ध भासपाल थे ॥

† यह यही था स्यामी विलागराय जी महाराज हैं जिन्होंने १९२८ में विरारगन्ध्रादि मपधारियों का अनिष्टचरण को प्रगट पदके श्री पूज्य जी महाराज से विज्ञप्ति की थी कि इस दुर्मन्ध का क्यों गुप्त करने हैं तब श्री पूज्य महाराज जी ने विद्वत्गन्ध्रादि भेदधारियों को गच्छ स पाद्य पर दिया था तब का स्वरूप भाग लियेंगे ॥

किन्तु यह भी स्वामी बिलासराय जी महाराज बहुत ही दीर्घ वशी शक्ति रूप थे और इनका जन्म मालेरकोटला नामक नगर का था दुकान कृधियाना नामक नगर में करते थे ॥

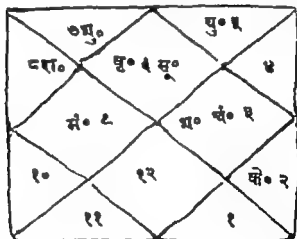
जय चौमास भत्यानद से व्यतीत होने लगा तब अकस्मात् भल्लर से रामयक्ष जी स्वः पत्नी युक्त दीक्षा के वास्ते जयपुर में हो उपस्थित हुए तब श्री पूज्य जी महाराज ने रामयक्ष जी सृष्टदेव जी को जयपुर के चौमास में ही दीक्षित किया ॥

और तिनकी पत्नी भी आर्याजी के पास दीक्षित हो गई ॥

किन्तु यह महात्मा जी—जैन धर्म में सूर्यवत् प्रकाश करने वाले हुए हैं और पञ्चाब देश में श्री स्वामी परम पंडित श्रीरामयक्ष जी महाराज ऐसे नाम से सुप्रसिद्ध हुए हैं ॥

क्योंकि स्वामी जी महाराज ज्ञानाकर थे स्वामी जी का जन्म १८८३ जन्म लग्न में इस प्रकार से ग्रह स्थित हैं ।

जैसेकि—विक्रमाब्द १८८३ भाद्रपद मास शुक्ल पक्ष १५ रवि वासरे मृग शीर्ष नक्षत्र प्रश्ननाम योगे कोलष करणे जन्म चक्रम् ॥



* श्री पूज्य रामयक्ष जी महाराज जी क पांच शिष्य हुए हैं श्री बृह्म शिष्याल जी १, विदनचम्पूजी जी कि सवेगी हो गये थे २।

और यह 'महात्मा जी परम त्यागी घैरागी थे ॥

सो जयपुर के चौमास में धर्मोद्योत बहुत ही दुभा तत्पश्चात् श्री पूज्य जी महाराज चतुर्मास के पीछे मरु (मारवाड) देश में घिबरने लगे सा जोधपुरादि नगरों में घिबरते हुए योक्तानेर (यकापुर) में पधारे तब नगर में धर्मोत्साह बहुत ही दुभा । सैंकड़ों नर मारी वर्जन करके मत्पानध होते थे । तथा भाषा पना सदाय निर्धुत करते थे ॥

जय श्री महाराज व्याख्यान करते थे तब भूम्यगण सशर्षों से निर्धुत होकर सदाय चौमास की विश्रुति करते थे ॥

जय लोगों न बहुत ही विश्रुति करी तब श्री पूज्य जी महाराज जी ने सन्मत् १९०९ का चौमास योक्तानेर में ही कर दिया धर्म की प्रमायना भी बहुत हुई ॥

दिन्तु चतुर्मास के अंतर गठ ही एक दिन की वार्ता है । श्रीमान् जोठारी रायतमल्ल जी श्री महाराज से पूछन लगे कि—
हृषा माध जैन मन की जो तीन शास्त्रायें धतमान बाल में हो रही हैं इन में से सदाय प्रतिपादक तथा सुधर्मा स्वामी की भव्यपछिन्न परवरा से कौनसी शाखा चलो आई है ॥

तब श्री महाराज ने शांति भाष से यह उत्तर दिया कि—दे
भावक जी जा भाण्ड प्रणीत सूत्रों में तत्स्य गद्यया मुनि गुण वधन किये

भीतपत्नी मीलापति राय जी महाराज जिनके शिष्य श्री स्वामी हरमाम दास जी महाराज हुए जो कि रोपड़ के घामी एक सुप्रसिद्ध भोसवाल थे जिन के शिष्य श्री स्वामी मणाराम जी महाराज भी स्वामी जयादर साह जी महाराज हुए ३। श्री स्वामी वल्लभ मल्ल जी महाराज ४ । श्री श्री स्वामी पंडित धर्मनन्त्र जी महाराज जिनके शिष्य श्री स्वामी त्रिपदपाल जी महाराज और श्री आचार्य वर्य सोहन लाल जी महाराज हुए जो कि पत्रमान समय में मूर्त्यवन् जैन धर्म का प्रकाश कर रहे हैं जिन का स्वरूप भाग तिरोंगे ॥

हैं सो जो उन तत्त्वों का चेत्ता मुनि गुण धारण करने वाला पुरुष है अर्थात् जो जीव सम्यक् प्रकार से तत्त्वों का ज्ञाता हो करके मुनि पद धारण करता है उसी ही जीव को सूत्र कर्ता युद्ध पुत्र के नाम से लिखते हैं ॥

तब श्रीमान् साधक जी ने कहा कि हे महाराज जी आप का कथन सत्य है अपितु जो कुछ आपने ह्रस्व वाक् से महान् अर्थ सूचक वचन दिया है मैं इस को शिरो धारण करता हू किन्तु इस कथन की सत्यता पूर्वक आपके धरण कमलों में निवेदन करता हू ॥

स्वामिन् जो दिगंबरि लोग हैं वे एकान्त मय के स्थापक होने से बनेकान्त मत में अयोग्य होते हुए स्व आत्मा को स्वयमेव ही तिरस्कार करने वाले हो गये हैं ॥

और जो श्वेताम्बर मत से भिन्न हो कर पीताम्बर कहलाते हुए वे तपतच्छादि धारी लोग हैं वे लोग भी बनेकान्त मत से पृथक् हो हैं ॥

क्योंकि—घोर शासन में एक श्वेत घस्त्र धारण करने की आज्ञा है, किन्तु यह लोग उक्त आज्ञा को न मानते हुए मनमाने पीतादि घस्त्र धारण करते हैं ॥

और यह लोग धीतराग भाषित दया मार्ग से पृथक् हो कर पट्काय वध रूप मदिरापदेष्टा हो गये हैं और भी नंदी जी सूत्र में यह कथन है कि जो भूत चतुर्विंश पूर्वधारी का कथन किया हुआ है वा दश पूर्व धारी का कथन किया हुआ है वे सम्यक् धृत हैं और वे प्रमाण करने योग्य हैं ऐसे कथन हाते हुए भी यह लोग उक्त कथन को सादर पूर्वक न देखते हुए जो मतांध पुरुषों के रचे हुए ग्रंथ हैं जिन में साधन निर्यथ का कुछ भी विवेक नहीं किया गया है उन ग्रंथों के यह लोग परमोप देशक हो रहे हैं तथा शास्त्रोक्त तीर्थ अचतुर्सन्नरूप को त्याग करके पाद्म पापाणरूप तीर्थों के स्पर्श करने से अपना कल्याण समझते हैं अजीव में जीव सदा धारण

करते हुए मुख से मुखपश्चि उतार करके हाथ में रखते हैं क्या मार्ग को न पालन करते हुए पुनः २ मसत्योपदेश देते हैं ॥

इत्यादि कारणों से यह लोग भी अनेकान्त मठ के भगधिकारी हैं सो सम्यक् दृष्टि से देखा जाय तो घोर शासन में शुद्ध मार्गोपदेश्य इयेताम्बर साधु मार्गी जैन ही हैं जय श्रीमान् ध्यायकजी ऐसे कथन कर चुके तब भी महाराज ने छपाकर कि—ह ध्यायक जो यह कथन भाष कर अत्यन्त ही निष्पक्षता का सूचक है तब फिर ध्यायक जो पाठे कि हे स्वामिन् श्रीविवाह प्रवृत्ति श्री साता धर्म कथांग इत्यादि सूत्रों में तब संयमादि नियमों को यात्रा पतलाया है किन्तु यह लोग ठक सूत्रों का पाठ होते हुए भी ध्यानपूर्वक नहीं देखते हैं इसी ही कारण से यह लोग सम्यक् ज्ञान से पराष्टमुख हैं ॥

तब श्री महाराज ने छपा करके ध्यायक जो इन्हीं कारणों से आत्मा ने अनन्त जन्म मरण किये हैं फिर भार भी ध्यायक जी न मदन पूछे सो स्वामी जी ने सूत्रानुसार पुष्टि पूर्वक देने उत्तर दिये कि ध्यायक जी परमानन्द हो गये और श्री महाराज की परम वीर्य करने लगें सो आनन्द के साथ १९०९ का बीमासा पूर्ण होने के पदमात् पूड़ी कोटे वाले श्री स्वामी, फकीरचन्द जी महाराज मिले तिनके साथ भी धर्म धार्मिक पहुँच होती रही ॥

तथा नेव सूत्र जो भगवन् नहीं को ये यह सत्र भी श्री महाराज जी ने स्वामी फकीरचन्द जी से पढ़े स्वामी फकीरचन्द जी श्री पूज्य महाराज जी की पुष्टि या योग मुद्रा का देण कर अनि आनन्द दाते ये भी भगवन् प्रेम पूर्ण कराने में ॥

पिपा भगवन् करने के पदमात् फिर श्री महाराज धोकानेर में ही श्री स्वामी हुज्जमीचन्द जी महाराज को मिले ता उन के साथ प्रेम पूर्वक धार्मिक हुई ।

अर्थात् श्री महाराजजी के दर्शन करता था यह उपदेश ही

परमार्थ हो जाता था सो भक्तमाल से श्रीपूज्यजी महाराज विहार करते हुए वा बहुतसे मुनियोंको मिलते हुए पुनः दिल्लीमें विराजमान होगये ।

लोगों को परम उत्साह उत्पन्न हो गया पुनः चतुर् मास करने की विवक्षित होने लगी तब श्री महाराज ने श्रीपद्म ऋतुको हात करके १९१० का बीमास दिल्ली में ही कर दिया पुनः चतुर्मास के पूर्व भाषाढ मास में धर्म के दोस्त श्री मोतीराम जी, रामचन्द्रजी, मोहनलाल जी, केदाराम जी, यह चार भाई लुधियाना से दीक्षा के वास्ते दिल्ली में आंगये तो श्री पूज्यजी महाराज ने इनको हृद करके भाषाढ कृष्ण १०मी, को दिल्ली में ही दीक्षित किया पुनः स्व शिष्य बनोये जिस में श्री पूज्यजी के पट्टधारी श्री पूज्य रामवल्लभ जी महाराज जी के पट्टधारी श्री सचने श्री स्वामी मोतीरामजी महाराज जी को १९३९ में मालेर कोटले शहर में आचार्य पद दिया अपितु यह स्वामी जी महाराज महान् शान्ति मुद्रा के धारी हुए हैं ।

* जिनर मुनियों को मिले थे, उन के नाम सर्व मेरे को उपलब्ध नहीं हुए हैं इसलिये जीवन चरित्र में सर्व नाम नहीं लिखे गये हैं नाही मरुस्थल के ग्राम नगरों के पूरे १ नाम मिले हैं नाही मालवे के ।

† श्री पूज्य मोतीरामजी महाराज का जन्म लुधियाना के जिले में एक बहलोलपुर नामक नगर बसता है जिस में विक्रमाब्द १८८० भाषाढ मास में हुआ था हाति के कोली क्षत्री दीक्षा १९१० दिल्ली में । आचार्य पद १९३९ मालेरकोटले में और स्वगवास १९५८ भाद्रपदमास, लुधियाने में, अपितु श्री महाराज के पाँच शिष्य हुए, जैसे कि श्री स्वामी गंगागामजी महाराज १ श्री स्वामी गणाधेदिक श्री गणपति राय जी महाराज २ श्री चंदजी जी कि पूर्व पापोदय से सयमसे पतित होगये ३ श्री तपस्वी हर्षचन्द्र जी ४ श्री तपस्वी होरालाल जी महाराज किन्तु श्री गणाधेदिक जी महाराज जी के शिष्य श्री स्वामी जयराम जी महाराज तस्य शिष्य श्री स्वामी शालिग्राम जी महाराज तस्य शिष्य इस पुस्तक के लिखने वाला उपाध्याय आत्माराम नामक मैं हूँ ।

करते हुए मुख से मुम्पसि उतार करके हाथ में रखते
फो न पालन करती हुए पुनः २ मसत्योपदेश देते हैं ॥

इत्यादि कारणों से यह लोग भी भवेकान्त मर
हैं सो सम्यक् दृष्टि से देखा जाय तो खीर शासन में
दयेतान्तर साधु मार्गी जैन ही हैं जय श्रीमान् ध्यात्
कर चुके तब भी महाराज ने कृपाकरि कि—इस
माप का अत्यन्त ही निष्पक्षता का सूचक है तब पि
कि हे स्वामिन् श्रीविषाह प्रतप्ति श्री साता धर्म का
तब स्वयमादि नियमों को यात्रा पठलाया है किन्तु
पाठ होते हुए भी श्यानपूर्वक नहीं देखते हैं इसी
सम्यक् ज्ञान से पराठ मृग्य हैं ॥

तब भी महाराज ने कृपा करके आप
मात्मा ने मनत जन्म मरण किये हैं फिर और
पूछे सो स्वामी जी ने सूत्रानुसार पुत्रि पृथक् ने
जी परमानन्द हो गये और भी महाराज की ॥
भामद के साथ १९०९ का बीमासा पूर्ण
पाते श्री स्वामी, फरीरघर जी महाराज
पार्श्वि बहुत होती रहती ॥

तथा जेव मूर्ख जो भगवन् नहीं करे य
जी मे स्वामी फरीरघर जी से बड़े स्वामी ११
महाराज जी की शुद्धि या योग मुद्रा को देख
और भगवन् प्रेम पुरुष बनाने थे ॥

यिहा भगवन् करने के पदवन् किता भी १
श्री स्वामी इस्वीरघर जी महाराज को मि
पूर्ण दर्शन हुई ।

मर्त्य जी भीमहाराज जी के दर्शन का

वैयावृत्य करते थे और श्री महाराज जी साधुओं को विधि पूर्वक श्रुताध्ययन कराते थे ॥

क्योंकि सूत्रस्थानाग जी के पाण्डित्य के स्थान के तृतीयोद्देशक में लिखा है कि—यदुक्तम्—

यच्चहिंठाणेहिं सुत्त वापज्जा तज्जहा संग्गहठ-
याप उवग्गहठयाय णिज्जरठियाय सुत्तेवामे पज्जव-
याते भविस्सन्ति सुत्तस्सवा अबोछिन्न थयठयाते ॥

अस्यार्थः—पंच कारणों से गुरु शिष्य का सूत्र पठावे । प्रथम तो मैंने इस को समझा है द्वितीय समय में यह स्थिर हो आयगा तो गच्छ में आधार भूत होवेगा तृतीय निर्जरायें चतुर्थ मेरा श्रुत मर्याद निर्मल होआयगा पञ्चम् श्रुत की शैली मध्यवच्छेदनायें इन कारणों से भावान्वय श्रुताध्ययन मुनियों को करावे ॥

तो श्री महाराज विधि पूयक मुनियों को श्रुताध्ययन कराते थे अर्थात् इस बीमासे में बहुत से मुनियों को श्रुत विद्या का काम हुआ ।

तो बीमासे के पश्चात् गनुक्रम से विहार करते हुए तथा जैन मत का स्थान २ में प्रचार करते हुए मालेरकोटले वाले भार्गवों की पुनः मर्याद विज्ञप्ति के प्रयोग से १९१२ का बीमासे मालेरकोटले नगर में हो कर दिया तो पूर्ववत् चर्माद्योत हुआ अपितु भ्रातृगणों ने श्री महाराज जी को एक उपालम्भ रूप धार्त्ता सुनाइ तो यह है कि—स्वामी जी आपने श्री जीवन राम जी महाराज को १९०१ में दीक्षा दी थी उन्होंने विक्रमाब्द १९१० में हमारे नगरमें एक बालक को दीक्षा दी है किन्तु उस बालक की शक्ति तो शुद्ध थी ही नहीं अपितु दीक्षा के पूर्व एक रात्री में हृदी का भ्रान्ति में भस्मस्मात् यसमा ही लग गया जय प्रातः काल में उस बालक को हाथ पाद धेने तो छुण्ण वर्ण दीफने दृष्टि गोचर हुए फिर हम लोगने श्री जीवनराम जी महाराज से विज्ञप्ति की कि—हे स्वामी जी यह बालक धर्म का विरोधि होवेगा ॥

इनका पूर्ण स्वरूप (मेरा बनाया हुआ) भी पूज्य मोतोराम जी महाराज का जीवन चरित्र नामक पुस्तक से देखो तापत्र्य यह है कि दिल्ली में १९१० के चतुर्मास में बहुत ही आनन्द हुआ ॥

बीमासे के पदचात् ग्राम नगरों में विहार करते हुए तथा परांपरा करते हुए ग्राम नामा नगरके पास छींटावाल नामक उपनगर में पधारे तो वहाँ स्वामी * बालक रामजी महाराज को १९११ वैशाख मास में दीक्षित किया, दीक्षा के पीछे भी महाराज अथ विप्रय करते हुए भस्पाछा (भस्पाकाल्य) नामक नगर में पधारे धर्मोद्योत मतीय हुआ ॥

और परमत वाले लोग भी भी महाराज जी के दर्शन करने को बहुत से आते थे पुनः स्वः स्वः संशय निर्मूलत करते थे तब भाइयों की बीमासा के वास्ते बहुतही विमृष्टि होने लगी तो भी पूज्य महाराज ने १९१२ का बीमास अवाले नगर में ही पर दिया ॥

किन्तु बीमासा के अंतर गठ ही भी स्वामी दोरालाल जी महाराज भी स्वामी भामकचन्द्र जी महाराज की दीक्षा करी और उस काल में भी स्वामी * लखचन्द्र जी महाराज भी महाराज जी की परम

● स्वामी बालक राम जी महाराज जी के शिष्य हुए भी स्वामी लालचन्द्र जी महाराज । भी स्वामी प्रेम लख जी महाराज स्वामी लालचन्द्र जी महाराज के शिष्य पूर्ण चन्द्रादि साधु हैं । भी प्रेम लख जी महाराज के शिष्य भी स्वामी शादी लाल जी महाराज हैं । तिन के शिष्य स्वामी हरिचन्द्र जी महाराज हैं शिष्यादि ॥

* स्वामि लखचन्द्र जी महाराज की दीक्षा अनुमान १९११ के बीमासे से पूर्व की है यह स्वामी जी हिन्दी के मिवासी एव समस्त भोमपात्र छाति के जाहते थे इनके शिष्य भी स्वामि तपस्वी चन्दरी सिंह जी महाराज या स्वामी यथायागम जी हैं तथा स्वामी जी के शिष्य पूर्व चण्डाल से । यनामनराय, तल्लौराम, हुकूम चन्द्र कपादि गुरि सरनसंनिधि १८८८ गणगण्ड में बने गये थे मित्रता नृनास यथा स्वामि में लिखा जायगा ॥

ध्यावृत्य करते थे मोर भी महाराज जी साधुओं को विधि पूर्वक भुताध्ययन कराते थे ॥

क्योंकि सूत्रस्थानाग जी के पाण्ड्यवं स्थान के तृतीयोद्देशक में लिखा है कि—यमुक्तम् :—

पचहिंठाणेहिं सुत्त वापज्जा तज्जहा संगहठ-
याप उवग्गहठयाय णिज्जरठियाय सुत्तेवामे पज्जव-
याते भविस्संति सुत्तस्सवा अवोछिन्न ययठयाते ॥

अस्यार्थः—पच कारणों से गुरु शिष्य को सूत्र पठावे । प्रथम तो मैंने इस को समझा है द्वितीय अयम में यह स्थिर हो आयगा तो गुरु में आधार नूत होवेगा तृतीय निर्जरायें चतुर्थ मेरा श्रुत मत्स्यन्त निर्मल होजायगा पञ्चम् श्रुत की शैली मत्स्यपछेदमार्ये इन कारणों से भाष्यार्थ भुताध्ययन मुनियों को करावे ॥

सो भी महाराज विधि पूर्वक मुनियों को भुताध्ययन कराते थे अर्थात् इस बीमासे मैं बहुत से मुनियों को श्रुत विद्या का छान हुआ ।

सो बीमासे के पश्चात् अनुक्रम से विहार करते हुए तथा जैन मत का स्थान ९ में प्रचार करते हुए मालेरकोटले वाले मारियों की पुनः मत्स्यन्त विद्वत्ति के प्रयोग से १९१९ का बीमास मालेरकोटले नगर में हो कर दिया सो पृथक् धर्मोद्योत हुआ अपितु छात्रगणों ने भी महाराज जी को एक उपाक्रम रूप धार्या सुनाई सो यह है कि—स्वामी जी आपने भी जीवन राम जी महाराज को १९०६ में दीक्षा दी थी उन्होंने विक्रमाब्द १९१० में हमारे नगरमें एक बालक को दीक्षा दी है किन्तु उस बालक की जाति तो शुद्ध थी ही नहीं अपितु दीक्षा के पूर्व एक राजा मेंहदी का स्रान्ति में भकस्मात् पसमा हो लग गया जब प्रातः काल में उस बालक को हाथ पाव देखे तो कृष्ण घर्ण धीकने दृष्टि गोचर हुए फिर हम लोगने भी जीवनराम जी महाराज से विद्वत्ति की कि—हे स्वामी जी यह बालक घर्म्म का वितोधि होवेगा ॥

तब श्री जीवन्मराम जी महाराज ने कृपा की कि हे भावनों ओ कुछ हम पाण्डव के भाग होंगे सो हो जायेगा इतनी बात कह कर फिर उस बालक का दीक्षित किया । सो उस बालक का नाम प्रथम तो दिशामन्त्र था ता फिर श्री जीवन्मरामजी महाराज ने उस बालक का नाम "भामाराम" रख दिया ।

सो यह कार्य अयोग्य ही हुआ क्योंकि इन कारणों से विदित होता है कि धर्म का मैं विघ्न भावद्वयमेव ही होयेंगे अर्थात् यह लड़का धर्म का ही विरोधि हो जायेगा । तब श्री महाराज ने कृपा की ।

हाँ इन कारणों से तो यह काम अनुचित ही हुआ है तथा धर्म पथ में इस भुटापत्तिणी काष्ठीके प्रभाव से और भी विघ्न होवेगा ।

नाम है गुरु पाप्य वाक्पति भसाय नहीं होता अर्थात् जैसे श्री महाराजने कृपा की थी ऐसे ही कार्य हुआ क्योंकि श्रीमहाराजने कहा कि प्रथम ब्रियामा के होने से यह समुचित कार्य नहीं हुआ है तथा भावी प-पात है दगा जमाली ओ को । इतने वाक्य श्रीमहाराज के सुन के लोग परमात्मद्वय गये किन्तु लोगों ने धृति से सारांश ही कह सुनाया ॥

स्वामी जी महाराज जय विजय करते हुए लोगों को मुक्ति पथ का मार्ग दिखलाते हुए दिल्ली में विराजमान होगये और श्री ५ क्लीरामजी महाराज भी दिल्ली में ही विराजमान थे जो कि श्री ५ आचार्य कथोरीमल्लजी महाराज की सप्रदाय के थे ॥

तब श्री क्लीराम जी महाराज ने कहा कि अमरसिंह जी आप को व्यवहार सूत्र के अनुसार तृतीय पद के चारक होना योग्य है ॥

क्योंकि व्यवहार सूत्र में लिखा है कि जो साधु वीक्षाश्रुत परिचार करके सयुक्त होवे वह आचार्य पद के योग्य होता है, सो आप तीन ही गुणों पर के सयुक्त हैं अपितु उक्त ही सम्मतिराय शोध बांद् मल्ल भक्तमेर निवासी जी के पिता जी सुधाचक श्रीमान् लाला मन्वीरमल्ल जी की भी थी किन्तु पुनः पुनः इन्होंने यही सम्मति दी कि श्रीस्वामि अमरसिंहजी महाराज आचार्य पदवी के योग्य हैं ॥

फिर श्री क्लीराम जी महाराज जी ने यह भी कृपा करी कि श्री सुधर्म स्वामी जी से लेकर आज पर्यन्त आप के गच्छ में आचार्यों की अनेकी खली भाई है और आप के गच्छ के आचार्य श्रुत चारित्र्य में परिपूर्ण थे पुनः तादृश ही आप हैं ॥

तब दिल्ली में श्री सप्रपकश्य हुआ फिर श्री सप्र ने उक्त सम्मति सहर्ष स्वीकार करके बारादरी नामक उपाश्रय में श्री महाराज विराजमान थे वहाँ पर श्रीसप्र भी आया तब श्रीसप्र ने उक्त विद्वत् श्री महाराज को करी साथ ही श्री क्लीराम जी महाराज भी थे ॥

फिर श्री महाराज ने स्वामी क्लीराम जी से कहा जैसे आप प्रथम क्षेत्र काल साव देखें वैसे ही करें ॥

तब श्री क्लीरामजी महाराज ने श्री सप्र की सम्मत्यनुसार श्री स्वामी अमरसिंहजी महाराज को *आचार्य पद आरोपण किया ॥

* परम्परा से आचार्य पद देने की यह प्रथा खली भाई है कि

तब ही भी सघ ने दीर्घ (उदात्तः) स्वर के साथ यह उच्चारण कर दिया कि आज कल भारत भूमि माघार्थ्य पद से प्रायः हीन हो रही है क्योंकि बहुत से गच्छों में माघार्थ्य पद की प्रथा उठ गई है किन्तु यह काम सूत्रोक्त से विरुद्ध है क्योंकि सूत्रों में यह आज्ञा दृष्टि गोचर है कि एक गच्छ में एक माघार्थ्य एक उपाध्याय भयश्य ही स्थापन करने योग्य है ॥

सो आज दिन भीसघने सूत्रोक्त प्रमाण के साथ भी श्यामी भमर सिंह जी महाराज को माघार्थ्य पद दिया है क्योंकि इस गच्छ में सम्प्रयच्छिन्नता से भी सुधर्मस्वामी से छेकर आजपर्यन्त माघार्थ्य पद चला आया है सो आज परम गान्धर्व का समय है कि भी वर्तमान श्यामी जी के ०८६वें पट्टावरि भी माघार्थ्य भमरसिंह जी महाराज

श्रीसंघ की सम्प्रत्यनुसार जिस मुनि का माघार्थ्य पद दना है तब पूर्व सघाडी (बाएर) का कशर से विमूर्चि करके वास्वस्तिनादि से भल्लन करके भार उस मुनिछ नाम छिप्रके श्रीसंघ के सम्मुख साधु उस बाद का उस मुनि के ऊपर द दिये फिर एक मुनि गढ़ा होकर माघार्थ्य के गुण या माघार्थ्य का गच्छ के साथ कैसा सम्बन्ध है और गच्छ के माघार्थ्य के साथ कैसे वर्तना चाहिये इत्यादि संहर इस भरे गधनों से भगवन् एक निर्गन्ध पद के सुनाये फिर गच्छ यथा न्याय भी माघार्थ्य महाराज की आज्ञा शिरोधार्य करने और इन भाषित से उपाध्याय गणि, गनापण्ठेदिक, पदों की विधि भी जाननी चाहिये ॥

* भी भगवान् वर्तमान श्यामी जी के ८१ पट्ट—श्रीमन्तो भार्यो पार्थिवीश्री छन बालदीपिरामहन्त छन भीपूषमानीरामयी महाराज का जीपन अतिश, या इतिहास नाथ भीमाम् जैनममाकार के सपादक वि० बाबोडाछश्री छन इत्यादि पुरनकों में प्रकटित हो चुके हैं ॥

विराजमान हुए हैं और पुनः पुनः जय जय शब्द का भी संबन्ध करता हुआ चिट्ठियों में वा पत्रों में तबही से श्रीपूज्यपाद श्रीमाचार्य्य भमरसिंहजी महाराज ऐसे नाम लिखने लग गया तथा तब ही से श्री पूज्य महाराज चारों ओर ऐसे नाम प्रसिद्ध हो गया फिर श्रीमहाराज ने दिल्ली से विहार करके अनुक्रम विधरते हुए १९१३ का चौमास सुनाम नगर में किया सो पूर्ववत् चौमासे में धर्मोद्योत हुआ। फिर चौमासे के पश्चात् श्रीस्वामी शिवधालजी महाराज की दीक्षा हुई ॥

श्री महाराज फिर ग्राम नगरों में धर्मोपदेश देते हुए पटियाळा, नामा, माळेरेकोटळा, लुधियामा, फलौर, फलवाडा, आर्लघर, कपूर थळा, गुरुका हडियाळा इत्यादि नगरों में जैनमत का प्रचार करते हुए वा गोपालवत् जीवों की रक्षा करते हुए मनुस्मृत में पधारे सो लोगों की भति विवृति होने से १९१४ का चौमास मनुस्मृत में ही कर दिया ॥

अनुमान उक्त ही वर्ष में—जाति के ब्राह्मण विद्वान्शब्द को दीक्षित किया क्योंकि यह विद्वान्शब्द, राय शेट अम्बीरमल्ल राय शेट चांदमल्ल जी की भोजन शाला में रखीये का काम करता था, किन्तु यह सबल स्वभाव था संयम से पराक्रमुख हो कर आत्माराम जी के साथ ही चला गया था ॥

क्योंकि श्री महाराज ने जब इन्हीं का अनुचित व्यवहार देखा तब ही स्वा गच्छसे छात्र कर दिये जिनका स्वरूप आगे लिखेंगे ॥

सो अत्यानन्द से चौमासा पूर्ण होगया फिर परोपकार करते हुए श्री पूज्य महाराज ओरे शहर में पधार गये पुन लोगों की भति विवृति होने से १९१५ का चौमासा भी ओरे नगर में ही कर दिया, सो धर्म ध्यान बहुत ही हुआ क्योंकि उस काल में ओरे नगर के सर्व भाई सम्यग्दर्शि थे ॥

फिर श्रीमासे के पदचात् श्री महाराज ने राहों, गयादादु जेजों, बंगा, टोडा, जाळघर, ग्यादि जगों में परोपकार करते १९११ का श्रीमास हुशियारपुर में किया, स्वाहादुरुषा घाणी से मय्यत्रों का भस्म करण पवित्र किया, जा जंग वृक्षमार्थे अन्य नगरों के भाते थे यह श्री पूज्य महाराज का दर्शन करके स्वः अन्त को पवित्र करते थे ॥

अब श्रीमासा शान्ति, पूर्वक पूर्ण होगया तो माईयों की मति विवृष्टि से यांगर देश की मार विहार कर दिया भाम नगरी में परोपकार करते द्रुप १९१७ का श्रीमास सुमामनगर में किया श्रीमासे में पूज्यत् उद्योत हुआ ॥

फिर श्री पूज्य महाराज श्रीमासे के पदचात् भाम नगरों में धर्मोपदेश करने लगे ।

किन्तु उन दिनों में श्री स्वामी रामवक्षजी महाराज वा विद्वत् चन्द्रादि साधु यमुना पार के क्षेत्रों में विचरते थे ॥

अबिहू भामारामजी महाराज स भावर श्रमरुग में स्थित था जो श्रीरामवक्षजी महाराज के दर्शन करने का भगिनापी था क्योंकि श्रीरामवक्षजी महाराज भुन विद्या में पूर्ण थे किवा में भक्ति तीक्ष्ण थे सो भामारामजी भन विद्या व पढ़ने वास्ते इनके पास ही भागवे सो स्वामी भा न भन पूज्य भुन विद्या का दान दिया ॥

* सन् १९१४-१५-१६।१७—म मो कई दीक्षा हुई है किन्तु प्राप्ति-पत्र मध्येन मिलन के कारण स हो नहीं सिखाई, क्योंकि बहुत से दीक्षा पत्र विद्वत्पन्थादियों के ही पास थे ॥

† श्रीभामारामजी के जेपन पत्रि में लिखा है कि १९१८ का श्रीमासा के पदचात् भामारामजी भ रामवक्ष विद्वत्पन्थादि साधुओं

और श्री पूज्य महाराज ने बहुत से भक्त जीयों को सन्मार्ग में स्थापन करके १९१८ का चौमासा पटियाळा में कर दिया। सो चौमासा में लाला शिशुराम (श्री कृष्णदास) नागरमठल, बल्लभमठल, करोडा लाला काशीराम, दीयाम, लाला घनैयामठल, इत्यादि भाईयों ने जैन धर्म का परमोद्योत किया फिर श्री पूज्य महाराज चौमासे के पश्चात् ग्राम नगरों में धर्मोपदेश देने लगे अनुक्रम विचरते हुए दिल्ली में पधारे जिन धाणी का प्रकाश किया लोग व्याख्यान सुन के परमानन्द होते थे फिर चौमासा की विघटित करने लगे किन्तु श्री महाराज जयपुर की ओर विहार कर गये ॥

तब श्री महाराज जयपुर में पधारे तो नगर में परमोत्साह उत्पन्न हो गया चौमासा की विघटित होने लगी तो स्वामी जी न १९१९ का चौमासा जयपुर में ही कर दिया ॥

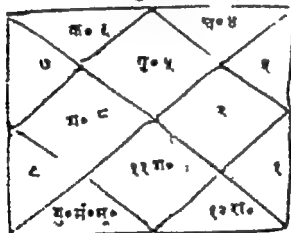
धर्मवृद्धि अतीव हुई अपितु चौमासा में ही स्वामी गणेशदास या स्वामी अयचन्द्र जी को श्रीपूज्य महाराज ने दीक्षित किया। क्योंकि श्री महाराज जी का ऐसा वैराग्य भय उपदेश था कि भक्तजन सुनते ही संसार मार्ग से नयमोक्त होने हुए दीक्षा के लिए तय हो जाया करते थे पुनः दीक्षित होकर मुक्ति पथ की क्रिया के साधक बनते थे। किन्तु श्री महाराज चौमासा के पश्चात् अनुक्रम विहार करते हुए पुनः दिल्ली में ही विराजमान हो गये। तब ही धर्म के प्रकाश करने द्वारे पाण्डु मार्ग उत्थापक लोग पुरुष दीक्षा के लिए दिल्ली में ही उपस्थित हुए

को भाचारांग सूत्र, अनुयोग द्वार सूत्र, जीयानिगमादि सूत्र पढाये। सो यह निकेवल अनुचित लेख है क्योंकि परम पंडित श्री स्वामी राम यशजो महाराज से आत्माराम जी विद्या पढते थे और स्वामी जी की सहायता से पञ्चाय वेद में विचरना चाहते थे ? परन्तु चर्चाचन्द्रादय माग पृथीय के पृष्ठ २७ वें पर लिखा है कि, आत्माराम जी का पट्टधा वह स्वभाव ही था कि दूसरे को दोष देना इत्यलम् ॥

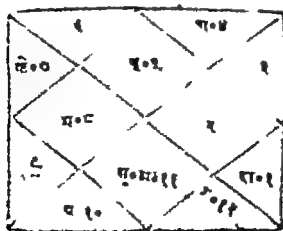
।बे टि मोलापनिगत जी । धर्मव्रजगी, दुष्टेष्टमन्त्र जी, जब इन्हों ने श्री महाराज से विनम्रि करी की हमको दीक्षा प्रदान करो तब भी महाराज ने तीनों को ही दीक्षित करके श्री स्वामी रामबल जी महाराज के शिष्य कर दिये विल्लु "श्री धर्मव्रज जी महाराज की बुद्धि पास

" स्वामी जी का जन्म १८०४ माघ मास शुद्धाष्ट १३ सुधवार का था स्वामी जी की जन्म कुडली स यही सिद्ध होता है कि यह महामा जी परम पंडित पैराग्य रूप ध ॥

जन्म कुडली इवम्



चलन चक्र मिद



सीधण थी जिस करके मध्यममूलमें ही पंडित की उपाधि से विभूषित होगये। जिन्होंने अनेक बार भोतमाराम की कृतियोंका कटन किया वा बहुत से मध्यजीवी के हृदय कृतियों करके जा पिहल होगये ये तिन की कृतियों का माश करके तिन के हृदय रुपी कमल में सम्यक्स्वरूपी सूर्यस्थापन किया था ॥

क्योंकि भोतमाराम जी का अनुचित भाषणकरने का अभ्यास कुछ न्यून नहीं था फिर प्राग्बत् ही लेख लिखते थे जैसे कि ॥

भातमाराम जी के जीवन चरित्र के—४४ वें पृष्ठोपरि लिख है कि—रामबक्ष जी ने भातमारामजी से आधीनता के साथ प्रार्थना करी कि आप इस मुलक पंजाब में आगये हैं और मेरे गुरु मारवाड को बले गये हैं इस वास्ते आपने इस पंजाब देश में जोर लगा कर मजीध मत की जड़ काटते रहना इत्यादि सो यह उक्त लेख निकेवल मसख है क्योंकि उन दिनों में भातमारामजी भोस्वामी रामबक्षजी महाराज की सहायता से पंजाब देश में फिरमा चाहते थे स्वामीजी से विद्या अभ्यसन करते थे किन्तु स्वामाधिक गुण त्यागता दुष्कर है ॥ -

इसी वास्ते चतुर्थस्तुति निर्णय शंकोखार के पृष्ठ ५ पर लिखा है कि त्पारेत्यां भोममवायावना साधनीं तथा भीसभना भावकीं नृ मुन धी वार्ता सानखी के भातमाराम जी ने वस्तुत्र भाषण करवानो तथा बोली ने फरीश्वानो केशो विचार नथी ने भइंकार नू पूर्तलु छेति अमेसारी पेंठे खाणीय छीय, इत्यादि यह लेख तपंगच्छाधिपति का ही है किन्तु श्री महाराज ने प्रथम ही माछेरकाटले म भाईयों को कह दिया था कि—इन क्रियामों से यही सिख होता है कि यह बाळक धर्म पथ में विचन करेगा सो घैसे ही होमे के चिन्ह दिखने सगे। क्योंकि विक्रमाब्द १८—१९—२० के—मनुमान में पूर्ण कर्मों के प्रयोग से भइत भाषित सिद्धस्तों में भातमारामजी को अभ्यसा होने लगी मुनिकृत्यों से भवधि दुर्द मिष्याभोइनीकेबल से घैसे भाषायें उत्पन्न हुई कि कसिपय

गधों में रुचि होगई जैसे कि । जैन शास्त्रों में दखेन घन्त्र धारण करने की आज्ञा है किन्तु भारमारामजी की आज्ञा पीताम्बर धारण की हो गई । जैनशास्त्रों में मुख्यपक्षि नामसे लिखी है जिस का अर्थ हो यह है कि जो सदैव ही मुखके साथ लगी रहे तिसत्रय ही नाम मुख्यपक्षि है । किन्तु भारमारामजी ने यही मन में निर्णय किया कि मैं तो हाथ में मुख पक्षि को रखूंगा । तथा जैनशास्त्रों में मूर्त्तिपूजा का विधिग्रन्थ भी ब्रह्मण्य वा विधान नहीं है अपितु भारमारामजी ने यही विचार किया कि भय लोग कुछ आगने लगे हैं फिर भी इन लोगों को एक महान् कूर म नेरमा आदित्ये मर्णान् सूत्रों में जिस वस्तु का विधान नहीं है, उस बात का ही उपदेश करना मूल योग्य है इसी कारण भारमारामजी ने मोहनी कर्म की प्रवृत्ति से भर्त्तीय पदार्थ में जीव की भ्रष्टा करली ॥

भीर महाराम भारमारामजी के ऐनों से यह भी सिद्ध होता है कि भारमारामजीने विचार किया कि जैन सूत्रों में कहीं भी असाय मापन करने की आज्ञा नहीं है किन्तु भय किसी अभ्यर्थक से काम करना आदित्ये

इसीवास्ते भारमाराम जी सन्वत्पदाब्दोंसार के घृष्ट २४१वें पर लिखते हैं नि-अथवाद् मार्गमाशुषा वोल्यामी आश्वपनछे, इत्यादि शंकर्ये अभ्यमो उत्पन्न दुर्हि किन्तु यह पार्तावें भारमारामजी के अन्तःकरण में थी अपितु उपहार गुड रखा हुआ था स११९० का थीमासा भारमारामजी ने भागरे शहर में थीमास ५० रातघन्त्र जी के पास किया था विदाऽअथवाये निर बहुतसूत्र वा ससृज माया के मयमप्रदि पडम पर थीमासे के पदगत विहार किया किन्तु वर्तपत्वाग्रहण्य स विद्व नही करत थे । जस कि भारमाराम जी के जीवनपरिध क ४९वें घृष्टा परिलिखा है कि स्वामी रातघन्त्र जी ने भारमाराम जी को यह शिक्षा दी कि एक ता भी जिस प्रतिमा की कमी भी किम्वा नहीं करनी । दूसरा वेदावसरके पिना धाया हाथ कमी भी शास्त्र को नहीं टगाना । और तीसरा अपने पातसदा दंडारणना । मैन तुझ का धी जैनमन का असहसाद बताया है तथा मुख्यपक्षी २५० उड ता वष स ६२ रे पडो न

मुकपती बांधी है और तेरे घड़ों में अनुमान दोस्रो (२००) वर्ष सेबांधनी
 गुद की है, यह दूंदकमल अनुमान सषा दो सौ २२५ वर्ष से बिना गुद
 अपने आप मनःकल्पित खेयधारणकरके निकाला गया है, इत्यादि यह
 लेख असमझस हैं क्योंकि जो प्रथम लेख प्रतिमा विषय लिखा है कि
 प्रतिमा कि मिदा न करनी इस लेख में हम भी सम्मत हैं, इस से यह
 भी सिद्ध होता है कि भारमाराम जी प्रथम प्रतिमा की मिदा करते होंगे
 तभी तो उन्होंने शिक्षा दी कि मुनिजनों को कदा आवश्यकता है। कि
 जड़ की निन्दा करें किन्तु जो लोग प्रतिमा को अर्द्ध की सदृश्य मानते
 हैं पुनःजड़ में जीवता की संज्ञा धारण करते हैं पूजा की सामग्री से उसे
 प्रसन्न करते हैं उसकोलिये मंदिर की प्रतिष्ठा करते हैं अथवा उसके
 सम्मुख वादित्र घमाते हैं इत्यादि क्रियायें मिथ्यात मार्ग को पुष्ट करती
 हैं इस प्रकार महात्मा जन उपदेश करते हैं ननुनिन्दा। सो यदि आत्मा
 राम जी के आशयानुसार प० रत्नचंद जी का आशय होता तो उनके
 शिष्य (उनकीसंप्रदाय के) स्वामी कपिराज जी सत्यार्थ सागरादि ग्रंथ
 काहेकों बनाते जिस में मूर्तिपूजा की जड़ काटी है। अर्थात् मूर्तिपूजा का
 युक्ति या शास्त्रानुकूल निषेध किया है इसलिये भारमारामजी काप्राग्लेख
 प्रथम शिक्षारूप कल्पित है। दूसरा लेख लिखा है कि—स्वामी रत्नचंद
 जी ने कृपा करी कि—पेशाब करके बिना हाथ धोये कनो भी शास्त्र को
 नहीं लगाता, मित्रगण ! आप स्वयं विचार करें कि जब उक्त कार्य
 भारमाराम जी करते होंगे तभी तो प० जी ने शिक्षा दी है। और इस
 लेख से यह तो स्वता ही सिद्ध है। स्थानक वाली महारामाजन भारमा
 रामजीका पुन पुनः शिक्षा करते थे ऐसा काम मत किया करो। क्योंकि
 जिस शाखा में भारमाराम जी जाना चाहते थे वह जिस शाखा के ग्रन्थ
 भी पढ़े थे उस शाखा में उक्तकार्य अयोग्य नहीं धतलाया है।

उदाहरण थी प्रतिक्रमण सूत्र धाषक भीमसिंहमाणक के द्वारा
 प्रकाशित हुआ जो सम्बत् १२५१ माघवरी १३ मोह मयों में। तिस ग्रंथ के
 ४७९ पैगूटो पर यह गाथा लिखी है जैसे कि ॥ ।

खाइमे भसोसफलाइ साइमेसुठिजीरअजमाइ
महुगुद्धतत्रोलाइ अणाहारेमोयनिवाइ ॥ १४ ॥

जिस के भय में यह लिखा है कि गो से छे कर सर्व आनि के भनिष्ट
मूत्र उपवासादि कृत्यों में पाने कल्पते हैं क्योंकि भर्हन् के मत में
उपवास में 'चातुराहार का नियम है किन्तु मूत्र मणाहार है ॥

तथा भोर भी देखिये—भास्व दिन कृत्य १८७६ ई० बनारस
जैनप्रभाकरप्रेस का प्रकाशित हुआ जिस के ३६ वें पन्नापरि लिखा
है कि—भावक साधु को दो प्रकार का पात्र देवे । एक जो
आहार का पात्र । दूसरा प्रक्षाय का पात्र २ इति वचनात् भव
सुश्रुज्जन विचार करेंगे कि—जय स्वर्गेगी मुनि प्रक्षायका पात्र रखते हैं ।
तथा जय ये विहारादि क्रिया करते हैं तिस समय ये वषा करते होंगे ।
क्योंकि आहार के पात्र के साथ प्रक्षाय के पात्र का स्पर्श कराते हैं या
नहीं यदि कहोगे हम प्रक्षाय का पात्र नहीं रखते हैं तो आप अपने पर्या
चार्यों से विच्छिन्न हुए । यदि कहोगे हम आज कल नहीं रखते हैं ।
तो हम कहते हैं आप के बड़े पुर्य रखने थे क्योंकि तभी तो भावक
को प्रक्षाय का पात्र देने की आज्ञा लिखी है । यदि कहोगे
यह लेख हमको भ्रममाण है । तो हम कहते हैं जो इन ग्रंथों में पूजा
की विधि के मतः कल्पित लेख लिखे हैं तो उनको प्रमाणिक क्यों
मानते हो ॥

यदि कहोगे हम आहारादि के पात्र से स्पर्श नहीं कराते । तो
यह बात ही असंभव है क्योंकि । पात्रों का समूह तो आप एक ही
हाथ में रखते हैं ॥

● चातुराहार यह है । भन्ना १ पाणी २ खाद्यमफलादिवापकानादि
स्वाद्यमधूनादि ॥ ४ ॥

तीसरा छेक भास्काराम जी का यह है कि । पंडितरत्नचंद्र जी ने कहा कि दंड हाथ में सदा रखना सो यह भी कथम अधीतिक है क्योंकि—यदि पं० रत्नचंद्र जी की दंड रखने की भ्रष्टा होती तो उनके गच्छ में यह प्रथा भवश्यक हो चल पड़ता किन्तु उनके गच्छ में दंड भ्रष्टा का प्रायः सर्वथा अभाव है क्योंकि वृद्ध रागी के लिये सूत्र में दंड कहा है अपितु सर्व के लिये नहीं क्योंकि जब मर्हत् के मत में रजोहरण का दंड बिना वस्त्र के घेष्टन किये रखना नहीं कल्पता है कि कोई जीव मय न पावे तो मरणा दंड की भांति सर्वैक काल के लिये कैसे संभव हो सकती है किन्तु संवेगी छोकदंड से जो काम लेते हैं उसका उदाहरण से निम्नवत् कर लीजिये यथा । श्रीगणाध्याछेदिक श्री ५ गणपतिरायजी महाराज भीस्वामी जयराम जी महाराज भीस्वामी शालिग्राम जी महाराज रूपाने पञ्च का चतुर मास १९५१ का मंवाले मंगल में था । उस काल में ही चंदनविजय नामक पंच संवेगियों का भी चौमासा मंवाले में ही था । सो एक दिन की बात है कि एक संवेगी हाथ में दंड लिये जा रहा था तो एक मार्ग में महिष खड़ी हुई थी तो उस वृद्धी ने बड़े ही बल के साथ एक दंड महिष के मारा तो महिष दंड खाते ही भाग गई मार्ग स्पष्ट हो गया तो जब संवेगी महाशय ने पीछे का देखा तो दो साधु वीरशासन के दृष्टि गोबर हुए तो वह दंडी भी भीम ३ बलके भाग गया ॥ ~ ~ ~

अब पाठकगण भवश्यकमेव ही विचार करेंगे कि संवेगी लोग दंड से इत्यादि काम लेते हैं किन्तु यह लोग संवेग पथ से भी पतित हैं क्योंकि इनके ग्रंथों में १ एक संवेगी को 'पंच दंड रखने की भांति है परंतु यह लोग एक ही दंड रखते हैं यथा भास्करदिनकर ग्रंथ के ३१वें पत्र की पदो ॥ पंच दंड विधर्माधिकार ॥

भागो जीवन खरिष में लिखा है कि—हमारे बड़ों ने १५० वर्ष से मुख पर मुखपती बांधी है मेरे बड़ों ने २०० वर्ष से मुखोपदि मुख

पत्नी बांधी किन्तु यह बूढ़कमल बिना गुरुके मन कलित बिना गुरु के निकाला गया है इति चचनात् ॥

समीक्षा—सो यह छेज भी भामाराम जी को बुद्धि का परिचय क्लृप्त देता है क्योंकि यदि प० रत्नचन्द्र जी महाराज की उक्त भ्रष्टाहोती तो यह शीघ्र मुखपत्ती मुख से उतार डालते तथा अपने शिष्यों को सर्वेव ही उक्त उपदेश दिया करते सो तो उन्होंने नाही उक्त उपदेश दिया है और न अपने मुख से मुखपत्ती उतारी है सो इससे सिद्ध हुआ कि भामाराम जी सत्य से पराङ्मुख ही रहते थे ॥

प्रिय वाचकबन्धु—भामाराम जी का ही मत जिन शासन से विरुद्ध अल्पकाल से उत्पन्न हुआ है जिस का स्वरूप भागे लिखेंगे किन्तु यह श्री जैन इधेनाम्बर स्वामीक वासी ही जैन श्री भ्रमण मगधत् वर्तमान स्वामी से अद्यापि पठ्यन्त भय्यपक्षिष्मता से चले भाये हैं हां यह अवश्य ही मानना पड़ेगा कि किसी काल में अधिक किसी काल में स्वल्प होते भाये हैं मुखपत्ती मुखपर बांधना येही जैनधर्म का लिङ्ग है तथा सर्व विद्वानों ने जैनमत का धेप यही लिखा है—जैने शिष्यपूराण आदि ग्रंथों में यह सर्व प्रमाण शास्त्रार्थ *नामा तथा सपत्नी मुखमर्दन में प्रकाशित हो चुके हैं । इसी वास्ते यहाँ पर नहीं लिखे ॥

किन्तु कौन ही प्रमाण ही विग्न वर्जन मात्र लिखते हैं—जैसे कि बहुर्ध स्तुतिशंकोधार के प्रथम परिच्छेद के शृष्टपक्षोंपर लिखा है कि सन्वत् १९४० में सालमां भामारामजी महामहापाद मा समाचार छापायां व्याख्यान के समयरे माहपति बांधनी हम अच्छी जानते हैं पण कोई कारण से नहीं बांधते हैं ॥

* नामा शहर में राजसभा के मध्य में श्री स्वामी उदयचन्द्र जी महाराज के सम्मुख सपत्नी वस्त्रम विजय जी पराजय प्राप्त कर चुके हैं सो उक्त घणा का सारा स्वरूप । शास्त्रार्थ नामा नामक पुस्तक प्रकाशित हो चुका है ॥

॥ एहेवुंउपाठयुत्यारे विद्याशालानी बेठकना

भायकोए भामारामजीने पूछा साहेब भाय मोहपति बांधवी कडो जाणोछो तो बांधताकेम नथी त्यारें भामाराम जी एतेने पोतानारागि करवाने कछु के हम ईहां से विहार करके पोछे बांधेंगे । इत्यादि प्रिय गण । अब भामाराम जी व्याख्यान के समय मुहपति बांधनी मळ्छी जानते हैं तो इससे सिख हुआ कि जो पुढर सर्वेव ही मुजोपरि मुह पती बांधते हैं व जिनाज्ञानकूल काम करते हैं क्योंकि जिन छिन्न हाने से । तथा गुजरात देश में प्राय घूटेरायजी की सम्प्रदाय के बिना शेष सर्व संवेगी लोग मुहपती बांध के व्याख्यान करते हैं तथा कितनेक संवेगी लोग अपने आपको साधु नहीं मानते हैं सो यह अच्छे है क्योंकि यह मसत्य भाषण से बचाव करते हैं सो भामारामजी के कथन से ही मुहपति सिख है मुजोपरि बांधनी । तथा साम्प्रति काळ के विद्वान् भी जैनमत का घेप मुहपती करके मुख बांधना ऐसे मानते हैं देखिये जगत् प्रसिद्ध सरस्वती पत्र । एप्रिल १९११, भाग १२ संख्या ४ ॥ सपादक महावीर प्रसाद द्विवेदी—इदियनप्रेस—प्रयाग से जो प्रकाशित होता है । तिसके २०४ पन्नापरि सप्तदशाचार्यों का चित्र दियागया है जिस में द्वादशमा चित्र धार्मादिनाथ (ऋषभदेव) मगवान् का है तिस चित्रोपरि मुखपती मुह पर बांधी हुई है अर्थात्—भीमपद्मदेव मगवान् के चित्र के मुखोपरि मुखपती बांधी हुई है ऐसे चित्र जैनमत का दिखाया गया है । सो पाठकपुनः । अब पर मत वाले भी जैनमत का घेप मुजोपरि मुहपती बांधना मानते हैं और श्री जैन श्री उत्तराख्ययन सूत्र, श्री मगधती सूत्र भी प्रह्न व्याकरण सूत्र, भीमशीय सूत्र, इत्यादि सूत्रों में भी मुनि का छिन्न मुहपती माना है ताते भामाराम जी का लेख मुहपती विषय छठ है । तथा पंडित रत्नचन्द्र जी की श्रद्धा यदि भामाराम जी के लिगे अनुसार होती तो उनके बनाये मोछ मार्गादि धर्मों में वह श्रद्धान् भवदय ही पाया जाता

किन्तु उनके समाने ग्रंथों में एक अक्षर का लेख भी नहीं है मरितु भी
मान् पंडितजी महाराज के हाथ का लिखा हुआ एक हमारे पास जीर्ण
पत्र है जिस में देव गुरु धर्म के विषय में लेख लिखा है। वह मन्मथजी
के वर्णनार्थ जैसे लेख है वैसे ही (प्रतिरूप) (नकल) लिखा जाता है
जिसको पढ़के भक्तजन स्वयमेव हो श्रावक लेखने कि श्रीप० रामचंद्रजी
महाराज का कथा भाषाय या॥ भय देवगुरु धर्मनी चर्चा लिखीय छै।—

- १—देवसम्यक्दृष्टि के मिथ्यादृष्टी ।
- २—देव ज्ञानी के भ्रमानी ।
- ३—देव सम्वरी के असंवरी ।
- ४—देव प्रत्यावपानी के अप्रत्यावपानी ।
- ५—देव सज्जती के असज्जती ।
- ६—देव सृति के असृति ।
- ७—देव एकेन्द्री के पश्चिम्दि ।
- ८—देव प्रस के स्थावर ।
- ९—देव मनुष्य के तिर्य्यक ।
- १०—देव सागार के भलागार ।
- ११—देव सूक्ष्म के घादर ।
- १२—देव परिग्रहघाती के अपरिग्रहघाती ।
- १३—देव आहारिक के भणाहारिक ।
- १४—देव मापक के अमापक ।
- १५—देव भीतरागी के सरागी ।
- १६—देव ग्राहण पुष्पयिलेपण भोगी के अभोगी ।
- १७—देव ८ मास ४ मास विहारी के अविहारी ।
- १८—देव बीयेमारे के पचमे आरे ।
- १९—देव शम्भुभोता के अभोता ।

- १२—देव सर्वज्ञ के असर्वज्ञ ।
 १३—देव ८ कर्म संयुक्त के-४ कर्म संयुक्त ।
 १४—देव सपणी के असपणी ।
 १५—देव ४ प्रजा के ३ प्रजा ।
 १६—देव १० प्राण के चार प्राण ।
 १७—देव मूलगामी के ससारगामी ।
 १८—देव १३ गुणस्थानों के चौथे गुणस्थानों ।
 १९—देव शुक्ल श्रेणी के भलेही ।
 २०—देव पुरुष वेद स्त्री वेद के नपुंसक वेदी ।
 २१—देव उपवेश वेद्ये के न वेद्ये ।
 २२—देव रोमाहारी के कवचाहारी ।
 २३—देव कृत गड के भक्त गड ।
 २४—देव मुक्त के अमुक्त ।

गुरु ।

- १—गुरु हिंसक के अहिंसक ।
 २—गुरु सत्यवादी के असत्यवादी ।
 ३—गुरु अदत्तप्राप्ती के दत्तप्राप्ती ।
 ४—गुरु कनक कामनी के त्यागी के अत्यागी ।
 ५—गुरु परिग्रहधारी के अग्रग्रहधारी ।
 ६—गुरु प्रतिषेधक के अप्रतिषेधक ।
 ७—गुरु धर्मोपदेशी के हिंसा उपदेशी ।
 ८—गुरु भाग्यी के अभाग्यी ।

धर्म ।

- १—धर्म जीव हिंसामें जीवदया में ।
 २—धर्म ज्ञानमें के अज्ञान में ।

- ३—धर्म वर्णनमें के अवर्णन में ।
 ४—धर्म चारित्र्य में के अचारित्र्य में ।
 ५—धर्म आश्रय में के सम्यक् में
 ६—धर्म निर्जरामें के बंधमें ।
 ७—धर्म १२ भव्ती तपस्यामें के अतपस्या में ।
 ८—धर्म भगवान् को आश्रमों के आश्रमाधिर ॥

पाठकगण ! यह सर्व पं० जीके हाथ के लिखे हुए पत्र की नकल है आप स्वयं विचारें कि आत्माराम जीके लेख का किताब, अन्तर है इससे सिद्ध होता है कि आत्माराम जी प्रकृति नहीं थे किन्तु हठ धर्मी थे ।

इस वास्ते चतुर्थ स्तुति हांगोखार के २८५ वें पृष्ठोपरि लिखा है कि केमके आत्माराम जी आनन्द विजय जीने समझावामे मर्ये जो कदाच महा विद्वद् होन थी केवली भगवान् भाषेय बोतो संनय तो न थी इत्यादि सो पुर्य कर्मों के बल से आत्माराम जीके बित में अनेक सशय उत्पन्न हुए जो कि यथा स्थान पर दिखलाये जायेंगे भविष्य श्री पूज्य महाराज जीने १९२० का चीमासा दिल्ली में ही कर दिया सो धर्मोद्योत अतीव ही दुःखा ॥

सो चीमासा के पदवात् श्रीमान् महाराज अनुक्रम से विहार करते हुए नामा शहर में पधारे रं। नामा नगर में अतीव चीमासा की विह्वलित हुई सो भोसवाल या अग्रवाल भाइयों के भति भाग्रह से १९२१ का चीमासा नामा नगर में ही कर दिया । अग्रपाठकों का यह भी दिखलाते हैं कि पुर्य कर्मोंद्वयसे आत्मारामजी की धर्या पढावश्यक से भी विषम होगी क्योंकि श्री भगवन् पद्धमान् स्थामी से अद्यापि पर्यन्त पञ्चदश्याहारामुखल जो आयदयक क्रियामुष्ठान खली भाता है उसको भी मिथ्या समझने लगे किन्तु जो कल्पित आदर्शक मोर

मिश्रत भाषायुक्त मूर्तिमों को धंदना रूप इस में रक्षि धंदने लगी
क्योंकि भी मगधन् की भर्द्धमागधी भाषा है ।

यथा—भी समवायांगभी सूत्र स्थान ३४ ।

सूत्र—अद्धमागधीभासाए धम्ममाइखति २२
सावियाण अद्धमागधी भासा भासिज्जिजमाणिते
सिंसव्वेसिं आयरियमणा रियाण दुप्पय चउप्पयमिय
पसु पक्खिखसरिसिवाण अपणो हित सिवसुहवाए भास
ताए परिणम्मई ॥ २३ ॥

अस्यार्थः—भीसमवायांग भी सूत्र के ३४ वें स्थान के ।
२—२३ वें सूत्रमें यह लिखा है कि भी मगधान् की भर्द्ध मागधी ही
भाषा है अर्थात् मगधन् भर्द्ध मागधी भाषा में ही धर्म कथा कहते
हैं सो वह भाषा भाय अनार्य द्विपाद चतुर्पाद मृग पशुपक्षि सर्पादि
सर्व जीव अपनी अपनी भाषामें ही समझ आते हैं ।

तथा प्रहापण सूत्र के प्रथम पद में ऐसे कथन है :—

सूत्रम्—सेकित भासायरिया, भासाय रिया
अणेगविहापणत्ता तज्जहा जेणअद्धमागहायभासाए
भासति जयण वभीलिवीपवत्तई वमीणालिविण
अठारस्तविहेलेह विहाणे प० त० बंभी १ जवणाळिया
२ दोसा ३ पुरिया ४ खरोट्टी ४ पक्खरमारिया ६
भोगवइया ७ पहाराइया ७ ८ अतक्खरिया ९ अक्षर-
पुठिया १० वेणइया ११ णिण्णइया १२ अक्कलिवी १३
गणितलिवी १४ गंभव्वलिवी १५ आदशलिवी १६
माइसरी १७ शमिलीपोलवी १८ सेतभासाय रिया ॥

अर्थ—शिष्य प्रश्न करता है कि हे भगवन् मायार्थ क्या है ? गुह्यतर वेते हैं कि हे शिष्य मायार्थ के अनेक भेद हैं किन्तु जो भर्त्स मागधी भाषामापण करते हैं वे मायार्थ हैं और जो *प्रक्षीलिपी के अष्टादश भेद हैं प्रक्षी लिपी के साथ ही भर्त्स मागधी भाषा का प्रयोग होता है येही मायार्थ हैं ।

तथा श्री विवाह प्रकृति सूत्र के पञ्चम शतक के चतुर्थोद्देश में यह सूत्र है ।

यथा—देवाण भतेकयराए भासाए भासति
कयरावा भासा भासिउजमाणी विस्ससति गोयमा
देवाण अद्धमागहाए भासाए भासति सवियण अद्ध
मागहा भासा भासिउजमाणी विस्ससति ।

इतिवचनात् ॥

अर्थ—श्री गौतम प्रभु श्रीभगवन् श्रीवर्यमान स्वामी से पूछते हैं कि हे भगवन् देवते कौनसी भाषा भाषण करते हैं तथा कौनसी भाषा भाषण की हुई देवतों को प्रिय लगती है ? तब भगवान् उत्तर देते हैं कि हे गौतम देवते भर्त्स मागधी भाषा भाषण करते हैं यही भाषा भाषण की हुई देवतों को प्रिय लगती है ।

तथा इंदर सादिय गणने रत्ने संक्षिप्तहिंदुस्तान के इतिहास में लिखते हैं कि हिंदुस्तान की मूलभाषा पुराणों प्राकृत है तथा कन्नड प्रणोत काबालकर की दिव्यणी करम वाले लिखते हैं कि प्राकृतभाषा सध भाषाओं से प्रथम है ।

४ यह अष्टा दश प्रक्षी लिपिकों भेद किसी स्थान पर सविस्तर लेख देखने में नहीं पाये हैं इसलिये नहीं लिखे हैं मूल सूत्र में तो केवल नाम ही हैं

तथा हिंदुस्तानका इतिहास इत्यव्युत्थापसन्न एम० ए० मी सर्व भाषाओं से पुरानी सर्व भाषाओंकी माता *प्राकृत ही है अर्थात् सर्व भाषा प्राकृत से निकली हैं ऐसे लिखते हैं तथा चंड व्याकरणका वृत्ति कर्त्ता यूरोपियन विद्वान् मी पूर्ववत् ही लिखता है सो यह मागधी भाषा अनंत अर्थ की सूचक है इसीवास्ते गणधर देवोंने आगम प्राकृत वा मागधी भाषा में ही रचे हैं और आवश्यक क्रियायें मी मागधी भाषा में ही रची हैं। किन्तु जो तपागछियों का आवश्यक है वे सर्व मागधी भाषा में नहीं है अपितु संस्कृत । प्राकृत, मारवाडी, गुर्जर इत्यादि मिश्र भाषा में हैं सो इसीवास्ते वह गणधर कृत विहित नहीं होता ॥

फिर श्री अनुयोग द्वार जी सूत्र में पञ्चावश्यक के विषय में यह गाथा लिखी है :—

यथा —सावडज जोगविरह उक्कीतण गुण वड पडि वत्ती खलियस्स निदण वण तिगिच्छं गुण धारणाचेव ?

भास्यार्थ —आवश्यक सूत्र का सावध योग निर्वृति रूप प्रथमा श्याय है १। चतुर्विंशति देवकी स्तुति रूप द्वितियाश्याय है २। गुणधर्तों को वंदना रूप तृतियाश्याय है ३। पाप से प्रतिक्रम रूप चतुर्थाश्याय है ४। पाप की मालोचना रूप पञ्चमाश्याय है ५। प्रत्याख्यान रूप षष्ठमाश्याय है ६। सो यह सर्व अध्ययन विद्यमान हैं किन्तु सधेगी लोगोंने पञ्चावश्यक में ममः कल्पित शैश्व वदना स्थापनाचार्य्य ध्यंत-रादि देवतों की स्तुतियें लिख धरी हैं ?

१११

* हिन्दी भाषा की उत्पत्ति नामक पुस्तक में सम्पाक सरस्वती पत्र महाधीर प्रसाद द्विवेदी जी मी प्राकृत भाषा को बहुत ही प्राचीन लिखते हैं ॥

तो आत्माराम जीकी भय्या समातन पञ्चायद्वयक से भी विषम है
गई मनः कल्पित आघट्य को परि भय्या दृढ होगई ।

अब आत्माराम जी मालेरकोटले में आए तो विद्वन्मन्त्रादि
साधुयो को भी सम्यक्त्व से पतित किया क्योंकि इसी घास्ते सूत्रों में
लिखा कि (कुसंग कथा कथा नहीं अकार्य कगता) अर्थात् सर्वही
भयार्थ इसी से होते हैं किन्तु जो आत्मारामजी के जन्म चरित्र में पा
लिखा है कि विद्वन्मन्त्र ने पेशाब से हाथ घाए आत्माराम जी ने उस
को बढ़किये ॥

प्रियपाठकगण ! यह सत्य असमंजसही लेख हैं ? क्योंकि
आत्माराम जी का यह बड़बुधा ही स्वभाव था कि अपना दाँप पर बं
शिरधरमा इत्यर्थ ॥ और यह प्रथा संवेगी लोगों में अब तक में
प्रचलित है किन्तु इस का प्रमाण भागे लिखेंगे अपितु यह संवेगी लोग
प्रायः असत्य लिखने से किम्बित् भी नय नहीं करते देखिये चण्दा
चन्द्रोदय भाग तीसरा पृष्ठ १२ पंक्ति ७ एक संवेगी साधु जी के
जितने पत्र हमारे गुरु महाराज के पास भाये सब झूठ लेखों से सरा
सर नरे हुए थे, इत्यादि सो आत्माराम जीकी भय्या पूर्ण कर्मों की
महत्त्वता से छिन्न भिन्न हुई इधर भी आचार्य महाराज जी का
१९२१ का धीमासा नामा नगर में आनंद पूर्णक व्यतीत हो गया फिर
भी पुन्य महाराज प्रामानुग्राम विचरते हुए तथा जय पठाका हाथ
में लेते हुए मालेरकोटला, एधियामा, फलीर, फलावाडा, जालंधर,
कपूरथला, इत्यादि नगरों में घूमोपवृत्त करके १९२२ का धीमासा
भार्यों के अतीव आग्रह से गुरु के जटिमाले में हो कर दिया ।
इस बातको पूर्णछिन्न कथा है कि पूर्ण कर्मोदय से आत्माराम जी
का चित्त सम्यक्त्व में ता पराङ्मुख हो ही गया था किन्तु अब माया
में भी प्रवृत्ति आत्माराम जी की अधिक हो गई जैसे कि आत्मा
राम जी के जीवन चरित्र के ४७ वें पन्नादि लिखा है कि तदावि

भारमारामजी ने विचार किया कि इस समय कुछ पंजाब देश में प्रायः बूढ़कमलका ओर है, और मैं अकेला शुद्ध भ्रमण प्रगट करूंगा तो कोई भी नहीं मानेगा इस वास्ते अगर शुद्ध भ्रमण रख के बाह्य व्यवहार बूढ़कों का हो रख के कार्य सिद्ध करना ठीक है भवसर पर सब मरुछा हो जायेगा ! इत्यादि !

पाठकगण ! उक्त लेख से स्वयमेव ही विचार छेवें कि भारमाराम जी माया में भी कैसे प्रवीण थे, मरुछा श्रुताका यही लक्षण है या सत्य वादियों का !

तथा भी सूत्र कृतांग के प्रथम श्रुत स्कन्ध के द्वितीयाध्याय के प्रथमोद्देशक श्री ९वीं गाथा में लिखा है कि :—

‘जइवियणि गणेकित्से चरे जइवियभुजइमास
मतसो जेइह मायार्हमिउजई आगतागभाय’ अण
तसो ॥ ९ ॥

अर्थार्थः—यदि कोई मग्न हो जावे शरीर को कष्ट भी करे देश में भी विचरे मास २ के भन्तरे भी भाहार करे यदि ऐसी वृत्ति युक्त हाकर भी छुट करे तो अनंत काल पर्यन्त गर्नादि में प्रवेश करता है !

प्रिय मित्रगण ! भारमाराम जी ने उक्त सूत्रोक्त कथन को भी विस्मृत कर दिया !

फिर श्री कमीराम जी महाराज भारमाराम जी को मिले तिनहों ने भी भारमाराम को बहुत हित शिक्षायें दीं !

किन्तु भारमारामजी को उन शिक्षायों से कुछ भी लाभ न हुआ अपितु अनेक प्रकारकी बातों से भारमारामजी ने बिद्वन्मन्त्रादि साधुओं को भी सम्यक्त्व से पतित किया !

भीर भावक लोगों को भी जितमत से विमुख किया किन्तु जित पुरुषों के आचार भी शुद्ध नहीं थे उनको धर्म के परीक्षक ठहराया जैसे कि भारमारामजी के जीवन चरित्र के ४८ वें पत्रोपरि लिखा है कि पट्टी घाले छाळा घसीटामल्ल ने अपना संशय पूर्ण करने के वास्ते अपने पुत्र ममीचंद को व्याकरण पढ़ाना शुरू कराया जब वो पढ़कर तैयार हो गया तब घसीटामल्ल ने कहा कि पुत्र किसीका भी पक्षपात नहीं करना जो शास्त्र में वधार्थ वर्णन होवे सो तू मुझे सुनाता तब ममीचंद ने कहा कि पिता जी जो कुछ आत्मा, राम जी तथा विद्वत् चंद पगौरह कहते हैं सो सर्व ठीक ठीक है भीर पूज्य भीमसर सिंह जी तथा उनके पक्ष के दूढ़क साधुओंका जो कुछ वचन है सो सर्व असत्य भीर जैन मत से विपरीत है, यह सुन कर छाळा घसीटामल्ल भी दूढ़क मनको छोड़के शुद्ध भद्रान वाले होगये पूर्वोक्त ममीचंद इस समय गुजरात मारवाड़ पश्चात् पगौरह देशमें पंडित अमोचंद जी के नाम से प्रसिद्ध हैं भीर प्राय भारमाराम जी के सवेग मत अंगीकार किये पीछे जितने मृतन शिष्य हुए सर्वमेघोडा बहुतजरूर ही पंडितजी के पास विद्याभ्यास किया चलकि मय तक कियेही जाते हैं ।

प्रिय पाठकगण ! यह वही पंडित जी हैं जिनका स्वरूप चर्चा चन्द्रोदय भाग तीसरे के स्वप्न के ब्याख में लिखा गया है ।

देखिये पृष्ठ ५० पर—

अपितु भी पूज्य महाराज बीमासा के पश्चात् अमृतसर में विराजमान हो गये इधर से भारमारामजी विद्वत्त्रादि गण भी भीमहाराज के दर्शनार्थ अमृतसर में ही भागये ।

तब भारमारामादिगण भी पूज्य महाराज जी को बहुतही प्रिय करने लगे किन्तु भी पूज्य महाराज महामन्न पुरुष ऋषुप्रजामी थे तिनहीं भारमारामजी को ही व्याख्यान करने की आज्ञा देदी मगिन सच्च कहा है जिसी कथि मे, प्राण कधी न जाब पर प्रहति न जेवे कि

इस कहावतके अनुसार आत्मारामजी व्याख्यानमें उत्सृज्य मापण करने लगे तब श्रीपूज्य महाराज ने वा लाळा सौदागरमल्ल (जो कि स्याल कोट से श्री पूज्य महाराज जी के दर्शनार्थ आये हुए थे) ॥

तिन्हों ने भी आत्मारामजी को बहुत ही हित शिक्षायें दीं और श्रीमहाराज ने आत्माराम को यह भी कहा कि—हे शिष्य यह मनुष्य मनु मिलना पुनः पुन दुर्लभ है हिंसा धर्म से ही आत्मा मनादि फेकाळ से परिस्त्रमण करना अच्छा आया है एक वर्ण भी सूत्रका अभिन्यास किया जावे तो आत्मा अनंत भवों के कर्म एकस्वस्कर होता है ॥

और तू कर्षों, भयों का भयन्य करेता है यदि तूझे किसी बात की शक है तो तू निर्णय कर ले वा शास्त्र द्वितीय बार पढ़ले ॥

तब आत्माराम विदमबन्दादि साधुओं ने श्रीपूज्य महाराज के चरण कमल प्रकट लिये पुनः हाथ जोड़ करे कहने लगे कि । हे महा रास जी हमतो आप के दास हैं जो कुछ आपकी भया है सो हमारी है जो हमने सूत्र से विदम कहा है तिसका हमको यथाभ्यास प्रायश्चित्त देवें या क्षमा कर देवें इत्यादि परम मत्तता करते हुआं को तब श्री महाराज ने यथा योग्य दृष्ट वेदिया ॥

फिर उन्होंने अपने आप ही एक पत्र लिखकर श्रीपूज्य महाराज को दे दिया । पाठकगण अब इस लिये दिया सिद्ध होता है कि । उन्होंने यह विचार किया होगा कि पत्र लिख कर देने से हमारी प्रतीत ठीक २ श्रीमहाराज के शिष्य में बैठ जायगी क्योंकि जब प्रतीत हो जावेगी तब हमारा काम निर्विघ्नता से होवेगा अपितु पत्र भी नामाङ्कित करके दिया ॥

सो मध्य सीधों को इस स्थान पर एक पत्र की प्रतिकूप (मकल) लिख कर दिखाते हैं ॥

जिस के पढ़ने से पाठकों को भली भाँति निश्चय होजायगा कि विदमबन्दादि साधुओं की विद्या बुद्धि कैसी थी ॥

सुन से आमासून को सुन करके शेष रूपजल को छोड़ती है गुण को धारण करती है वह सृष्टात परिपक्व है। अज्ञात परिपक्व ऐसी होती है जैसे प्रकृतिका मधुर अथात बाल्यावस्था करके युक्त मृग का बालक सिंह का बालक कुकुर का बालक जैसे मनुष्यादि का संग करता है।
 अथा। वैसे ही प्रकृति-युक्त होजाता है तथा जैसे रत्न घूस में पड़ा हो सो घूस के दूर होने पर ये रत्न शुद्ध हो जाता है वैसे ही अज्ञातपरिपक्वा अच्छे महारामों का संग करने से पवित्र होजाती है॥

दुर्विद्वध परिपक्व इस प्रकार से है जैसे किमी ने गुरु के मुख से तो पदार्थों का निर्णय नहीं किया किन्तु बिना गुरु के भय दिये ही बर्बने आप सोझर कहलाने लगा यदि किसी विद्वान् का सयोग मिलता है तो अपमान के भय से उनसे दूर ही रहता है अपितु अधिविद्वानों के मध्य में पड़ित कहलाता है किन्तु जैसे वायु करके पूर्ण (वर्षिषाव) मशक, जल से लो होन होता है अज्ञात जनों को सब से भरी हुई दिखती है इसी प्रकार वह पुरुष ज्ञान से लो होन है और हठ में उद्यत है नाहीं हठ को छोड़ता है सब पुरुष को सुपुरुषों की शिक्षा से कुछ सी खाम नहीं होता इसी प्रकार आत्मारामों को भी महाराज की शिक्षाओं से अतीव खाम न हुआ किन्तु ऊपर से धिरेय भक्ति करता हुआ निज आशय कि, न प्राप्त देखते हुए ने अमृतसर से विहार करके १९२३ का श्रीमासा दुधियारपुर में जा किया और श्रीपूज्य महाराजने १९२३ का श्रीमासा अमृतसर में ही कर दिया और उक्त वर्ष में ही सुनाम नगर के रहने वाला वैद्य तुलसीराम ने भी महाराज के पास दीक्षा प्राप्त की ॥

पाठकों को स्मृति दाना कि भी महाराज ने जो आत्माराम जी को, द्रिष्ठ शिक्षायेदी थीं तिनके ही प्रयोग से आत्मारामजी ने १२ मई १९२३ के श्रीमासे में लिखकर यूटेराय जी को भेजे क्योंकि उस का

में बूटेगाय जी का बीमासा गुजरवाले में था सो हम भी वह प्रदत्त जैसे के तैसे ही मर्य्यजीवों के जानने के वास्ते लिखते हैं ॥

स्वस्ती श्रीमच्छातिनाथाय नमः ।

अथ प्रश्न लिखते हैं —

१—श्री सिद्धांत में मार्ग तीन कहा है उत्तरग १ अपवाद २ घोष ३ अने अष्ट दस पाप स्थानक कहे हैं सोई उत्तरगमार्ग में अष्टदस पाप स्थानक किस रीत से वर्णन करवा है अने अपवाद मार्ग में अष्ट दस पाप स्थानक कैसे कथन किये हैं अने घोष मार्ग में कैसे अष्ट दस पाप स्थानक का निरूपण कीया है एवंपूर्वोक्त प्रकारेण तीनों मार्ग के ५४ पाप स्थानक हुये सो इन ५४ का धारा १ स्वरूप लिखना फिर जैसे लिखना इन्ही ५४ मर्य्ये भक्षा मगधान् जी की कौन से पाप सेवने की है कौन से मे नही इति ॥

२—श्री प्रवचनसारोद्धार में आषक के १३ सौ फौड ८४ काड १२ लाप ८७ हजार २०२ भांगा इन का सर्व पृथक् २ स्वरूप लिखना फिर जैसे लिखना कौनसे भांगे प्रतिमा जी का पूजना है अने कौनसे भांगे में यात्रा करणी कही है इति ॥

३—तपागच्छ वाले कहते हैं मगधान् जी के मंदिर में तक्षणी घेस्या का नाटक करवाणा अने अरतरागच्छ वाले निषेध करते हैं सो तुमारे ताई कौन सी बात उपादे है अने साख मर्य्ये तक्षणी भयवा बुद्ध वा हीअडा पद्ध तीना माहि किम का नाच करवाणा कहा है इति ॥

४—भौर तपागछीये कहते हैं साधु से न रखा जाय तो घेस्यादि से कुशील सेवे तो पाप नहीं और आचारंगजीमें कहा है शीछ न पछे तो गल पासादि फरी मरे सो इनका समाधान कैसे है इति ॥

५—भांगे तपागछीय कहते हैं प्रोपदी भायिका है अने उर्ध्वनिर्युक्ति मे लिखया है मिथ्या विष्टनी कहा है सा इसका ध्याय कैसे है ॥

६—भौतिक कल्प सूत्र में लिखा है २ हजार वर्ष भगवान् जी के पोछे उदय २ पूजा साधु साध्वी की होगी सो मरुत मरु कद उतरा कौन से सवत् में उदय २ पूजा हुई ॥

७—भोर घर्तमान में भाचार्य कीनसा है उपाध्याय कीनसा है तिसका नाम लिपणा सूरमंथ करिखहत कीनसे देश में है ॥

८—भोर अष्टादस पाप स्थान उपर पृथग् २ सात नय का स्वरूप लिपणा प्रणाति पात उपर सात नय मृपावाद उपरि सात नय एवं सर्व उपरि उतारणी फिर लिपणा कौन सी नय के मत में पाप अष्टादस सेवने की भडा है कौन सी नय के मत में पाप सेवने का निषेध है ॥

९—फिर सात कुविद्वन मण्ये स्वाध्याय के मांगे म्यारे २ वसैं बनते हैं फिर कौन से मांग में सात कुविद्वन सेवने की भडा है ॥

१०—विद्यात में मुख यत्रका जो खलो है जो धूक गिरने की रक्षा वास्ते है या पापु के जीवा की रक्षा वास्ते है या छिग वास्ते है इति प्रश्न १०—

११—महा मोक्षोप के पबमें नयनीत सार भवयन में प्रज स्वामि के सिध्य ४९९ वर्णन में ऐसा पाठ है चंद्रमन की यात्रा में प्रदत्त है तीर्थयात्रा जाने से करणान् वर्णान् प्रसंजम होना है इस कार्य से तीर्थयात्रा का निषेध किया गया है महा निसोदय सूत्र ३५०० भव्यम पावनम् ४२०० बृहदावनम् ४५०० ए नोनो मांदि लिपन देव सेना उसेका तात्पर्य लिपणा ११ प्रदत्त का जवाब टीका वा या प्रकर्ष वा सूत्र के पाठ शुद्ध लिपना मुद्याम यार्त्ता न लिपणा थायसम् दसपत भारमाराम० १९२३-

प्रिय पाठकगणों ! यह प्रश्न भागमगरामजी ने जैसे यूटो य जी को भेजे थे वैसे ही हमने लिप्य दिये हैं किन्तु यह प्रश्न भगवद् भाषा

में लिखे हुए हैं इन ग्रन्थों के देखने से यह तो मखी प्रकार विदित हो जाता है कि भास्माराम जो व्याकरण के भी अनभिज्ञ थे सो पूर्ण समाजोचना १४ के चौमास में लिखेंगे अपितु घूटेरायजी ने इन ग्रन्थों का किञ्चित भी उत्तर नहीं दिया है क्योंकि घूटेरायजी कोई विद्वान् पुरुष नहीं थे नाहो उन्होंने ने कोई सूक्ष्म ज्ञान सीखा था होय इन की बनाई हुई मुखपत्ती खर्चा नामक पोथी से निर्णय हो जाता है कि यह * घूटेराय जी विद्वान् नहीं थे और सपगच्छ को भी अन्तःकरण से मज्जा नहीं समझते थे क्योंकि इस बातको घूटेराय जी ने अपनी बनाई पुस्तक में स्पष्ट कर दिया है ॥ १ ॥ ११ ॥

* घूटेरायजी का जन्म-पंजाब देश में लुधियाना शहर के तरफ बजोडपुर से सात मा० कीसे दक्षिण के तरफ दूल्हा नाम में टेक-सिंह जाट की कमी नामा स्त्री को कृष्ण से विक्रम संवत् १८६६ में हुआ था पुष्योदय से इन्होंने सम्बत् १८८८ में भी १००८ पूज्य मूलचंद जी महाराज के गच्छ के भी मुम्तिनागरमल्ल जी महाराज के पास दीक्षा धारण करी फिर यह चित्त की संसलता के प्रयोग से पकड़े ही फिरने लगे अथवा समय यह पंजाब देश के स्यालकोट के जिला में पसरकर नामक नगर में चले गये सो वहां पर इन्होंने अपने उपदेश द्वारा मूलचंद आदाबाल को पराग्य दिया और बिनाहा ही मूच्छ लिया तब मूलचंद का ताया (महत्पिता) सोहनेशाह स्यालकोट वाळा जीधंदेशाह नाबडा पसरकरवाळा जोकि मूलचंद का मामा (मातुल) था तिन्होंने गुजरवाळा में घूटेराय जी को वा मूलचंद की मुखपत्ति ताब डाली फिर मुख से कहने लगे भापने किसकी आहा से शिष्य किया है यदि तूम सूत्रानुसार किया नहीं करसके हो तो तूम मुखपत्ति को मत रखो अर्थात् मुखोपरि मत पाँधो क्योंकि साधु के यह कर्म नहीं है तब इन की असा मुखपत्ति बांधने की उत्तर गई किन्तु जो

घूटेराय जी तो यथा किन्तु अन्य किसी भी सम्प्रेगी महाशयने इतना साहस नहीं किया है कि इन प्रदनों का यथार्थ उत्तर दे देयें और भारमारामजी के जीवन चरित्र के पढ़ने से यह तो स्पष्ट हो निश्चय होजाता है कि भारमाराम जी श्री महाराज के सन्मुख होने में असमर्थ थे जब कभी दर्शन करते थे तो श्री पूज्य महाराजजी की स्तुति करके किनारा पकड़ते थे किन्तु साथ से पण्डित होकर स्वकपोल कल्पना द्वारा लोगों को झम में डालते थे और पूछने पर अतथ्य भाषण का प्रयोग अधिक करते थे जैसे कि भारमाराम जी के जीवन चरित्र के ५१ वें पृष्ठोपरि लिखा है कि—हुदवारपुर में क्लेश करके गणेशीलाल घूटेराय जी के पास जाकर सम्प्रेगी दीक्षा हेतु विचरने लगा और ठिकाने ठिकाने कहने लगा कि—भारमाराम जी के सम्मुख शुद्ध समातन जैमवत की भद्रा होगई है और मायस में दूधक मत का भेष और व्यवहार रफा है परन्तु दूधकमत को भास्या विवक्षुल नहीं है ।

मूलचंद को लेगये थे सो मूलचंद फिर भी घूटेरायजी के पास भागया सो घूटेरायजी ने फिर भी बिन भानाहो मूण्डलिया फिर घूटेराय जी अपने भावको साधु कहाना नहीं चाहते थे इसलिये इन्होंने मुन्यपति मुखोपरिख डतार डाली भपितु यह तपागच्छ को भी अंतरंग से भच्छा नहीं जानते थे जैसे कि महारामा जी भगनी बनाई मुन्यपति चर्वा नामक पुस्तक में लिखते हैं कि—मेरी सरथा तो श्री असोपित्रय जी के साथ घणी मिले हैं जिसतपाण्या जी नाम मात्र तपेगच्छ का बजीलाता था तिम मेरे को भी नाम मात्र तपेगच्छ का कहित्ता जोइए मैंने तपाण्या जी के समुदाग करके लोकम्यवहार मात्र समाचारी भंगीकार करी—राजमगर मध्ये सुमागदिसयतयामणिदिसय पाछेगच्छ घारी ने हम तथा मूलचंद तथा चूचिचंद सेठा को घर्मनाला में बने भाए एता उनके साथ मेरा संबंध थी—मेने कर्म जोरे पांचमा काछ में

इसके ऐसे अनुचित समय में इस तरह के कथन से और पूर्वोक्त काररवाई अंगीकार करने से कितन ही शहरों के लोगों को समातन जैममत्र की शुद्ध भखा प्राप्त होनी बंद होगई क्योंकि बहुत अमजान लोगों ने बिना हो समझे इठ कदाप्रह करके भारमाराम जी घगैरह के पास आना माना र्थद कर दिया इत्यादि पाठकगण ! क्या विद्वानों का यही लक्षण है कि सदैवकाल ही स्वहृदयानुसार वर्ताव करना जब कभी स्वकृत प्रगट होजाये तो शोक करना चाह !!! जिस जीव के पूर्वोक्त कृत्य होयें उस को सत्य ब्रह्मा मानना क्योंकि

अम लिया विरागपिण भाव्यागुद सन्नोगन मित्या ते पाप का बदा इत्यादि कथन से सिद्ध है कि—बूटेराय जी तपगच्छ का भन्त, करण से अच्छा भी नहीं जानते थे किन्तु नाम ही तपगच्छ का रखते थे और जिसके पास तपगच्छ धारण किया था उनका स्वरूप बूटेराय जी मुखपत्ति चर्चा नामक पोथी के ५८ वें पृष्ठोपरि लिखते हैं कि बाइदिसा छेने घाली थी ते साधा को रूपइये चढाय क पूजा करने लग्ये प्रथम तो रूपइये चढाहने रत्ना विजयजी की पूजा करी फिर मणिविजयजीने भागे रूपये चढाहने पूजा करी पीछे मेरेको रूपइये चढावने लग्ये तिवारे नित विजयजी बीरवा हमारे भागे रूपये चढावने का कुछ काम नहीं हमारे रूपयां की अप न थी हम कहने मने कर दोनो तिवारे हम सये तहां ने ऊठ के खले भाये तिमोंने पाई कू दिसा देके शहर में खले गये इत्यादि इस प्रकार चतुर्थ स्तुति निर्णय हांकी द्वार के पृष्ठ २८ वा २९ वें पर भी लिखा है ॥

पाठकगण धेणिये सब मणि विजयादि संयोगी द्रव्य रखते थे और बूटेराय जी अपने आप को साधू ही नहीं मानते थे ना ही बूटेराय जी को शुद्ध का संयोग मिला नाही तपगच्छ को भग्नकरण से मला समझते थे—तो फिर मला तपगच्छिये किस तरह कह सक है कि हमारी परम्पराय शुद्ध संयमधारियों की है ॥

जब भारमाराम जी सत्य में दृढ़ म्याय पड़ी थे तो इतना प्रतिहार क्यों करते थे जो कि उनके जीवन चरित्र से सिद्ध है !

तब श्रीपूज्य महाराज ने अमृतसर से विहार करके भय्य जीवों के हृदय सस्यक्त रूपो ज्योति से प्रकाश करते हुए सम्बत् १९१४ चौमासा फीरोजपुर में ही करदिया और पूर्वोक्त सम्बत् १९१४ में ही अमृतसर में तीन दीक्षाये हुई !

जैसे कि—छाछा अम्बीरचम्ह निधाममच्छ, निहालचन्द यह तीन ही गृहस्थ रावठपिंडो के नियासी थे। श्रीर जक्त ही धर्म में छाछा ओतचल्ल की बिन्ली के निधासी (गृह आसोयना) भापा ग्रन्थ के कर्ता जोकि वैराग्य मुद्रा थे जिन को श्रीमत् माधव्य रामयक्ष जी महाराज ने भूतविद्या का दान दिया था वह भी भारमाराम जी को मिले तिन्हों ने भी बहुत ही हित शिक्षाये भारमाराम जी को दी और कई प्रदत्त भी पूछे जैसे कि—

छाछा जी ने प्रदत्त किया कि—महार्मा जी सूत्रों में द्वि प्रकार से धर्म प्रतिपादन किया गया है जैसे कि—मुनिधर्म १ गृहस्थ धर्म २ तो प्रतिमा जी का पूजन किस सूत्र में कहा गया है। क्योंकि जैसे उक्त द्वि प्रकार के धर्म का सर्विस्कार उन्हाई भादि सूत्रों में अर्हन्देव ने किया है इसी प्रकार किस सूत्र में अर्हन्देव ने मन्दिर के बनाने की विधि प्रतिष्ठा की विधि बिष को मूलमायक बनाना इत्यादि विधि कथन करी है और ऐसा कथन करने वाला कौमना सूत्र है या सूत्र वा पाठ है !

और जीव का भजोइ मानना भजोइ को जीव मानना यह मिथ्यात्व है या नहीं क्योंकि भजोइ में जीव सत्ता धारण करने यहाँ परम मिथ्यात्व है फिर किन सूत्र में श्री गौतम स्वामी ने मगध में से प्रदत्त किया है कि प्रतिमा जी के पूजन से जीव मोक्षमें बढा जाता है।

फिर धर्म हिंसा में है या वध में है और भगवान् की भाषा महिमा में है या हिंसा में है ?

यदि कहोगे सूत्रपाठ व्यवच्छेद होगये हैं ? तो हम कहते हैं जो 'भग्यधर्म' विषय अनेक ही पाठ हैं वह व्यवच्छेद क्योंना होगये मेला कोई बुद्धिमान यह बात मान सका है कि सिद्धास्त के नियम^१ तो व्यवच्छेद न होवें और नित्य नियम व्यवच्छेद होजाये सो महात्माजी उक्त पाठों का शान्ति पूर्वक सुझे उत्तर दीजिये 'अब' छालाओं ने इस प्रकार भारमाराम जी को अनेक प्रश्न पूछे तब भारमाराम जी ने एक ही मौन धारण कर लिया सत्य है उत्तर देते क्या सूत्रों में उक्त विषय का कोई भी कथन नहीं है । इसी वास्ते भारमाराम जी के जीवन चरित्र में ५२ पृष्ठोपर लिखा है कि—भारमाराम जी ने छाला जीतमल्ल को भयानक समझ के उपेक्षा करली इत्यादि धाहजी धाह' जित्त के प्रश्न का उत्तर न भाये यही धर्म के भयानक-सो इसी वास्ते छाला जी को हठधर्मी या धर्म के भयानक लिखा है पाठकगण ! यह भारमाराम जी को विद्वत्ता है किन्तु श्री महाराज ने श्रीरोजपुर के घामासा के पदघात अनेक ग्राम नगरों में धर्मोपदेश बेकर १९२५ का घामासा गुरु-को-नडियाला में किया-सा उक्त घामासे में आधक लोगोको बाम का परम लाम हुना कई नव्य जीव प्रदत्त-रूख के निस्स-

* प्रश्न व्याकरण सत्र या उपासक वर्गांग सत्र भावदयकादि अनेक सत्रों में मुनिधर्म या गृहस्थ धर्म का पूर्ण स्वरूप प्रतिपादन किया गया है इतना ही नहीं किन्तु श्री अनुयोगदीक्षी सत्र में भाव दयकादि अधिकार में परमन के अनेक मंदिरों के विषय में पाठ हैं । मयिन् श्री अनुसंध को वी. समर्थ नित्यप्रति पढायदयक करने की ही भाषा लिखी है इसीलिये जो कहना है कि मंदिर विषय के पाठ व्यवच्छेद होगये हैं सो निकट स्वकीय कल्पित कथन है ।

स्नेह हुए पुन' एक वर्ष में रत्नाराम मोसवाल स्थालकोट का वसने वाला तिस का भी भी महाराज ने दीक्षित किया ।

अपितु जब १९२८ संवत् में श्रीपूज्य महाराज ने विद्वत्पंडित साधुओं को अपने गुरु से पाछा किया था तब रत्नाराम को भी तिस के ही साथ गुरु से निम्न किया था किन्तु यह निम्न होता ही पठि होगया था ॥

संवत् १९६० का चौमास अंगणावच्छेदिक श्री १००८ स्वामी गणपतिराय जी महाराज स्वामे ७ का चौमास स्थालकोट में था पुन' मैं भी भी महाराज जी के पास ही था तब उस काल मैं पर रत्नाराम पूज्य भी स्थालकोट में ही स्थित था तो मैंने एक दिन रत्नारामजी से आत्मारामजी या विद्वत्पंडित के भक्षण होने का कारण पूछा तब रत्नाराम जी ने भतीय घृणा दायक आत्माराम जी का विद्वत्पंडित का आचार सुनाया अपितु तिस के लिखने को हमरा किञ्चित् भी आवश्यकता नहीं है । क्योंकि हमारा धर्म अहिंसा है जिस करके किसी भी मुद्र आत्मारामों को दुःख प्राप्त होये यह छेव हम नहीं लिखेंगे नाही किसी का मर्मकारी शब्द या काम प्रगट करेंगे पर यह तो पाठकगण जान हो गये होंगे कि जब आत्मारामजी से अहिंसा भावित सुन्दर किया न पल सकी तब ही आत्मारामजी द्येशम्बर मत से पूषक् हुए क्योंकि निर्दय घृष्टि का पाठना मनोव कठिन है भोर इसी यास्ते द्येशम्बर सुनियों को अनुचित लिखने छोड़ैलैके —

अन्तर्गत के पृष्ठ ५२ पर लिखा है कि —

१. सुहावा गाम में रात के समय फिर जीवनमन्त्र जी रोकर कहने लगे तथा दिवली जाले धावक बहुत श्रुत हुए-चर्चा करने में अशक्त हो गये इत्यादि-मित्रता ! यह सर्वत्र-आत्माराम जी के अनुचित है क्योंकि आत्माराम जी स्वयम् स्तुत करने थे जो कि इन-

के लिये पत्र से लिख है भव्यगण को सब पत्र की नकल भाने लिख कर दिखलायेंगे अपितु जब भात्माराम जी का व्यवहार सूत्रा मुकुल'म रहा तब ही स्वामी जीधनराम जी महाराज ने भात्माराम जी को स्वगच्छ से बाह्य कर दिया तब ही भात्माराम जी कर्म करने लगे तो स्वामी जी ने कृपा करी कि भय रोने से बचा बनता है ! और दिल्ली की यह बात है कि जब दिल्ली में भात्माराम जी गये तब ही छाला जीतमल्लादि भावकों की भेट हुई। तब वहाँ से विहार ही करना सूझा क्योंकि ला० जीतमल्ल से प्रथम एकबार वातार्थ छपझो सुकाया, जिस कारण से ही भात्माराम जी ने भीम, विहारकर दिया ! और भीमद्वाराजने भी चौमासा के पदचात् फर्पटले की मोर विहार, कर दिया फिर आलम्बर, फगवादा, जेम्स, टांडा इत्यादि नगरों में विरोधकार कर के १९२३ का चौमासा हुशियारपुर में किया इस चौमासा में जिन माईयों को मिथ्या सम हो रहा था जिस का नाश किया अथात् समाच्छेदन किया किन्तु जो बढामही थे तिन को प्रदो-त्तर करके निरुत्तर किया क्योंकि भीमद्वाराज स्वमतपरमत के परम दाता थे। सा चौमासे के पदचात् बहुत से भक्तजीधों को सम्यक्त्व का बोध देकर १९२७ का चौमासा आलम्बर नगर में कर दिया जो चौमासा में परमोद्योत हुआ।

फिर भीमद्वाराज चौमासे के पदचात् विचरते हुए जगरावा शहर में पधार गये फिर भक्तदा समथ जगरावा से विहार कर के भीमद्वाराज किशनपुरे को आरहे थे वैद्ययोग्य से भात्माराम जी मार्ग में ही मिलगये पुन भीमद्वाराज के चरण कमल एकद्व लिये मुक्त से कहने लगे कि—भीपूज्य महाराज जी मैं तो माप का दास हूँ आपने मेरे ऊपर इतना उपकार किया है कि जो क्षण मैं भय भव में नहीं देखता हूँ क्योंकि आपने मेरे गुरु महाराज को दीक्षित किया और मुझे ज्ञान पदाया।

॥ तब भीमहाराज कहने लगे कि हे भामाराम त मिथ्यात्व प्रवेश करके कहीं जन्म को बिगाड़ना है क्या तू ने उत्सूत्र भाषी के फुल को नहीं सुना है कि जो अनन्तकाल पर्यन्त उत्सूत्र के भाषी के सङ्गस्थ की भी प्राप्ति नहीं होती ।

॥ और जो तेरे मन में शक्य है तो तू निर्णय करले क्योंकि सूर्य में यह पुन २ कहा है कि जो अजीब को जीव मानता है वही मिथ्या दृष्टि है सो जब तू एक पापान के खंड को अर्हन् मानता है तो भला किंतु तू मिथ्यात्व मार्ग से कैसे विमुक्त हो सका है ।

॥ और फिर तू लोगों के पास कहता है कि पूज्य जी मेरी रीति सही करते हैं ।

॥ प्रियवर ! हमको अंतराय लेने की क्या आवश्यकता है किन्तु जैसे तू कर्म करता है इन कर्मों से तो यही सिद्ध होता है तुझ को मनुष्यत्व मत्त पाना ही दुर्लभ हो जाएगा तात्पर्य यह है कि तू शक्यों को प्रकाश कर और हम उन शक्यों का समाधान करेंगे ।

॥ अपितु वक्रता से पश्चात् मत कर इत्यादि जब भीमहाराज कृपा करके तब भामारामजी कुछ भी उत्तर न दे सके अपितु नम्रता करके अपने मार्ग छलते गये ।

सत्य है दृढ धर्मी पुरुष को भीमही का शान है क्योंकि अक्रतुता से विर्ताव करना भामारामजी के जोयन चरित्र से ही सिद्ध है देखिये सीधन चरित्र पृष्ठ ५६—जब भामाराम जी अगरवाला में यिदनचंद्रादि, साधुओं को मिले तब विप्रनचंद्राजी ने कहा कि महाराज जी मन से तो हम सदाही आप के साथ मिले हुये हैं, क्योंकि आपने छुट्ट समातन जैनमत का यथाथ स्वरूप दिखाने हमारे ऊपर आ उपकार किया है हमें इसका बदला मर मर में भी नहीं दे सकने हैं, परंतु क्या करें अपना मतलब सिद्ध करने के वास्ते ऊपर ऊपर से जुदाई रखते हैं यदि इतनी भी जुदाई न रखें तो पूज्य जी गाराज हो जाते हैं और

रुनके नाराज होने से अपना कार्य सिद्ध होना मुश्किल है इत्यादि प्रिय पाठकगण ! उक्त लक्ष्य को स्वयं पढ़कर विचारें कि भारमारामजी या विद्वन्मन्त्रादि साधुओं का भस्तरण या धाया विचार कैसा विचार नीय है और फिर विद्वन्मन्त्रादि साधुजगत्प्रायः से विहार करके अमुकमें अम्बाला छावनी में पहुँचे फिर अपने हाथों से एक (चिट्ठा) पत्र लिख कर अम्बाला छावनी से अम्बाला शहर में माफत लाला मन्नामियां मल्ल, बालमल्ल की भोज्य महाराज जी को भेजा जाकि १९२८ अक्टूबर १४ का लिखा हुआ सा पाठकों के आनने पासने हम उस पत्र की नकल यहाँ उद्धृत करते हैं —

श्री योगागामन

स्वस्ति ओमन्त सुमर्यान् विराजमान श्री श्री परम पुज्य परम व्याख्य परम कृपाख्य परम रुधेनी चाग्नि निधी दया के सागर पिता के महार सूरवार धीर गमीर अनेक गुनकारी धराजमान ॥

कागज थाड़ा गुनघगा, मोपे कक्षा न जाय ।

सागर में तो जल घना, गागर म न समाय ॥

श्री श्री श्री परम पुज्य जी महाराज हमारे सिर के छत्र समान मस्तक के मुकुट सामान अनेक गुनकारी विराजमान स्वामी जी महाराज पुण्यवर्द्धजी महाराज के चरणा विष वदना नमस्कार वासना श्री स्वामी जी विद्वन्मन्त्रादि महाराज चरणा खाकर गुलाम हुकमे की वदना नमस्कार बहुत २ करके बसनी चरणा त्रिख सासना हृथा वासना ठामे ७ की जुबो २ वदना नमस्कार बहुत २ करके पाचो सबका ध्यान आपके चरणा विष लगा रहा हृपगा स्वामी विद्वन्मन्त्रादि का चरणा के गुलाम का हुकमे का ध्यान हरदम आपके चरणा विष लगा रहेंदा हैगा आपने हमारी तःफ सेति किस बातको बिना सोचन करना नहीं हम को तो आपके चरणा का बड़ा भवार हृपगा घन

उदिन होगा जिस दिन आपका दर्शन होवेगा हमारे को बहुत मय्यत्र
 लग रही हएगी श्री श्री श्री १००८ श्री श्री श्री पुण्य जी महाराज के
 चरणों विषय विद्वत्पद की हुक्मचद की यचना ममस्कार तिरुनी के
 पाठ से १००८ बार पुनर २ घाघणी सुपसाता यष्टुन २ करक पुष्पी
 भागे मेरी तथा हुक्मचद की मरजो आपके चरणों में घौमास करने
 की हैगी सा घडा क्षेत्र होवे तो हुक्मचद कहे के मेरा धित पूज्य जी
 महाराज के पास घौमासा करण का है सो आप जोण से स्थान सहर
 विषय विराजमान होवेगे सो हमारे उपर दया भाव करके सहर दिप्पी
 करवे इस लिपाये देणो हम इस ठीकाणे हैं हमारे धित की वृत्ति आप
 के धरणा मय्यत्र रहे है अप इस बात में थिल कुछ फरक नहीं समझना
 अथपपसीतमेर तथा हुक्मचद भाईहैगी पुण्यजी महाराज के चरण
 विषय चतुरमासा कर के रुधा वरणी आप पातर जमा रखणी आपके
 तावेदार है चरणों के चाकर है इसीतरा जानना धनु वधा लीपु श्री
 केवला महाराज जानने है हमारा ता आपने पडा उपकार किया है
 सो हमारे मन में यहि है आप के पास रहे २ शास्त्र विचारे सुमध्यात
 गाव ता धर्मतो हमारी मनसा पुगे हुये सो भयके तो पुरका मवमा है
 केर मेरा परमायोगे *उसतरा होवेगी इसम फरक नहीं जानना यह
 बात धतसवरण से लिखो ह आप घडे गभीर हो उत्तम हो आपके
 गुणा का पार नहीं है सो आप करके साता को रबर जयर मेजनी
 कृपा करके जरूर जकरां आपनि सुपसाता की गयर जज्दी कृपा कर
 के भाव्यों सेता लपा नेनी हमारा ध्यान यष्टुत लगरया हएगा—इति
 —भार इस पत्र के द्वितीय पृष्ठा परि वैद्य लोगें का जो (परी)

*शांति हैं यह पत्र भक्तिजीण हमे से इस स्थान के पर्व ही उठ
 गये ह पत्र भी छिन्न सिग्न हो रहा है किन्तु इस स्थान में ऐसे शम्भु
 प्रतीत होते हैं कि मैनु आप जो आशा भेजोगे तथा जिस तरा कृमा
 योग-इत्यादि-

नित्यम् पत्रादि में हिंदी लिखने में आती है वह लिखी हुई है उस में लिखा है कि—मन्थाला छावनी का पता भार पत्र मेजा लाला मसानियामल्ल आलूमल्ल की माफत श्री पूज्य महाराज को भजा १९२८ ज्येष्ठ कृष्ण १४—इत्यादि—और आत्मारामजी के जीवन चरित्र के ५७ वें पृष्ठों पर लिखा है कि—कितने दिनों पीछे अमरसिंहजी की तरफ से पत्र ऊपर पत्र आने से लाचार हो कर श्रीविद्वत्चंदमी लुधी आने से विहार करके मन्थाला शहर में जा चौमासा रहे इत्यादि—प्रिय पाठक धृन्द् उक्त पत्र विद्वत्चंद वा द्रुकमचंद का लिखा हुआ है पत्र में दोनों प्रकार के वर्ण दिखाए जाते हैं तथा दोनों ने ही पत्र को वर्णों से अंकित किया है। अपितु पत्र अशुद्धी बहुत हो है सो उक्त पत्र के पढ़ने से निश्चय हो जाता है कि यह महात्मा जी व्याकरण के भय उत थे अपितु संयोगी लोक इनकी विद्या की महान् स्तुति करते हैं सो ठीक है—यथा—

प्रिय मित्रवरो इस सारे पत्र की खर्ब ५० पक्तिये हैं प्रत्येक पक्ति में अशुद्धियों की भरमार है यथा प्रथम पक्ति में तीन अशुद्धिये हैं यथा—मत् के स्थानो परिमत ऐसे लिखा है वा शुभ स्थान क स्थान में सुभ स्थान लिखते हैं अथवा पूज्य शब्द का पुज्य लिखा है तथा पक्ति २ कृपाळु शब्द को कृपाळु निधि शब्द को निधी प० ३ क्षमाका, पिमा, प० ४ कागज को कागद में का मे पूज्य शब्द को पूज्य महाराज शब्द को महाराज ७-८-९-१०—इत्यादि पक्तियों में स्थान, मुगद, पुष शब्द गमस्कार, हपगा, हेगो, इत्यादि अनक प्रकार की अशुद्धिये हैं प्रगट होता है कि महात्माजी संस्कृत हिंदी वा उर्दू भाषा के विद्वान् बनने की इच्छा से लिखना चाहते थे परंतु उक्त भाषाओं को ही उपालम्भ है जो बिना पढ़े महात्माजी के चक्षु में प्रवेष्ट न कर गई अर्थात् पत्र अशुद्धियों से अङ्कित कर दिया है और पद घोजना पत्र तो फटनाहो गया है धन्य है संयोगमतके उपाध्यायजी को किन्तु भाचार्यजी की विद्या का स्वरूप भ्रष्टजन ३४ के वर्ण के चौमास में दर्शन करेंगे ।

उष्ट्रणा विवाहहेतु रासभास्तत्रगायकाः ।
परस्परप्रशंसति अहोरूप महोध्वनि ॥

इसी ही न्याय से लोक महात्मा जी की स्तुति करते हैं।
इसर्थ पुन मात्माराम जी के जीवन चरित्र में लिखा है कि पूर
जी के शारंग्या पत्र माने से लाचार हाकर विद्वन्महादि साथ
हृदिमान्ता से विचार करके मन्वाला बीमाता जा रहे इत्यादि पाठक
गण ! यह किसी अवाकिक बात है कि श्रोत्र्य, महागज के पत्रों से
मन्वाला में बीमाम हुमा क्या विद्वन्महा जी के पत्र से सिद्ध होसका
है कि श्री महागज विद्वन्महा का पत्र मजने थे कदापि नहीं ! सो
अप विद्वन्महा जी क लिखे हुए पत्र का भी विचार लीजिये कि —

यदि उक्त पत्र विद्वन्महा जी न मन्वाला में हा लिखा हावेगा
और पत्र के लिखे अनुसार हा मन्वा हाग तब जा मात्माराम जी के
जीवनचरित्र में लिखा है कि—

जगत्प्राप्त में मात्माराम जी का विद्वन्महादि साथ मिल तब
विद्वन्महा जी ने कहा मात्मारामजी का हम सा भद्र ने सदा ही
साथ से मिले हुए हैं पाछा ने जवाई गजत है इत्यादि ।

यदि यह बचन विद्वन्महा जी का ही है तब विद्वन्महा जी न
मात्माराम जी के हा साथ प्रयत्न किया ।

जेकर विद्वन्महा जी न ऐसा न कहा हा तब जगत्प्राप्त के
लिखने वाले ने मन्वा लिखा है ! तथा मन्वाकरण में जेकर मात्मा
राम जी के साथ ही मिले हुए थे तब मन्वाला छापना स पत्र लिख
कर भीपत्र महागज की सेवा में मजने थे क्या भावदयता थी !
सो ह सादृगण !

जो पुरुष माया में ही प्रवीण है क्या य धर्म के परीक्षक मानते
ह कदापि नहीं !

सो इत्यादि कुत्सित विधि विद्वन्मन्त्र जी ने भाग्याराम जी से लीकी क्योंकि भाग्याराम जी ने विद्वन्मन्त्रादि साधुभा को भी अपने ही समान कर लिया ।

अपितु जब श्रीपूज्य महाराज जी को विद्वन्मन्त्र जी का लिखा हुआ पत्र मिला तब श्रीपूज्य महाराज ने द्रव्य क्षेत्र काळमाघ को देख कर उक्त पत्र का किञ्चित् भी उत्तर नहीं दिया पुन श्रीमहाराज ने १९२८ का चौमासा जोरे नगर में कर दिया ।

चतुर्मास में बहुत से भक्तजनों के संशय छेदन किये, अपितु बहुत संसारियों के लिये क्या उपाय धन सका है जब के गौशालाजी या खमाळीजी को भगवान् भी शिक्षा करने में असमर्थ होगये ।

सो चौमासा में बहुत ही घम्मोचत हुआ फिर श्रीपूज्य महाराज जी चौमासा क पदवात् अनुक्रम से विहार करते हुए मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष में लाला साबसिंह भोसवाळ जोहरी की बैठक में जगरावां शहर में विराजमान होगये । और श्रीस्वामी विलासराय जी महाराज श्री स्वामी पंज्य रामधरजी महाराज श्री स्वामी पंज्य मोती राम जी महाराज श्री स्वामी हीरालाल जी महाराज श्री स्वामी पं० धर्मचन्द्रजी महाराज श्रीस्वामी तपस्वी रामचन्द्र जी महाराज इत्यादि मुनि भी महाराजक संग थे और श्रीस्वामी रत्नचन्द्रजी महाराज स्वामी प्वाहरलाल जी भी स्वामी हीरालाल जी महाराज इत्यादि पांच साधु भारवाको भी श्रीपूज्य महाराज जी के दर्शमार्थे जगरावां शहर में ही भाये हुए थे । और तब ही विद्वन्मन्त्रादि साधु भी भम्बाला शहरसे विहार करके लुधियाने में आगये थे ।

तब इन्हीं ने सुना कि जगरावां शहर में श्रीपूज्य महाराज का भक्त्य बहुत से साधु एकत्र हुए हैं तब इन के चित्त में यह निश्चय हुआ कि जो हम सूत्रों से विरुद्धार्थ करते हैं वा श्रीपूज्य महाराज मंडी प्रचार से जान गये हैं तब हम का गच्छ से यात्रा करने के लिये ही एकत्र हुए हैं ।

सत्य है प्रतिहारक पुरुष अपनी माया को स्मृति करके भाव ही मय पाता है,' इसलिये जो हमारे पास सूत्र हैं वह सब माई छोड़ लेंगे इस वास्ते पुस्तकादि उपकरण लूधियाना में ही रख कर फिर भी पूज्य महाराज के दर्शन करें जब सर्व पुस्तकादि लूधियाना में ही रख कर विहार करके अगरावां शहर में ही भोपूज्य महाराज के दर्शन जा किये ।

फिर नम्रतादि करने लगे जब भोपूज्य महाराजजी ने सब साधु प्रकार करके कहा कि मैं इन विद्वत्पुत्रादि ब्रह्म साधुओं का भय गच्छ से पृथक् करता हूँ क्योंकि इन्हों का न ता चात्रि ही शुद्ध रहा है नाही दर्शन शुद्ध है इसी वास्ते यह बिचारे छल करत हैं अपने शप वापने के लिये अमर्य बोलने हैं जब भी थिलासरायजी महाराजने या मारवाडी मुनियों ने कहा कि सडे हुए साधु (पान) का रक्तमा किसो प्रकार भी अच्छा नहीं जाना इसी प्रकार यह विद्वत्पुत्रादि भी भ्रष्ट बोलते हैं या छल करने हैं और नाही इन्हों का चात्रि शुद्ध है नाहीं दर्शन सो इसी वास्ते इन को गच्छ से शीघ्र हो पारित करना चाहिये ॥

तब विद्वत्पुत्रादि भी बहुत ही नम्रता करने लगे और सर्व सिद्धों की शपथें ज्ञाने लगे पुन शपथ करके हुए गद्गद घापी बोलने लगे, और पुनः पुनः यह कहत हुए बदल करत ये हे भोपूज्य महाराजजी अब हमारा अपराध क्षमा करो फिर जा कुछ नाप पूरा करेंगे सोई हम मार्ग हम मूल गये हैं आप अब भवदय हो हमारा अपराध क्षमा करें ॥

तब भी पूज्य महाराज ने कृपा कृती कि तब बडे ही प्रपन्नी हो क्योंकि तुम लूधियाना में क्यों पुस्तकादि छाड़ कर भाये हो इन दिये सिद्ध होता है कि तुम्हारे मन में छत्र है भय मैं तुम को क्यापि

गड्ड में नहीं रखूंगा । क्योंकि तुम *भसत्य ही लिखते हो । भसत्यही
 षोलते हो । उस काठ में ही लाला दीकमराय, लाला राधामल्ल,
 जंगोरीमल्ल, गणपतिराय, शंकरदास, छम्भुमल्ल घोसुमल्ल इत्यादि
 भाई भी स्थित थे । सो उन्हो ने भी श्रीपूज्य महाराजजी से बहुतही
 विनम्रि करी कि श्री पूज्य महाराज जी भय इन पर क्षमा करो
 क्योंकि यह भय मूल गये हैं । तब श्री पूज्य महाराज जी ने कृपा
 करी कि हे भाइया यह विद्वन्मन्त्रादि महान् छल कर रहे हैं और
 इन का चरित्र या वर्णन कलंकित होगया है और भी इन का
 सर्व भाचार श्रीपूज्य महाराज ने जब भाईयों को सुनाया तब सर्व
 भाई कहने लगे कि हे महाराजजी अब इन को नितान्त मत रखो वसी
 ही समय श्री महाराज ने विद्वन्मन्त्रादि गण को अपने गड्ड से बाहर
 करदिया तब यह लाला सोबसिंह की पैठक से नीचे उतार गये
 जिनके नाम यह हैं । यथा :—

विद्वन्मन्त्र जी १, हुकमचन्द्र जी २, निहालचन्द्र जी ३, निधानमल्ल
 जी ४, सलामनरायजी ५, तुलसीरामजी ६, बनैयामल्लजी ७, चम्पालाल
 जी ८, कल्याणचन्द्रजी ९, हाकमचन्द्रजी १०, गुरदित्तामल्ल जी, ११,
 रत्नारामजी १२, जब यह जगरावा से दो वा तीनकोस के अनुमान बढे
 गये तब इनके मतमें न जाने क्या बात भाई फिर यह जगरावामें ही आ
 गये पुन श्रीमहाराज जी से बदल करते हुए विनम्रि करने लगे कि
 आप हमारा अपराध क्षमा करें और आ इच्छा हो वही प्रायश्चित दे
 दें हम आपको दास हैं अपितु यह कथन भी इनका छल ही का था
 क्योंकि इनकी इच्छा और भी कतिपय मध्य जीवों को सन्मार्ग से

* बहुत से पत्र विद्वन्मन्त्रादि साधुओं ने भाईन की शपथें खा
 कर श्रीमहाराज को लिखकर दिये थे ।

शाक हे प्रमाद से वह पत्र डिग्न निग्न हागये ।

पराङ्मुख करने की थी। किन्तु भीपूज्य महाराज जी ने तनक उतर
कथा को फिर भी न स्वीकार लिया और भीमहाराज ने फिर भी
यही कृपा की कि हम का सुम्हारे वचनों की प्रतीति नहीं है और
भसत्यपादो दीक्षा के भी भयान्तर दान है सो हमने सुत्रानुसार काम
किया है अब भीपूज्य महाराज ने इनका अच्छा न रचना माहो स्वी
कार किया तब यह निराशय हाकर लुभियाना न ही भागये। तिस
काल में आत्माराम जी आसम्भर में थे तब विद्वन्मित्रादि साधुभावा
रामजी को आसम्भर में ही आ मिल फिर इन्होंने सोचा कि उद्भर भाने
के लिये कोई उपाय करना चाहिये जो कि आत्मारामजीके ही जीवन
चरित्र से सिद्ध है जैसे कि जायन चरित्र के पृष्ठ ५६ पे पर आमा
राम जी कहते हैं कि यदि तुम का इस देश में विधरना होय तो जोर
लगा कर शहरों शहर भावक भीग तामों मामने फिर क शुद्ध भद्रान
का उपदेश करके भावक समुदाय बनाओ क्योंकि बिना भावक
समुदाय के इस पण्यमन्त्राल में सयम का पालना कठिन है इत्यादि
फिर यह कहत हैं कि, -

प्रायः सषष्ठी स्त्रियों में पैर रखन जितना ठिकाना हमने कर रखा है
इस देश को हम कदापि न छोड़ेंगे इत्यादि कथन से उद्भर पापण उगाय
विचार कर लिया किन्तु जब स भी पूज्य महाराज ने इनका अपने
गच्छ से वापस किया तब पदव्यात् प्रायः काह भी मन्त्र इनके समस्त
पदेश में नहीं फला किन्तु जो प्रथम ही अपने भगवन्त कर रखे थे यह
भी किन्तुमेक सम्मान में भागये। भवित जालघर से विद्वन्मित्रादि
प्रस्यन्त्रिणि मित्राजाल विद्वाने वास्तं उद्यम दुर ॥

फिर यह जंघ न पट्टन गये भार घौमामा भी वही दा किया किन्तु
जय साहा गुरुशाह भद्रेशाह, जंकरदास, गणेशदास, निहालशाह,
सोतेशाह इत्यादि भाईयों व सम्मुख निज आशय प्रकाशित करने लगे
तब किसी ने भी इनके भसत्योपदेश को न स्वीकार किया।

अपितु लाला रणजीतसिंह ने जबू में पधार कर विदमर्चद्रावि के साथ प्रश्नोत्तर कर के तिन को निदतर क्रिया सा उस काल का स्वरूप विदमर्चद्रावि ही जानते थे इस ही प्रकार प्रायः अन्य नगरों में भी इनके साथ यही यत्नाव हाता रहा । और श्रीपूज्य महाराज के गच्छ में रहने वाले श्री धीरशासन के मुनि इन की स्वकपोल कल्पित बातों को असत्य करके दिखाने लग चाँसाधिये भी यथाशक्ति इनके असत्यापदेश की सूत्रों द्वारा समालोचना करके भण्यजीधों को दिखाने लगी अपितु श्री महाराज ने १९२९ का धौमासा पटियाळा नगर में ही कर दिया ।

तब ही लाला बसोराम नामे वाला ला० विशुराम (धीकृष्णदास) पटियाळे वाले इत्यादि पट्टनसे सद्गृहस्थाने स्व सम्मत्यनुकूल पंडित शंभूनाथ को एक पत्र देकर प्रायः पञ्जाब देश में यह प्रगट कर दिया कि यह विदमर्चद्रावि वेषधारी जिनाया स विरुद्ध उपदेश करते हैं और विरुद्ध ही इन का चारित्र्य हो रहा है सो यदि यह किसी भी भण्य को मिठयाउपदेश देयें सो यह उपदेश मानने योग्य नहीं है तथा किसी के मन में कोई भी शंका हो वह सूत्रों द्वारा निणय कर लेये और इन का भाचार व्यवहार जैन मतानुकूल नहीं रहा है अब ऐसे कथन को पण्डित जी ने नगर नगर ग्राम ग्राम में प्रसिद्ध कर दिया तब लोगों ने उस ब्राह्मण को यह उत्तर दिया कि पंडित जी हमने तो प्रथम ही इस बात को विचारा हुआ है सो कह्यों ने पत्रोपरि लिखितादि भी कर दी ॥

* भीमजी भार्या पार्यती जी ने भी सवेगियों को बहुत ही सुन्दर उत्तर दिये हैं कई स्थान पर इन को पराजय भी किया है ब्रानदीपिकादि कई सुन्दर पुस्तक भा लिखे हैं देखो इन का जीवन चरित्र उर्दू भाषा में जो छपा हुआ है ॥

अब पाठकगण विचारें कि यदि आत्माराम जी का वा बिस्र धर्मादि द्रव्य लिहियों का सत्योपदेश था फिर क्यों न किसी को सत्य पथ पर लाये किन्तु जिन को प्रथम ही अपने मतानुसार कर रखा था उनको हठ त्यागना मुष्कर होगया । अब बतलाइये आत्माराम जी ने चार वर्णों में से किस को जैनधर्मी बनाया ?

फिर श्रीपूज्य महाराज श्रीमान् के पश्चात् देश में अपने सत्योपदेश द्वारा समोच्छेदन करते हुए विचरने लगे । और इसी प्रकार श्री स्वामी जीवनराम जी महाराज ने भी * चूडचऊ नामक ग्राम में आत्माराम जी को अपने गच्छ से पृथक् किया तब आत्माराम जी बहुत ही खदग करने लगे तब श्री जीवनरामजी महाराज ने कृपा करी कि अब क्यों इतना रोता है तुमका तो अब अब मैं खदग करता पड़गा शपित में तुम को अब गच्छ में कहाँ न रुकूँगा । तब आत्माराम जी ने स्वामिप्रहारात्कूल यह काम किया कि एक पत्र लिखकर श्री स्वामी जीवनराम जी महाराज परे दे दिया । भीर साय ही यह कह दिया कि यदि कोई भाप से पूछे कि आत्माराम का भापने क्यों गच्छ से घाछ कर दिया तब भापने यह मेरा लिखा हुआ पत्र दिखला देना । स्वामी जी महाराज महान् मन्त्र पुरष थे उन्हों ने इस बात को स्वीकार करके आत्मारामजी से पत्र ल लिया तब हम भी उस पत्र को नकल भव्य जीशों के दिखाने चाहते इस स्थान पर लिख देते हैं यथा वचम् ।

श्री जीवनरामजी की भयदा भाराघना आदर्शांग की करके मोक्ष में जाये हे श्री जी श्रीगंभी जी में सूर्या के नाम है सा सूर्य भगवान्

*यह चूडचऊ ग्राम पञ्जाब देश के फीरोजपुर जिले में जीरे नगर से पाँच बीघा के अंतर पर बसता है ।

के घणाय हुई नहीं आचार्य के घणाय हुए हैं सो सब सच्चे नहीं आपनी मत कल्पना से मेल समेल करके घणाय है ।

और जो वस्तुमान में ग्यारा अंग है इण में भी मेल समेल करघा हुआ है यह अज्ञान श्री जीवनराम का ॥

वृत्तिसूत्र परंताली सूत्र खीराली सूत्र तथा १४००० हजार ए सर्व मत कल्पना के घणाय हुए हैं भगवान की वाणी नहीं ।

भारतभना द्वावशांगी करके मोक्ष जाये हैं और भीनंदीजी में जितन सूत्रों के नाम हैं सो सब सच्चे हैं । और जो पिछले आचार्य प्रमाणी का के घणाय हुए जो भ्रम हैं सो झूठे नहीं हैं यह अज्ञान आत्माराम की है इति ।

यह पत्र लिखकर आत्मारामजी ने श्रीस्वामी जीवनराम जी महाराज को द्रविया और श्रीमहाराज ने आत्माराम को गच्छ से निगम करके १९२९ का चौमासा फिरोजपुरमें ही करदिया पाठकगण आत्मारामजी की विद्याको भी देख लें । सो अनुमान कार्तिक मासमें छाला रणजीनसिंह जी भी फिरोजपुर में ही भागये तब श्री जीवनराम जी महाराज ने वह पत्र आत्मारामजी का लिखा हुआ श्रीमान् भावकजी को दिखला दिया तो उस ने कहा कि आत्माराम जी ने आप के साथ प्रपञ्च किया है क्योंकि जो कुछ आत्मारामजी ने आपकी अज्ञा विषय लेख लिखा है सो क्या वह लेख आप को सम्मत् है तब स्वामी जी महाराज ने कृपा करी कि मुझे तो उक्त लेख प्रमाण नहीं है और नाहीं मेरा उक्त कथनानुसार अज्ञान है तब श्रीमान् ने कहा कि जो कुछ आपका मन्तव्यार्मतव्य है सो वह इस पत्र पर ही लिखें क्योंकि जो इस पत्र को पढ़ेगा उसको आपका अज्ञान या आत्माराम जी का अज्ञान विदित हो जावेगा तब स्वामी जी ने उक्त पत्रोपरि ही यह लेख लिख दिया ॥ देखिये ,—

भय पाठकगण विचारें कि यदि आत्माराम जी का वा विद्वत् चद्रादि द्रव्य लिखियों का सत्योपदेश था फिर क्यों न किसी को सत्य पथ पर लाये किन्तु जिन को प्रथम ही अपने मतानुसार कर रखा था उनको हठ त्यागना मुश्किल होगया । अब पतलाइये आत्माराम जी ने चार वर्णों में से किस को जैन धर्मी बनाया ?

फिर श्रीपूज्य महाराज चौमासा के पश्चात् देश में अपने सत्योपदेश द्वारा जमोठछेदन करते हुए विचरने लगे । और इसी प्रकार श्री स्वामी जीधनराम जी महाराज ने भी * चूडचक्क नामक ग्राम में आत्माराम जी को अपने गच्छ से पृथक् किया तब आत्माराम जी बहुत ही खदन करने लगे तब श्री जीधनरामजी महाराज ने कृपा करी कि अब क्यों इतना रोता है तुमको तो भव भव में खदन करना पड़ेगा अपितु मैं तुम को अब गच्छ में कदापि न रहूंगा । तब आत्माराम जी ने स्वामिप्रकृत्यानुकूल यह काम किया कि एक पत्र लिखकर श्री स्वामी जीधनराम जी महाराज को दे दिया । और साथ ही यह कह दिया कि यदि कोई भाप से पूछे कि आत्माराम का भापने क्यों गच्छ से घास कर दिया तब भापने यह मेरा लिखा हुआ पत्र दिखा देगा । स्वामी जी महाराज महान् मद्द पुरुष थे उन्होंने ने इस बात को स्वीकार करके आत्मारामजी से पत्र ले लिया अब हम भी उस पत्र को नकल भूष्य जीशों को दिखाने वास्ते इस स्थान पर लिख देते हैं यथा पत्रम् ।

श्री जीधनरामजी को भय आराधना द्वादशांग की करके मोक्ष में जाये है और जो श्रीनंदी जी में सूत्रों के नाम है सो सूत्र भगवान

* यह चूडचक्क ग्राम पंजाब देश के फीरोज़पुर जिले में जीरे मगर से पाँच कोश के अंतर पर बसता है ।

के घनाय हुई नहीं आचार्य के घनाय हुए हैं सो सर्व सच्चे नहीं आपनी मत कल्पना से मेल समेल करके घनाय है ।

और जो वत्तमान में ग्यारा अंग है इण में भी मेल समेल करघा हुआ है यह अख्यान श्री जीवनराम का ॥

घसीसूत्र परंताली सूत्र खौराखी सूत्र तथा १४००० इस्वार ए सर्व मत कल्पना के घनाय हुए हैं भगवान की वाणी नहीं ।

भारापना द्वादशांगी करके भास जावे है और भीमदीजी में जितन सूत्रों के नाम हैं सो सब सच्चे हैं । और जो पिछले आचार्य प्रमाणी का के घनाय हुए जो प्रय हैं सो झूठे नहीं हैं यह अख्यान आत्माराम की है इति ।

यह पत्र लिखकर आत्मारामजी ने श्रीस्वामी जीवनराम जी महाराज को द दिया और श्रीमहाराज ने आत्माराम को गच्छ से निम्न करके १९२९ का श्रीमासा फिरोजपुरमें ही कर दिया पाठकगण आत्मारामजी की विद्याको भी देख लें । सो भनुमान कार्तिक मासमें छाला रणजीतसिंह जी भी फिरोजपुर में ही आगये तब श्री जीवनराम जी महाराज ने वह पत्र आत्मारामजी का लिखा हुआ श्रीमान् आधकजी को दिखला दिया तो उस ने कहा कि आत्माराम जी ने आप के साथ प्रपञ्च किया है क्योंकि जो कुछ आत्मारामजी ने आपकी अद्भुत विषय लेख लिखा है तो क्या वह लेख आप को सम्मत् है तब स्वामी जी महाराज ने कृपा करी कि मुझे तो उक्त लेख प्रमाण नहीं है और नहीं मेरा उक्त कथनानुसार अख्यान है तब श्रीमान् ने कहा कि जो कुछ आपका मन्तव्यार्मतव्य है सो वह इस पत्र पर ही लिखें क्योंकि जो इस पत्र को पढ़ेगा उसको आपका अख्यान वा आत्माराम जी का अख्यान विदित हो जावेगा तब स्वामी जी ने उक्त पत्रोपरि ही यह लेख लिख दिया ॥ देखिये ,—

३२ सूत्र परमुक्त सर्वमत कथना के बजाय हुए हैं पं. उपर भी लिखत भुला कर लिखी सो नहीं परमाण विचतमात्र वि प सरपत्र परपण करि हो से सब मिच्छामिदु० २ घोखे स०, १९२० कार्तिकसु० ११-१२ भगवती भगवान कोषलीहानी के पक्षे सर्व तहत प्रमाण को गणपर देखावेध द्युत कोषली के कहे सब सासत्रधार १ परमाण है ! हिंसा धर्म का सासत्र परमाण नहीं व० जीवणराम साधू के फीरोज़पुर में।

प्रियवरो ! जैसे उक्त पत्र में लेख हैं वैसे ही हमने भी लिख दिख छाये हैं ! अब देखिये अब भी जीवणराम जी महाराज स्वयम् लिखते हैं कि —

ऊपर की लिखत भुला कर लिखी इत्यादि अब पाठकगण ! स्वयम् विचारेंगे कि भास्मारामजी के जीवन चरित्र में लिखा है कि जीवन राम जी को झमाळिया अब पाठकगण विचारें कि श्रीजीवणरामजी को किसने झमाया प्रियवरो ! अवश्य हो कहना पड़ेगा भास्मारामजी ने।

अपितु श्रीपूज्य महाराज नगर २ भाग २ से मिथ्या मत का नाश करते हुए जालंधर नगर में पधार गये।

सो यहाँ ही १९३० भाषाख शुक्र ५ मी को स्वामी हरनामदास जी वा स्वामी गार्गिकरामजी वा स्वामी वधाधाराम जी को दीक्षा दे करके १९३० का खोमासा इशियारपुर में आ किया।

सो बहुत से भव्य जीवों का मिथ्या मार्ग से मुक्त करके जिन धर्म का उद्योग करते हुए खोमासे के पश्चात् अनुक्रम से विहार करके लुधियाना में पधार गये अब लुधियाना में लाला अद्वयमल्ल लाला मयलीमल्ल लाला अद्वयमल्ल लाला गारोमल्ल इत्यादि सुधायकों ने शुरु औनधर्म में रुढ़ होकर अनधर्म का बहुत ही उद्योग किया फिर श्रीपूज्य महाराज ने भदौड़ शहर की ओर विहार कर दिया।

क्योंकि तिस समय भदौड़ शहर में तपस्वी सेनकरामजी महा

राज ने ठपस्या की हुई थी जब, श्री महाराज मदीह शहर में पधारे तब भाईयों की भतीष विष्णुसिंके प्रयाग से १९३१ का चौमासा मदीह में ही कर दिया सो चौमासा में धर्मोद्योत बहुत ही हुआ चौमासे के पश्चात् श्री महाराज विचरते हुए मध्य जनों के स्थाय छेदन करते हुओं ने १९३२ *का चौमासा नामा नगर में कर दिया सो नामे नगर के वासी मोसवाळ वा वैश्य लोगों ने धर्मोद्योत बहुत ही किया और इस चौमासा में लोगों ने ज्ञान भी मसीध सीखा ।

अब पाठक जनों को यह आकांक्षा भी भवश्य होवेगी कि जब श्री पूज्य महाराज ने विद्वन्महादिभों को अपने गच्छ से निम्न किया था और श्री लीधनराम जी महाराज ने आत्मारामजी को स्व'गच्छ से पूषक् किया था तो फिर वह किस महारमाके शिष्य बनें और उस महारमा के पूर्यज महारमा कैसे थे सो पाठकों के सवेह छेदनार्थ हम इस बात के निषयार्थ स्व छेजनी को आरुढ़ करते हैं ।

प्रिय मित्रवरो ! जब आत्मारामजी वा विद्वन्महादि सवद्रव्य लिङ्गी सुधर्मगच्छ से पूषक् किये गये फिर इन का अनुचित उपदेश प्रायः किसी भी मठपने न ग्रहण किया किन्तु इन को ही लोक गुरु होन कहने लग गये फिर इन्होंने अनुमान १९३२ में भगवान् वर्द्धमान स्वामी का लिङ्गपरितन कर दिया और शहर अहमदाबाद में पदोष गये फिर वहां पर पुत्रि यिजय को गुरु धारण किया जोकि पूर्य सुधर्म गच्छ से निकलकर तपागच्छमें गया था जिसका नाम बूटेरायजी था ।

व्यान रहे रलारागजी ? गरुद्विस्तामवल जी ? वा इनसे प्रथमही पूषक् हो चुके थे ।

किन्तु जा अहमदाबाद में पदोष गये थे उन्होंने तपाग छ का पाससेप लिया था ।

* श्रीपूज्य महाराज ने इसी सम्प्रसार में गच्छ को उन्मार्थें सम यामुकूल ३२ अङ्क लिखे थे जोकि अद्यापि पर्यस्त गच्छ में प्रसलित हैं ।

अथ हम पीताम्बर मतका किम्बिधत् वृत्तांतचतुर्थस्तुति निर्णय
वाकोद्धार से लिखते हैं ।

सज्जन जनो ! चतुर्थ स्तुतिनिर्णय वाकोद्धार प्रस्तावना पृष्ठ
५४ पंक्ति १४ वीं से देखिये —

हृये तमारे भावक लोकों ने विचार करघो जोईये के भारमाराम जीनी
ब्रीझी पीढी थी चोपी पीढी वाला वन्नों परिग्रह भसंयम तो सर्व
सधर्मा प्रखिखेने जैन छाखाना भमिप्राय थी तो एमनी सर्व पेढीयो
असयमी सिद्ध थायछे केमके भारमाराम जी भानंद बिजय आ ए पो
तानी बनावेछी पूजामा शुद्ध भायछि लखीछे ते पढ़यीछ ।

सत्य विजय १ कपूर विजय २ क्षमा विजय ३ जिन विजय ४ उत्तम
विजय ५ पद्मविजय ६ रूप विजय ७ कीर्ति विजय ८ कस्तूर विजय ९
मणि विजय १० बुद्धि विजय ११ मुक्ति विजय १२ तस लघुघाता
भानंद विजय एतर्व पेढीया धो गच्छाचार बोलपत्र प्रमुखप्रयोग ना
भमिप्रायथी अने जैन ढिंग धो विद्वद सिद्धयाय छे केमके ते प्रयोगां
एलियांवर तथा पित्त प्रमुख रंगेला बख धारवा वाला ने शुद्ध गच्छ
भाचार्य भाग्या रहिन जन ढिंग थी बिराधि कछाछेने प्रथम एमनी
पेढीमां श्री सत्य विजय जीपभासे शुद्ध माया विना एलियांवर करवा
ने एयाट पछी केदछोक पेढी वाला पकाधिया करवा नेपछीतो फटक
रंगेला केशरी या कट्यां ते वर्तमानमां बसें छे तथा जैन प्रथमां तो
भाचार्य सपाधपायनी मिधायविना माभुकग्रामघोने भारमारामजी पोते
तथा तेमनी पेढी वाला धो तपागच्छन नामधरायोने धो तपागच्छना
भाचार्यो ने शिथिल भसयमी आणो तेमनी भाषामां प्रवर्तता न थी
ने गणीप्रमुख पदवी पोतानी मेले धारण करेछे पण धो अंगखूमिया
प्रमुख जैन सूत्रोमां गुरुगच्छ भाचार्य विना पोतानी मेले गणी प्रमुख
पदवी धारवा वाला ने महा मिधयात्व दृष्टि दुर्गाराधक पार्श्व मतियो
ने दृष्टिये पण देख वा यज्याछे ने भारमारामजी भानंद बिजय जीनी

गुरु पर परा मां अद्यापि जुभी कोई आचार्य्य उपाध्याय धया नथी
तो पणकोई संयमी गुरुगठ्ठा चार्य पासे उपसंपदा चार्य पदवासक्षेप
कराया बिना अर्थात् नवीद्विस्ताने आचार्य पद वासक्षेप कराया बिना
अनेपालीनाणामां कोई संयमी आचार्य ने संघे आचार्य पदवी दी
धादिना पोताना दृष्टिरागी घाणियाठ मा धीधेछो आचार्य पदस्वीकार
करी पोताना । करेछा प्रश्नोत्तरात्म प्रथमा ३१४ मा पृष्ठमा छपा
भ्युछेके पालीताने में * चार प्रकार महा सधके समुदाय ने आचार्य
पद दत्त ।

* चर्चा चन्द्रोदय भागतीसरेके पृष्ठ ३० पक्ति ५ पर लिखा
है कि प्रश्न ? तुम आत्माराम जीके नाम के साथ में सूरिस्वरपद देख
कर कबों जलते हो अनुमान होता है तुमको उनसे कुछ हेय नाथ है ।

उत्तर—मित्रवर हम जलते भी नहीं हैं और हमको उन से कुछ
हेयमाय भी नहीं परंतु वरित्री का नाम लक्ष्मीपति रखना युक्त नहीं
उपहास्य होता है ।

प्रश्न—कदा आत्माराम जी को सकल श्री सधन सूरिपद नहीं
दिया है (उत्तर) सधत (१९४३) में आत्मारामजी ने पालिताने में
बीमासाकिया और कात्तिक शुक्ल १५ को शत्रुजय तीर्थ की साजा
को अनेक भावक आते ही हैं । उनमेंसे दो चार शहर के रहने वालों
ने जो आत्माराम जीके रागी थे) आत्मारामजी से कहा हम आपका
आचार्य पदवी देना चाहते हैं आत्मारामजीने न मालूम क्या काम जाल
कर इस बात को स्वीकार करलिया और मनमें फूलगये इतना भी नहीं
कहा कि ? हमारे घड़े गुरुमाई गणि जो भी मूलध्वजी महाराज तथा
भी धृतिध्व जी महाराज से इस बात में सलाह और भाषा लेना
चाहिये दूसरे दिन आपकों ने शोठ नरसिंह केशव जी की धर्म शाला
में एक मकान सजा कर आत्माराम जीको पाट पर बैठा दिया और
कितामेक भावकों ने इकट्ठा हो कर अंभापण किया कि मादकद्वारत

नाम विजयानन्द सूरि अपर प्रसिद्ध नाम आत्माराम मुनि इत्यादि
पोतानी आचार्य पदधरायो आत्मारामजी ने नरक निगोइया कारा
गारमां पदवानो इच्छा करयो न ओइये ॥

माटे आत्माराम जाना दितने घास्ने तमने कहिये छीयके ओ

भूमि आचार्य पदसे हीन हो गई सबकी सलाह हो तो श्री आत्माराम
जीका इस पदसे विमूर्षित करे कितनेक आचर्योंने तर्ककी कि महाराज
पर आचार्य पद का घात श्रेय कौन करेगा । घास श्रेय करने वाला
साधु होना चाहिये जा महाराज से दोषा में बड़ा हावे आचार्य पद
मिले पोछे महाराज जी गण्य जीओ मूलवन्द जी महाराज तथा
बुद्धि चन्द्रजी महाराज को पदना करेंगे वा नहीं ? करेंगे तो आचार्य
पद की म्यनता होगी भार नहीं करेंगे तो परस्पर विरोध होवेगा
इस बात को सोच ला कितनेक आचर्योंने कहा कि सोच लिया है
जो कार्य करने को आपलोग इकठे हुए हँ इसको करना हो मुनासिब
है वस इतने में मरुस और बडावे को कितनेक आचर्योंने जा आत्मा
राम जी के मान्य आचर्य गिन जाते हैं ? ऊंचे स्वर से कहदिया कि
बोडो श्री सूरिस्वर महाराज की जय न कितो से घासश्रेय किया
न कुछ किया अनुष्ठान किया आत्माराम जी उस दिन से अपने
भापको सूरिमानने लगे शिष्यवर्ग से कहदिया आजसे हम का सूरि-
छिन्ना करो हम कहते हैं जंगल में मोर गावा किसने देखा ? इत्यादि
कथन उक्त पुस्तक में हैं अपितु उक्त पुस्तक साधुमागियों की विरचित
नहीं है शोक है आत्माराम जीके जीवन चरित्रमें लिखा है कि ३५०००
सहस्र मनुष्य में सूरिपद आत्माराम जी ने प्राप्त किया सो हम
पूछते हैं । आचार्य पदसाधु देखके हँ या गृहस्थी और क्या विधिक्या
धर्जन है और किस गच्छ के आत्माराम जी आचार्य बनाये गये क्योंकि
आत्माराम जी के गुरु के ध्येत वरत्र थे और आत्माराम जी के पीत,
अर्थात् पोछे मरुस इत्यर्थः ॥

મામારામ જી મન્મોહ હાય તો એમ મનેથી એમ શાસ્ત્રોના શ્યાયવી શ્રોજી ધૌધી પેઢી ઘાલા શ્રી પ્રમોદ વિજય જી ના ગુરુ ને સંજમો । જાણી તથા સાધુ સમાચારી પોતાની પરંપરામાં સર્વથા ઉચ્છિન્ન ન થઈ તો પણ શ્રીગુરુ માસાપ ક્રિયાવત સંયમી ગુરુનો હાથે વિક્ષા પ્રમુખ સાધુ સમાચારી તથા ગુરુ પરંપરાય આવેલો મહાસઘ સમસ્ત શ્રી ગુરુ ઘોષેલી માધાર્ય પદ્ધતિના ધારક શ્રી વિજેયરાજેન્દ્ર સૂરિજી ને સયમો જાણીતેમની પાસેઉપસપદ્ મર્યાત્ નથી દીક્ષા પ્રદાન કરતે ક્રિયા ઉદ્ધાર કર્યો તેમ એમને પણ સયમી મુનીની પાસે ચારિત્રોવ સંપત્ મર્યાત્ દીક્ષા છેત્રી જોઈએ કેમ કે કરી દીક્ષા છેવી થી એક તો કુલિંગપના નુ કલકટલી અમીમાન વેગ લોપઈ અશે ને લીમુ પોતે સાધુ નથી તો પળમમે સાધુ છીએ એવું લોકોને કહે થુ પડે છે ॥

તદ્ રૂપ મિથ્યા ભાષણ દુષણ થી યચી જસે ? મને શ્રોજી એ કોઈ મોછા આવકાદમ ને સાધુ કરીને માને છે તે આવકા નુ મિથ્યાત્વ પણ વેગલુ થઈ અશે શ્યાયિ થઈ ગુણ ઉત્પન્ન થશે માટે જો મામારામ જી માર્ગદર્શિત્યજી આત્માર્થો છે તોય મમાર્થ કહેવ પરમોપકારરૂપ જાણી ને અગીકાર કર્યો તથા માધાર્યપદ્ લેવાની લાંછા હાય તો મામારામ જી ને ઉચિત છે કે પ્રથમ કોઈ પરંપરાગત સયમી આવકાદ વેલીને તથા જંબુ મમ પરંપરાય પોસદ સાલાય પમાય ચરિત્રાપ કે મહાણુ માગસુ રિણોગણ પોઢગ ધારગા સંયમે સુવદ્ધતા ? શ્યાયિ શ્રીમગ સૂઝિયા પ્રમુખ એમ સુમોતી માહાના ધારક શ્રીસુધર્મ પરંપરાય પોપઘસાલા પ્રમુખ પરિપ્રદ પ્રમાદ છોડીને મર્યાત્ શિષિલા ચારપણુ મુક્તી ને ક્રિયા ઉદ્ધારના કરવા લાલા એવા કોઈ મહાણુ માગસૂરિ માધાર્ય શ્રી રતેમની પાસે દીક્ષા છેઈ માધાર્ય પરધારણ કરે તો માગમનો મગ રૂપ દુષણ થી યચીજાય અનેએમ ને માધાર્યમાનવા લાલા શ્યાયિતેનુ મિથ્યાત્વ પણ વેગ લુપઈજય ને નરકનિગોદ રૂપો કારાગારની મોજમાન ધાનો મવવળ દલી જાય કેમકે અમાચારીને સાધુ તથા મનાધાર્યને માધાર્યમાન થો એમ

हाहु मिथ्यात्व छे वही परंपरागत सयमी गुरु भाचार्यनी पासे चारित्र्योप
संपदा चार्यपद भर्थात् दीक्षा भने भाचार्य पद लीधाविना कदापि जैन
शास्त्रमा साधू पणु तथा भाचार्य पणुमान्य करुच न र्थी ॥

माटे सयमी गुरु तथा भाचार्यनी पासे संयम छेईवे साधू पणु
तथा भाचार्य पणु भात्माराम जी ने धारण करुच ओरयेने पूर्वोक्त
रीतो थी साधू पणु तथा भाचार्य पणु धारण नहीं करवो तो जैनमत
ना शास्त्रों नी अस्सा वाला पम ने जैनमत ना साधू तथा भाचार्य
केवी एते परमाण करो भगीकार करवो ! इत्यादि तथा उक्त ही
पुस्तक के पृष्ठ २९ पर लिखा है कि पहिले भात्मारामजी ध्यानकपयो
हुदिया था नेप छी स्वलिङ्ग थोमहावीर स्वामिना यति ना स्पेत मानो
पेत कपडामो छोडीने मन्थलिङ्ग पीताम्बर भयतिनो ग्रहण करवो
परन्तु कोई सयमी गुरु नीपासे चारित्र्योप सपत् भर्थात् फरीने दिक्षा
लीधी नहीं भने जैनी पासे दिक्षा ग्रहण कर वानु कहे छे तेपमना गुद
पाते मुख कहता के में संयमी नहीं हूँ ! तथा पीताम्बर मणिविज्रपादिक
नी गुरु परंपरातो बहुत पेढीया थी संयम रहित हतो तो फरी भसंपत्ती
नी पासे दीक्षा छेईने उव संपद ग्रहण करवोए जिनमत ना शास्त्रोर्था
विरुद्ध इत्यादि तथा पृष्ठ २९ परापरि लिखा है कि कारणके सोमाग
विज्रयजी तो जेम श्रीरूप विज्रयजीए रूपसी पद्मनी नामनी हुंड़ियो
बलावी तेम सोमाग विज्रयजी पणहुंड़ियो बलावता तथा भसयम
प्रवृत्ति श्री गुर्जर मारचारड देशना सर्व संयमा प्रसिद्ध छे इत्यादि
तथा पृष्ठ ३१ पर लिखा है कि श्री घूटेराय जीए सर्वसंयमी नामधारी
ने पुगुरु समसी तेमनो लिंग त्यागन करो इवेत कपडा धारण करी
इत्यादि तथा पृष्ठ २७ पर लिखाहै कि भात्माराम जी भामदविज्रयजी
सो विद्वान् पणामो भनिमाम धारण करी दुदकमत माघी नीकलीने
वृलिंग पणुधारण करघुपणकोइ सयमीगुरु देखी तेमनी पासे उवसंपद
नयो दिक्षालीचो नही इत्यादि ॥

पाठकगण ! एक लेख आत्माराम जी के ही गच्छका है सो
 यं विचार करें कि आत्माराम जी श्री भगवान् वर्तमान स्वामी
 उपादन किया साधु धर्म वा लिङ्ग छोड़ करके परिग्रह धारियों
 शिष्य बने जो कि समय से रहित धन से विमूषित हुडियां
 ये पाठकगण क्या जाने आत्मारामजी ने इनके धन को ही देख
 विचार लिया हो कि यही भगवान् के शासन के हैं ।

क्योंकि इनके पास धन बहुत है सो भगवान् भी ससार पक्ष
 पुत्र होने से बड़े ही घनाढ्य ये शोक !!! शेष समीक्षा इनके
 पाठकों पर छोड़ते हैं ।

क्योंकि अधिक समालोचना में विस्तार का मय है सो यह तो
 गलत जान ही गये होंगे कि आत्माराम जी समयवृत्ती त्याग कर
 ह धारियों के शिष्य हुए और न तो कोई उनके गच्छ में
 यं ही हुआ है नाही उपाध्याय सत्य है जब संयम ही नहीं है तो
 आचार्य कहाँ से होवे ।

किन्तु श्री पूज्य महाराज का १९३२ का चौमासा नामे शहर में
 दिने पूर्ण होगया श्री महाराज चौमासा के पश्चात् पिहार
 ते देश में जय विजय करने लगे ।

फिर श्री पूज्य महाराज ने मालेरकोटला, रामपुरा, लुधियाना
 र, फगवाड़ा, जालंधर, कपूरथला, गुरुका अंझियाछादि नगरों में
 घोंट करके लाला हरनामधाम सतलाल गोसवाल की बैठक में
 १३ का चौमास कर दिया ।

चौमासा में धार्मिक कार्य बहुत से हुए और चौमासा में दो
 : पक्ष धर्म के प्रकाशक पञ्चस्योपशमता के कारण से वैराग्य
 र को प्राप्त होते हुए अमृतसर में ही भागये जैसे कि—श्री वृद्धो
 जी, १ श्रीशिवपालजी, २ श्री सोहनलालजी, ३ श्री गणपतिराय

जी, ४ सो श्री वृद्धोरायजी पसरूर के वासी और श्री शिवदासजी रोहतास के वसने हारे और श्री सोहनलालजी समझवाले के वसने वाले श्री गणपतिरायजी पसरूर के रहने वाले तिन्होंने श्रीपूज्य महाराज के पास दीक्षा के वास्त विधिपति की श्री महाराज ने विधिपति को स्वीकार करके १९५३ मार्ग शीर्ष शुक्ल पञ्चमी चंद्रवार के दिन चारों को ही दीक्षित किया।

फिर श्रीमहाराजने वृद्धोरायजी* को श्री ज्येष्ठमन्त्री महाराज के शिष्य कर दिये और आशिवदासजी महाराज वा श्री सोहनलाल जी श्री धर्मचन्द्र जी महाराज के शिष्य कर दिये श्रीगणपतिरायजी महाराज श्री मोतीरामजी महाराज के शिष्य किये गये।

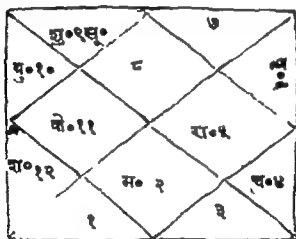
जिन में से श्री सोहनलाल जी महाराज ने विद्याभ्ययन करके थोड़े ही काल में संयोगमत का पराजय किया स्वामी जी महाराज को युक्ति के समुच्च भारमारामजी खड़े नहीं हाते थे और जिन्होंने बहुत से भयभीतों की मिथ्यात्व को नष्ट करके पुनः उनको सम्भवत्व में स्थिर किया है आज दिन सुधर्म स्वामी के ८९ वें पट्टोपरि विराजमान हैं सूर्य समान प्रकाश कर रहे हैं।

*प्रथम श्रीवृद्धोराय जी को श्रीपूज्य मोतीरामजी महाराज को निभाय किया था भण्डु श्री महाराज ने स्वीकार नहीं किया फिर श्री ज्येष्ठमन्त्री महाराज का शिष्य किया गया।

† श्री गणपति यद्यमान स्वामी के ८९ पट्टोपरि विराजमान श्रीपूज्य सोहनलालजी महाराज हैं जिन्होंने संयोगमत का शास्त्र द्वारा काट कर पराजय किया है जिनका स्वरूप आगे लिखा जायगा।

अपितु श्री पूज्य महाराज (श्री सोहनलालजी) का जन्म सम्यत् १९०६ भाद्र मास कृष्ण पक्ष प्रतिपदा स्यालकोट के जिलामें समझयाल नामक नगर के लाला मथुरादासजी की धर्म पत्नी माई रुक्मीदेवी के कुक्षसे हुआ है देखिये! जन्म कुण्डली तथा भाषार्य धर्म श्रीपूज्य सोहन लालजी महाराजका जन्म लग्न! श्रीविक्रमाब्द १९०६ पौष मास धनार्क प्रविष्टा १८ भाद्र कृष्ण प्रतिपदा रविवासरं ऐन्द्र योग पुनर्वसु नक्षत्रे वृश्चिक लग्नोदये भोसर्षश ।

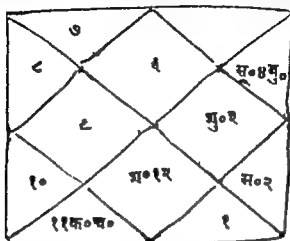
श्रीपूज्य सोहनलालजी महाराज की जन्म कुण्डली ।



श्री पूज्य महाराज परमशान्ति मुद्रा हैं श्री गणपतिराय जी महाराज भी उक्त गण्ड में गणावच्छेदिक वा रूपधर पदसे विभूषित हो रहे हैं जो महाम् दीर्घ वर्त्ति हैं और श्री सद्य के परम हितैषी हैं स्वामीजीका जन्म पसरूर शहर जिला स्यालकोट श्रीविक्रमाब्द १९०६ भाद्र पक्ष कृष्ण पक्ष तृतीय मंगल वार के दिन लाला गुब्बासमल्ल भीमाल की धर्म पत्नी माई गोर्वा की कुक्षसे हुआ है स्वामीजी के जन्म लग्नके ग्रह देखने से यह स्थयमेवही सिद्ध हो जाता है कि स्वामीजी महाराज परम हितैषी हैं ।

अथ श्रीगणावच्छेदिक गणपतिराय जी महाराज की जन्म कुण्डली ।

विक्रमाब्द १००६ माघ पक्ष कृष्ण पक्ष तृतीया सोमवासरः ।



सो यह कथन प्रसंग से अत्र लिखा गया है ।

किन्तु धीक्षा देकर श्री पूज्य महाराज ने ग्राम नगरों में घूमोप
देश दे कर दृधियाणा माछीवाड़ा, सरद, रोपड़ इत्यादि नगरों
में विषदर के १९३४ का चौमासा मालागड में जा किया सो चौमासे
में अमोघोत बहुत हुआ ।

पाठकों की स्मृति होगा के हमने पूर्व लिखा था कि १९३४ के
चौमासा में भारमारामजी का स्नान करना लिख करेंगे सो पाठक वृन्द !
ध्यान से पढ़ें कि १९३४ का चौमासा भारमारामजी का जोधपुर में था
और श्रीस्वामी जीधनरामजी महाराज का चौमासा तब ही अंगलदेश
के भाईदे कोट नामक नगर में था तब भारमारामजी ने जोधपुर से
अपने हाथ से एक पत्र लिख कर स्वामी जीधनराम जी महाराज की
भाईदे कोट में भेजा सो उस पत्र की मकल यथातथ्य मुख्य जीवों के
दिनाने वास्ते लिखता हूँ । और जिसके पदम से पाठकों का भारमा
राम जी की विद्या, मुक्ति भली प्रकार से विदित हो जायेगी ।

अमे भाप कू मलूम ही है मितने मत अब जन नाम के हो रहे है भागे
भाप कू किसी आषक के मुलाहज से मेरे से मिलना अब नहीं करपा
भाप ओ मेरेसे न्यारे रहते ही एमेरे कू बडा दुख है मेरी मरजी पर
है ओ भाप की सेवा करूं सदा पास रहू पुस्तक मेरे कू इतने मिसे है
ओ गिणती से बाहिर है ।

आषक तो अनुमाने १०००००० दस लाख सेवा करत है अने
साधू मेरे पास है सो बडे विनय धान है परन्तु एक भापका विजोग
है यही मेरे कू दुःख है जैसे जैसे क्षेत्र है भिनमें ७००० हजार आषक के
घर है मरमेस्वर की तरे साधू कू मानते हैं क्षेत्रवी ५००० हजार गुह
रात में होवेगे परंतु साधू भगवान के थोडे हैं साधू त्यागी अनुमान
७० वा ८० है साधवीया १५० के अनुमान है सो हमारी ए मरजी है
ओ भापके साथ फेर सयं देस अने तीर्थ भिन के उपर २५०० मंदिर
ह अने २४ से चप के घणे हुए मंदिर अब तक कलडे है ए सयं वस्तु
का हाल भाप मिलोगे अब कहूंगा सयं साधू भाप कू चाहये है अने
मेरे साधू जैनेन्द्र व्याकरण घगेरे घणे २ शास्त्र भणे है ए सर्व भाप
अब मिलोगे तब देपोगे ए चिट्ठी मैने पुर्य रागयी लिखी है ।

जुआ कोर मतछत्र नहीं इतने दिन जो चिट्ठी गदी लीखी सो
भापने मना कर दीया था। परन्तु मैं कहाँलग सपर कर इस घास्ते
लिखी है सो इसका समाचार सयं पाछा लिखणा ।

जोधपुर में आलखंद पारव की दुकान उपर चिट्ठी लिखी स०
१९३४ कार्तिक यदि ८ दसखत आरमाराम के ।

अब किम्बित् सक पत्र की समालोचना करके मध्यमनों को
दिखाता हूँ ।

प्रियपाठकपुम्ब ! जो आरमाराम जी के जीवनचरित्र के ४१वें
पृष्ठोपरि लिखा है कि-आरमाराम जी ने १९२१ में श्रीमासा में, सार
स्वत, अमिहका, कोय, अलकार न्याय काव्यादि ग्रंथ पढ़े । सो पाठक

गण स्वयं ही विचार करेंगे कि इतने विद्वान का ऐसा नियम लिख पत्र होसका है कदापि नहीं इससे स्वयं ही सिद्ध होगया कि भारमाराम जी ने व्याकरण को ही कलङ्कित किया तथा नाही भारमारामजी सुंदर पद रचना करके शङ्खलायुक्त लिखना ही जानतेथे जैसेकि उनके लिखे पत्र से स्पष्ट सिद्ध है तथा लिखिने की शैली इस प्रकार से ग्रहण करते हैं कि—परंतु जब आप याद आठवो हो तब दिल भर आठवा है आपां में पाणी भाजांन है सो मेरे को बडा दाह होता है सो सो कहा लिखू । *इत्यादि मिश्रधरो कथा यह व्याकरण के विद्वानों की भाषा है क्योंकि एक लेख से सिद्ध होता है कि भारमाराम जी को व्याकरण का नितान्तम् बोध नहीं था यदि बोध होता तो उक्त पत्र विमर्षि लिखन कृदन्त प्रत्यय समासादि से विरुद्ध कथों लिखते तथा व्याकरण का यदि सच्चा प्रकरण भी देखा होता तो घणों के स्थान तो ज्ञात हाजाते जैसे कि व्याकरण के सच्चा प्रकरण में लिखा है कि—

अकुहविसर्जनीय जिह्वामूलीयानां कण्ठ तथा
कटुरषाणां मूर्द्धा ॥

अर्थात् भ्रष्टादृश प्रकार का भ्रष्ट पुनः कवर्ग जैसे कि—क ख ग घ ङ, और विसर्जनीय जिह्वा मूलोया इनका कण्ठ स्थान है और कवर्ग के भ्रष्टादृश भेद टवर्ग जैसे कि—ट ठ ड ढ ण र, य, इनका मूर्द्धन स्थान है ।

मिश्रधरो उक्त पत्र में भारमाराम जी ने प्रायः कण्ठ स्थान के घणों के स्थानोपरि मूर्धस्थान के घणों को ही लिखा है जैसे कि—आपां में पाणी भाजांन है, (कशालग लिपू) इत्यादि सो कथा यह भारमाराम जी ने अपनी बुद्धि का परिश्रम नहीं दिखाया है अप्रत्यक्ष दिखाया है ।

* दाह !!! कैसी सुन्दर काव्य भारमाराम जी ने लिखी है जिस से हमसन्दादि महाभाषाओं की काव्य लज्जित होरही हैं ॥

फिर सदेही लोग कहते हैं कि—आमाराम जी ने बूढ़क मत मनः कल्पित ज्ञान ये त्याग दिया ? किन्तु ! महारामा जी अपने पत्र में लिखते हैं कि—आपके गुण तो मेरे का सर्व माछन हैं मुह से कहे नहीं जाते गाम खड्गक मैं आप से घणी भग्न करी थी कि मेरे का आप दुर न करो परन्तु आप तो गुह के दुर्जे के थे सो मग क्या जोर बलता इत्यादि । पाठकगण ! आप स्वयं विचार करें कि वल लेख से क्या सिद्ध होसकता है या कोई यह कह सका है ? कि आत्मा राम जी ने श्री स्वामी जीधनराम जी महाराज का छाड़ दिया या बूढ़क मत को मनःकल्पित ज्ञान करक त्याग दिया ?

किन्तु अब आमाराम जी का वर्तमान चरित्र शुद्ध न रहा तो गच्छ में भी रक्षणा अयोभ्य था इसीवास्ते स्वामीजी न आमारामजी को गच्छ से निगम किया फिर लिखा है कि—मैंने कभी भी आपका अभिनय नहा किया किन्तु स्तुति करता रहता हूँ—इत्यादि—

अब धीरशासन के मुनियों को असत्य कटुकवाच्य प्रदान किये हैं तो क्या यह अभिनय नहीं है अवश्य है तथा सम्यक्त्वदात्म्यान्धार नामक ग्रंथ को पढ़कर देख लीजिये (जो कि महारामा जी का रचा हुआ है) अथ से इतिपर्यन्त पठन करते हुए आपका सत्य, मृदु, यादू, कहीं भी दृष्टि गोचर नहीं आयेगा ! हाँ—दृष्टिये चमार, मुसलमान, निरक दुर्गति के पदमे वाले इत्यादि पाश्र्वों की धर्पा मच्छी को दुर है ! अर्थात् मरमार है ॥

फिर और भी देखिये आमाराम जी के कथन में सत्यता भी प्रतीत नहीं होती है जैसे कि आमाराम जी स्वपत्र में लिखत है कि ओ में समुद्र के अंत लग रहना देखी है तथा जार्ण ताबपत्रों के मंदार देखे हैं सो सब आप को सणाऊंगा इत्यादि पाठकपुनः आत्मा रामजी कोनसे समुद्र के अंत लग रहना देखकर आयेह—क्या स्पष्ट समुद्र या काटो-बधि—तथा स्वयंमूरमण समुद्र सो क्या यह भन्

चित लेख नहीं है भवश्य है क्योंकि सांप्रतम काल के शोधकालम तो यह कहते हैं कि-उमें कोई भन्त नहीं मिला ।

फिर एक यह भी बात है कि-भारमाराम जो १९३२ सत्रम् पञ्चाय देश से विहार करके भमदावार में चौमास आ रहे फिर १९३३ का चौमास भावनगर में किया १९३४ का चौमास ओधपुर में किया तो क्या यह तीनही नगर समुद्र के भग में बसने वाले हैं ॥

हा यदि किसी बालका नाम भारमाराम जी ने समुद्र कल्पन कर लिया हो तब तो ग्यारी बात है क्योंकि जब भारमाराम जी ने एक भविष्य दृश्य को भर्त्सना मान लिया है तो मला समुद्र की तो क्या ही बात है ।

क्योंकि भोर किसी प्रकार भी भारमाराम जी का समुद्र तक रचना देखना सिख नहीं हो सकता क्योंकि भारत वय के सूत्रों में ३२००० हजार देश लिखे हैं किन्तु भारमाराम जी के जीवन चरित्र में केवल पञ्चाय, गुजरात, मारवाड, माछवा, इत्यादि देशोंके ही नाम लिखे हैं नत अन्य देशों के नाम ॥ सो शोक है ! ऐसे लिखने पर फिर लिखा है कि मैं अच्छी तरह जानता हूँ जो आप परमेश्वर सुधारणे के वास्ते ऊठे हो तथा मेरा जसा राग भार के उपर था ऐसा ही राग भव है इत्यादि मित्र परो ! जब राग की स्थिति भी न हुई स्वामी जी परलोक वास्ते उचित हुए भी निश्चित होगया ॥

तो फिर दृष्टिया शब्द ग्रहण करके धीरशासन के मुनियों की व्यर्थ निम्दा करके पथ काले क्यों किये हैं ॥

अतः जो किये हैं इस से भारमाराम जी ने अपनी बुद्धि का परिचय दिया दिया है ॥

पुनः लिखा है कि मेरी मरजी यह है जो आपकी सेवा करूं सदा पास रहूँ पुस्तक मरे कृ इनने मिले है आ गिगतो से बाहिर है आपकी अनुमाने दश १०००००० लाख सेवा करते हैं इत्यादि ॥

प्रियगण ! ओ सेवा वास्ने अत'करण से लिखा होवेगा तो सिद्ध होता है कि-संवेग मन वा तपागच्छ आत्माराम जी को प्रिय नहीं लगा होवेगा घूटेरायजीघत । फिर लिखा है कि-पुस्तक मेरेकू इतने मिले हैं जो गिनती से बाहिर हैं, सो गणना से बाहिर तो असंख्य वा अनन्त हो शब्द हैं तो क्या आत्मारामजी को असंख्य पुस्तक मिल गये थे ॥

किन्तु आजकल तो प्रायः महान् २ पुस्तकालय की भी लिष्ट विद्यमान हैं जैसे जम हितैषी नामक मासिक पत्र में प्रकाशित हुआ है कि लखन नामक सुप्रसिद्ध नगर में एक महा पुस्तकालय है जिस के पुस्तक अनुक्रम से रखे जायें तो ४२ वा ४३ मील के स्थान में रखे जा सकें हैं ॥

देखिये ! इतना महत् पुस्तकालय भी गणना से बाहिर न हुआ तथा जैन सूत्रों में सब से महान् दृष्टिवाद माना है अपितु तिस के भी सख्याते ही वर्ण लिखे हैं ! तो मछा आत्माराम जी को गणना से बाहिर पुस्तक कहां से मिल गये ! भला यदि कल्पना कर भी लें कि आत्माराम जी को इतने पुस्तक मिलगये थे जो कि गणना से बाहिर ही थे ॥

तो फिर श्री पूज्य जी महाराज के सूत्र वा श्री जीधनराम जी महाराज के सूत्र पिना भाडा क्यों लेगये थे ॥

तथा फिर भी वह सूत्र नहीं दिये तो क्या उक्त पुस्तकों को भग्न बनाना था हा शोक ॥

फिर लिखा है कि १०००००० दस लाख अधिक मेरी सेवा करते हैं यह भी लेखकचन माय ही है क्योंकि प्रथम तो यह लेख महानर का सूचक है जोकि साधु धर्म से विरुद्ध है फिर यह लेख देखिये सत्यता कहांतय रखता है क्योंकि जैन इतिहास याय् बनारसीदास एम० ए० वा बनाया हुआ जिनके प्रथम पत्र पर लिखा है कि ११ लाख

३४ सहस्र १०० एकसो ४८ सयें जैन हैं इसीप्रकार भारतमित्र नामक पत्र में भी प्रकाशित हो चुका है ।

तथा किसी २ तारीख में जैन १५ लाख भी लिखे हैं सो वर्तमान काल में जैनमत की सीन शाखें हैं जैसे कि द्धेताम्बर जैन १, द्धेताम्बर मूर्तिपूजक जैन २, दिगंबरजैन ३, द्धेताम्बरमूर्ति पूजक जैनों की शाखा ही एक पीताम्बर जैन हैं ॥

सो सर्व जैनों में पाँच लाख तो अनुमान भी द्धेताम्बर स्थानक वाली जैन हैं, शेष दिगंबर द्धेताम्बर जैन हैं अब विचारने की बात है कि जब पीताम्बर जैन ही आत्माराम जी के लिखे अनुसार है ही नहीं, तो मछा सेवा की तो क्या ही आशा है तथा भी भ्रमण भगवत् वर्द्धमान स्वामीके भावक १००००० लाख उनसठ सहस्र ही कल्प सूत्र में लिखे हैं सो आत्माराम जी का कथन असमंजस है फिर लिखा है कि साधू भगवानके शासनके थोड़े हैं साधू त्यागी अनुमान ७० लाख ८० लाख बीयाँ एक सौ पचास १५० के अनुमान हैं । भिन्नवरो जैसे आत्माराम जी त्यागी घैरागी थे तैसे हो वह ७०,८० साधु १५० साध्वियें होंगी धन्य है ऐसे २ परीक्षकों को पुन मंदिर विपरीत लेख लिखा है वह भी पानसर के तीर्थवत् ही होवेगा ॥

पुन देखिये आत्मारामजी को जब भीजीवनराम जी महाराजने स्वागत छ से मित्र किया था । फिर आत्मारामजी की किसी भी पत्र द्वारा नहीं आया ॥

किन्तु आत्माराम जी लिखते हैं कि-इसने दिन जो छोटी गद्दी छोपी सो आपने मना कर दिया था परंतु मैं कहालग सबर कर इत्यादि पाठकगण—देखिये आत्माराम जी के लेख को परंतु स्वामी जीधनराम जी महाराज ने इस पत्र का भी कोई भी प्रत्युत्तर नहीं दिया । सो उक्त पत्र से पाठकों को आत्माराम जी की विद्या बुद्धि विवेक सत्य सर्व ज्ञात होगया होवेगा ।

अपितु श्रीपूज्य महाराज का भी चौमासा भग्याभद से पूर्ण हागिया फिर श्रीमहाराज देश में परोपकार करते हुआं ने लोगों के मतीय आग्रह से १९३५ का चौमासा नामा में किया पाठकों को पान हो १९३५ का चौमासा भारमागम जी का लघियाने में था? किंतु सुधियाने में भारमाराम जी ज्वर से भयभीत होते हुए रेल गाडी में सारुद हो कर चौमासा में ही भग्याभदे में जा रहे थे ।

अपितु भारमाराम जी के जीवन चरित्र में लिखा है कि—जब भारमाराम जी भग्याभदा में गये तब विचारते हैं ।

मैं कहाँ भागया हूँ क्या मुझे कोई स्वप्न भाया है या कोई इन्द्रबाल हो रहा है या मुझ भ्रम हो रहा है इत्यादि अनेक हासस्पर्श वचन लिखे हैं । सो पाठकगण भारमाराम जी के स्वभाव को तो जानते ही हैं ।

और श्रीपूज्य महाराजने नामा नगर में जैनधर्म का, परमोद्योत किया पुनः श्री महाराज ने एक द्वायाशुत्तक नामक महाम प्रथ भी निर्माण किया जिस में अनेक स्तूषों के प्रमाणों द्वारा भगवान की भाषा दया ग लिख करके सम्पत्त्य को पुष्टा दी है फिर चतुर्मास के पदचात श्री पूज्य महाराज ने बहुत से भग्य जीवों का प्रतिबाध देकर १९३३का चौमासा लुधियाना में किया । सो लुधियाने में बहुत ही धर्माघात हुआ अपितु लाला अदामल्ल, लाला मदनील्ल, लाला जगमल्ल गीरीमल्ल, लाला जमनादास, लाला नारसैत, लाला पूरवी मल्ल, लाला निहालचन्द्र, इत्यादि भाइयों ने धर्म की प्रमायना बहुत की सा चौमासे के पदचात श्री महाराज अनेक ग्राम नगरों में धर्मोपदेश करते हुए अमृतसर में पधारे तब श्रीमान लाला हरनामदास सनसाल थापक की थैठक में विराजमान होगये तब प्रति दिन धर्म ध्यान की सुधि होने लगी सैकड़ों लोग दर्शन करने को आने लगे ।

तब ही आत्माराम जी विघ्नचंद्रादि संघेगी साधु भी ममृतसर में ही भागये ! किन्तु विघ्नचंद्रादि संघेगियों ने कहला भेजा कि ! हमने भी श्री पूज्य महाराज के दर्शन करने हैं सो हमको दर्शन करने की आज्ञा मिलनी चाहिये ।

तब श्री पूज्य महाराज ने कृपा करीकि—जैसे उनकी इच्छा हो ! तब ही विघ्नचंद्रादि संघेगी साधु श्रीपूज्य महाराज के दर्शनार्थें बाला हज्जामदान, सतलाल जी बैठक में हो भागये इच्छामि यमासमणो इत्यादि पाठ पढ़ के स्थित होगये पुन प्रेम की बातें करने लगे तब श्री पूज्य महाराज ने कृपा करीकि—विघ्नचंद्रजी कथा देखो ! तब विघ्नचंद्रजी कहने लगे ! हे महाराज जी सिद्धाचल की देखो ! तथा बनेक मन्दिर देखे हैं तब श्रीमहाराजजी ने कहा कि—कथा कोइ उठार्ह झोप में ऐसा स्थान है कि—जहां कोई भी सिद्ध न हुआ हो ! क्योंकि भय तो वह स्थान ऐसे हैं जैसे किसी शोध की बुझान चढती है तब बनेक लोक शोध जीके पास आते हैं व्यापार करते हैं जय वह भापण उठार्ह जानी है या शोध उस बुझन को छोड़ जाता है वह भापण गिर पड़ने है फिर वह व्यापारी अन जहां पर नहीं आते हैं ।

इसी प्रकार सिद्धाचलादि पर्वत ह ! क्योंकि जय मुनि उन पर्वतों पर साक्षात् विद्यमान थे तब बनेक पुरख या जिबासु जन जहां जाया करते थे और ज्ञान दर्शन आदि का लाभ उठाते थे ! यतलाभा अब कथा है यहां पर ! तब श्री साहजलाल जी महाराज ने श्री पूज्य महाराज से त्रिउक्ति करी कि—मुझे आज्ञा हावे तो मैं इनसे कुछ बातें करू ॥

तब श्री पूज्य महाराज जी ने श्री स्वामी सोहनलाल जी महाराज को आज्ञा देदी ॥

आज्ञा पाते ही श्री स्वामी सोहनलाल जी महाराज ने विघ्न चंद्रादि तपागच्छिया का निम्नलिखित प्रश्न किये ॥

१ भाप लोग प्रतिमा जी की भाषातना ८४ मानते हैं कहना चाहिये भतिशय प्रतिमा की कितनी हैं ॥

जैसे कि बहुत ब्रह्म की अम्भ भतिशय १ दोहा के पश्चात् ओ भतिशय प्रगट होती हैं वा केवल ज्ञान के पीछे भतिशय प्रादुर्भूत हैं सर्व का धर्षन पृथक् २ है ऐसे ही प्रतिमा जी की बतलाइये ॥

२ भगवन् को भाषा क्या में है या हिंसा में यदि हिंसा में कहोगे तो भवकोटी प्रत्याख्यान कैसे रह सकता है अकर क्या में भाषा है तब भाप का धर्षण सुप्रानुसार नहीं है ॥

३ जब भाप लोग भविष्यत काल में मोक्ष होने वाले जीवों को नमोऽर्पण के पाठ से बचना करते हैं तब जिन मंदिर में शिवलिङ्ग वा श्रीकृष्णजी की प्रतिमा कहीं नहीं प्रतिष्ठित की जाती हैं क्योंकि शिवजी को भाप के मन में भवति सम्पत् दृष्टि धावक माना गया है।

४ जब द्वारका जी मरुम होगई थी तब द्वारका में जिन मंदिर थे वा नहीं यदि थे तब मरुम कहीं हुए यदि नहीं थे तब मत कल्पित सिद्ध होवेगा तथा फिर भतिशय कहाँ रही।

* देखो भाषा पूजा समूह नामक पुस्तक पृष्ठ ८४ की पंक्ति ४१५।

ॐ ह्रीं श्रीं धूपमादि चौरान्त चतुर्विंशति जिन समूह भद्र भव तर भयतर सपोषद ॥ ॐ ह्रीं श्रीं धूपमादि चौरान्त चतुर्विंशति जिन समूह भद्र तिष्ठ तिष्ठ ठा ठा ॥ ॐ ह्रीं श्रीं धूपमादि चौरान्त चतुर्विंशति जिन समूह भद्र ममसन्निहिता भयमय वपट ॥ यद्यतो भाषा का प्रमाण भव विसर्जन का प्रमाण भी दलिये उक्त ही पुस्तकके पृष्ठ ५८ की प्रथम वा द्वितीये पंक्ति पूर्णार्घ्य के बाद विसर्जन करना चाहिये इत्यादि सो यह प्रतिष्ठा या पूजा करने वाले मन्त्र हैं ॥

प्रिययरा १ यह लोक प्रतिष्ठा के समय मोक्ष प्राप्त मोर्षकरी का भाषानादि कर्म करते हैं और मंत्र भी पढ़ते हैं ॥

५ श्रोपति जी ने किस जिनकी पूजा करी उस जिनका क्या नाम क्या उसका मंदिर बना किस आचार्य ने प्रतिष्ठा करवाई।

६ भगवान् ने किस नगरी में प्रतिमा के पूजन का उपदेश किया किस आचर्यने धारण किया विधि विधाम भी पूछा ३२ सूत्रमें कौनसा सूत्र कौनसा आचर्य और पञ्च समित त्रिगुप्ति का क्या स्वरूप है।

७ हिंसा का कारण क्या है दयाका कारण क्या है ? और इन के कार्य क्या २ समते हैं।

८ ममस्कार प्रश्न के पक्ष पक्षों के ४ निक्षेप कैसे बनते हैं फिर वह ध्वनीय किन्तु हैं अर्धध्वनीय किन्तु हैं।

हरपादि अब प्रश्न पूछे मन्ना वहाँ उत्तर की क्या भाशा थी तब विश्वम्भर्षी कहने लगे कि हमतो भी पूज्य महाराज के दर्शन करने वास्ते आये हैं तब श्रीसोहनलालजी महाराजने कहाकि हाँ दर्शन करें।

अपितु अब विश्वम्भर्षादि साधु आने लगे, तब फिर कहने लगे कि यदि आत्मारामजी ने दर्शन करने होवें तो वह भी करलेवें तब श्री पूज्य महाराज ने कृपाकरी जैसे उसकी इच्छा हो फिर विश्वम्भर्षी बोले ? यदि प्रश्नोत्तर करने होवें। तब श्रीपूज्य महाराज ने कृपा करी कि—यदि आत्माराम जी की इच्छा प्रश्नोत्तर करने की है तो हम तय्यार हैं। यदि किसी और ने करने हो या किसी अन्यस्थान पर करने हो तो हम श्री सोहनलाल जी को भेजेंगे।

मन्ना प्रश्नोत्तर किसने करने थे ? यह तो केवल कहने मात्र ही था ? अब विश्वम्भर्षादि चले गये।

तब श्री सोहनलाल जी महाराजने १०० प्रश्न लिख कर आत्माराम जी को भेजे तब आत्माराम जी ने १०० प्रश्न लेकर अडियाला की ओर विहार कर दिया।

किन्तु उत्तर देने का काम ही क्या था।

फिर श्री पूज्य महाराज को लोगों की अतीव विद्वत्ति होने लगी तब श्री महाराज ने १९३७ का श्रीमासा ममृतसर में ही कर दिया।

चौमासामें हमोंछोत धृत ही हुआ किन्तु बहुत मास के पश्चात् अथ
बलक्षीण हो जाने के कारण से श्री पूज्य महाराज अमृतसर में ही
धिराजमान हो गये । सो श्री पूज्य महाराज के धिराजमान होने से
द्रव्य क्षेप, काष्ठानुसार आवश्यक जन धार्मिक कार्य करने लग्य । और
फिर अमृतसर में ही तीन पुरुषों को दीक्षा श्री पूज्य महाराज ने
प्रदान करी । जैसे कि—श्री स्वामी नामकवम्भ जी महाराज १, श्री
स्वामी केसरीसिंहजी महाराज २, श्री स्वामी देवीकदमहाराज ३ ।

किन्तु काल की विविध गति है यह सब को ही देखता रहता है
समय को न देखता हुआ किसी निमित्त को सम्मुख रख कर शीघ्र
ही भा घेरता है सो १९३८ आषाढ कृष्ण १५ का श्री पूज्य महाराज
ने पक्षी उपवास किया फिर आषाढ शुक्ल प्रतिपदाका अथ पारणा हुआ
सो वह सम्यक् प्रकार से प्रणमत न हुआ तब श्री पूज्य महाराज ने
अपने ज्ञान बल से अपनी आयुको ज्ञात करके पुन मालोचनादि सर्व
विधि विधान करके और सर्व जीवों से क्षमापन (अमायना) करके
शान्ति माघों से श्री संघ के सन्मुख दिन के ३ तीन घण्टे के अनुमान
अनशन कर दिया ॥

फिर परम सुन्दर माघों के साथ मूलसे मर्हन् अहम का जाप
करते हुए १९३८ आषाढ शुक्ल द्वितीय दिन के १ यज्ञ के अनुमान श्री
पूज्य महाराज इस अनित्य सत्सार से स्वर्ग गमन हो गये ॥

तब ही देश में श्री संघ का शोक उत्पन्न हो गया पुनः अमृत
सर के धायक मंडल ने तारद्वारा नगर २ में श्री पूज्य महाराज के
स्वर्गवास होने का समाचार सूचित किया सो समाचार सुनते ही
ग्राम २ नगर २ का धायक मंडल अमृतसर में ही उपस्थित हो गया ।

और लोग माना प्रकार के शब्दों से मोहोदय से दिलायात करते
ये क्योंकि एक प्रकार का उस समय सूर्य अस्त हो हो गया था श्री
पूज्य महाराज और शासन में सूर्य यत् प्रकाश करने वाले थे फिर श्री
स्वामी साहनलाल जी महाराज ने श्री संघ को सदान संसार का
अनित्यता दिखालाई ॥

फिर लोग निरामद होते हुए एक सुन्दर विमान बना के तिस में श्री पूज्य महाराज के शरीर को बाँध करके महान् महोत्सव के साथ जिन के विमानों पर ९४ कुशाले पड़े हुए थे वादित्र बजते हुए मृत्यु संस्कार की भूमि में पहुँच गये ॥

फिर चंदन के साथ मृत्यु संस्कार किया गया जिन लोगों ने उक्त महोत्सव को देखा है वह लोग महाराजा रणधीरसिंह जी के मृत्यु महोत्सव की उपमा दिया करते हैं ॥

तात्पर्य यह है कि—जैसा श्री पूज्य महाराज जी का पण्डित मृत्यु समाधि युक्त हुआ था तैसे ही लोगों ने परम महोत्सव के साथ श्री पूज्य महाराज के शरीर का अग्नि संस्कार किया ॥

मिथवरी श्री पूज्य महाराज ने इस भारत भूमि में जैन मार्ग का परम प्रकाश किया। और आत्मा की शुद्धि अर्थ जिन्होंने एकसे लेकर ३३ उपवास पर्वान्न तप किया और प्रति चौमासमें एक भष्टा दश भक्त त्याग रूप तप करते रहे अर्थात् हर एक चौमास में एक भष्टा करते थे आपका सर्वदीक्षा काल चात्वारिंशति वर्ष हुआ और श्री आपने बहुतसे पण्डित्, भण्डित्, मन्त्र मात मात इत्यादि तप किये ॥ आप प्राकृत १ सस्कृत २ और जैनसूत्रों का परमत के शास्त्रों के भी वेत्ता थे। सो ऐसे महानाचार्य के स्वर्णवास को देख कर मध्य जन सत्कार की अनिवार्यता विचारते थे। क्योंकि जब इस भूमि पर तीर्थंकर ऋषवर्ती, पल्लवेष, वासुदेव इत्यादि न रहे तो मला भूम्य की तो क्या ही बात है। इत्यादि विचारों से लोगों ने आत्मा की शान्त किया फिर आचार्य पद स्थापन करने की सम्मति होने लगी क्योंकि सूत्रों में यह कथन है कि आचार्य उपाध्याय बिना गच्छ के मुनियों का विचरना नहीं कल्पता है किन्तु श्री पूज्य महाराज के द्वादश शिष्य हुए जिन के निम्नलिखित नाम हैं तद्यथा ॥

• वर्तमान काल में श्री पूज्य महाराज के शिष्यों का परिवार

देव तो किसी के भी घर के देव नहीं हैं अपितु भणगार हैं और देवाधिदेव हैं । तथा यदि भूनाथ सिद्ध करागे तब सम्यक्त्व में दूषण लगता है कामदेव भावक के स्वरूप को पदके देखो ॥

३ ओघमिर्युक्ति के प्रमाण से आत्माराम जी ने द्रोपता जी को विवाह से प्रथम मिथ्यादिष्टगी सिद्ध किया ह देखो प्रश्न ५ पां जो आत्मारामजी ने १९२३ में ११ प्रश्न बूटेराय जी को पूछे थे तिन में । किन्तु अब आत्माराम जी मूर्ति विषय द्रोपता जी का प्रमाण देकर भद्र पुरुषों को मिथ्यारूपी जाल में फंसाते हैं जब वतलाइये आत्माराम जी का कौन सा प्रमाण सत्य है, यदि प्रथम प्रमाण सत्य है तो अब प्रमाण देना मिथ्या है अेकर द्रोपता जी का मूर्ति पूजन ही विषय सिद्ध है तो प्रथम प्रमाण असिद्ध हुआ जब ऐसा हो रहा है तब आत्माराम जी परस्पर विरोध कथन करने वाले सिद्ध हुए ॥

४ किस महन् ने किस स्थान पर मूर्ति पूजा का उपदेश किया है क्योंकि पांच महामत और द्वादश भावक के मत इनका पूर्णविधि से उपदेश तीर्थंकर भाषित सूत्रों में विद्यमान है तो भला मूर्ति का विधि विधान क्यों नहीं कथन किया गया ॥

५ तथा किस महन् ने मूर्ति की प्रतिष्ठा करवाह क्योंकि अब तीर्थंकर देव सहस्रों जीवों को दीक्षित करत हैं सहस्रों ही जीवों को द्वादश भावक के मत ग्रहण करवाते हैं तो भला मूर्ति की प्रतिष्ठा भी कराते होंगे सो किस सूत्र में उक्त विधान है ॥

अब यह प्रश्न था पृ. तिलोत्तमजी आत्मारामजी के पास लेगये और आत्माराम जी को सुना भी दिए किन्तु आत्माराम जी ने कुछ भी उत्तर नहीं दिया सत्य है उत्तर फटा बेघे सूत्रों में वो पाठ भी मिले अपितु फर्जित प्रथो में अनेक भद्र जीवों का धान्तिपुत्र करने वास्ते गाथा बना कर छिप घरी हैं जैसे कि भाइ दिन छत के चतुर्विंशति पगो परि छिपा है कि—

केवली जोगेपुच्छा कहणे बोही तहेव स्वेउ ।
 किइत्थमुचियमिणिह चेइयदव्वस्स बुद्धित्ता ॥१२०॥
 ऊव्व चदव्वसोमयाए सूरुवातेयवतया ।
 रइनाहव्वरूवेण भरहोव्वजणइठया ॥१०६॥
 कप्पदु मुव्वर्चितामणिव्व चक्खिब्बवासुदेवव्व ।
 पूइज्जतिजणेण जिण्णुद्धारस्स कतारा ॥१०७॥

भाषार्थः—इस गाथाओं का सारांश इतना हि है कि केषली
 भगवान् ने कहा है कि चैत्य द्रव्य की श्रद्धा करने से मनोकामना पूरी
 होती है तथा काव्य कला की शक्ति चन्द्रवत् सौम्यरूप तथा सूर्य
 समान क्रान्ति कामरूप ओ जनों को मानदकारी कल्पवृक्ष तुल्य तथा
 चित्तामपि रत्न समान तथा चक्रवर्त्तीवासुदेव के समान पूज्यनीय होता
 है जो पदम खोर्ण मंदिरों का उद्धार करता है ॥

प्रिय मित्रघरो ! यह मनोक कथन महीं तो और क्या है क्योंकि
 किस केवली ने उक्त उपदेश किया है किस सूत्र में गौतमजी ने उक्त
 विषय काई भी प्रश्न किया है सो इससे स्वतः ही सिद्ध हो जाता है
 कि यह सब मूलन ग्रन्थकारों ही की छीला है ॥

फिर मत्तपच्छक्खणाणपइम्मा में लिखा है कि —

नियदव्वमउव्वजिणिंद, भवणाजिणर्विषवरपइठासु ।
 वियरइपसरथपुत्थए, सुतित्थतित्थयरपूआसु ॥ ३१

भाषार्थः—इस गाथा में यह दिखलाया है कि थायक जिन
 मंदिर जिन दिग्य प्रतिष्ठा जिन पूजा तथा पुस्तक लिखाने में धन को
 देवे इत्यादि तथा भाराधना पहन्ना की ११ यों गाथा में ऐसे लिखा
 है । तथा ।

ज्विरहंउविणासो चेह्यदव्यस्सजविणासतो ।

अन्नेउविविस्वउमे मिच्छामि दुक्कहतस्स ॥

मापार्थ — यदि मैंने चैत्यद्रव्य का विनाश किया हो तथा विनाश करते को अनुमोदना करि हो तिस का मुझेमिच्छामि दुक्कहत होवे ॥

समीक्षा—मित्रघरो यह किस अहंन का सत्योपदेश है किस सूत्र में अहंत् ने मन्दिर के वास्ते धन देने की आज्ञा लिखी है तथा किस केघडी ने प्रतिष्ठादि किया करघाई हैं सो यह सर्व मनोक कथन हैं ॥

प्रश्न —भानंद भावक ने श्रीमदुपासकदशांग सूत्र में लिखा है जिन पूजा करी है ऐसे हमारे भारमाराम जी सम्यक्त्र शस्योद्धार नामक ग्रंथ में लिखते हैं सो यह क्या उनका असत्य कथन है ॥

उत्तर।—हे भव्यगण ! यह भारमाराम जी का असत्य ही कथन है क्योंकि उक्त सूत्र में जिन पूजा का विधान हो नहीं है अपितु हमारे इस छेक को भारमाराम जी भी स्वीकार करते हैं ॥

पूर्वपक्ष —भारमाराम जी ने किस पुस्तक में लिखा है कि उक्त सूत्र में जिन पूजा का विधान नहीं है ॥

उत्तरपक्ष—सम्यक्त्र शस्योद्धार में ॥

पूर्वपक्ष—यह छेक हमको भी दिखलायें ॥

उत्तर पक्ष—देगिये सम्यक्त्र शस्योद्धार प्रथम धार का प्रकाशित हुआ पृष्ठ १११ महारामा जी क्या लिखते हैं यद्यपि उपासक दशांगमाते पाठ देखा हो न भी कारण के पूर्वाधारोंए सूत्रो संक्षेपीनां क्याछेपिण भानंद भावके जिन प्रतिमा पूजोहती हरयादि ।

मित्रघरो ! अब भारमाराम जी को उपासक दशांग में भानंद भावक के मूर्ति पूजा के विषय का पाठ दिखता ही नहीं तो भला भानंद भावक जिन पूजा कर्ता कैसे भिन्न होवेगा फिर जो यह लिखा है कि । सब संक्षेपित होगये हैं सो यह कथन भी युक्ति शून्य

ही है क्योंकि अथ भानंद आचक का सूत्रकर्ता ने व्यापारादि या द्वादश व्रत एकादश भावक प्रतिमा इत्यादि सब कथन कर दिये तो मठाविचारने की बात है कि एक नित्यनियम रूप जिन पूजा का ही पाठ संक्षेप करना था कि जिसकी आप के कथमानुकूल परम भावश्यकता यो इस से सिद्ध होता है कि यह कथन ही हठ रूप है।

फिर जो आत्माराम जी ने श्री समवायांग जी सूत्र का प्रमाण दे कर स्व सेवकों को मार्गद किया है वह भी कथन आत्माराम जी का हासप्रम्य है क्योंकि :—

श्री समवायांग जी सूत्र में तो केवल उपासक द्वांग सूत्र का इतना ही कथन है कि, भावकों के नगर के नाम नगरों के बाहिर के उद्यानों के नाम फिर उद्यानों में जिन देवनों के मंदिर थे उनके नाम भावकों के धर्माचार्यों के नाम इत्यादि कथन हैं किन्तु जिन मंदिर का कहीं भी कथन नहीं है इसलिये आत्मारामजी का कथन असम्यक् है। तो श्री पूज्य महाराज आत्माराम जी के साथ शास्त्रार्थ करने वास्ते जयपुर तक पधारे तो मठा आत्माराम जी क्या शक्ति रखते थे कि श्री पूज्य महाराज के सम्मुख भाते।

क्योंकि जिन लोगों ने आत्मारामजी के साथ प्रश्नोत्तर किये हैं वे कहते हैं कि आत्माराम जी को प्रश्नोत्तर करने की शक्ति बहुत ही न्यून थी।

सबसे कि लुघियाना में आत्माराम जी ठहरे हुए थे और श्री पूज्य महाराज भी लुघियाने में ही विराजमान थे तब श्रीमान् लाला दलियामल्ल, लाला सोहनलाल यह दो भावक आत्माराम जी के पास गये और पूछने लग कि ! हेमहारमम्।

एक पुरुष ने श्रीरामचन्द्र जी का मंदिर बनवाया और एक ने

ज्विरहंउविणासो चेह्यदव्यस्सजविणासतो ।

अन्नेउविस्वउमे मिच्छामि दुक्कहतस्स ॥

भाषार्थ —यदि मैंने चैत्यद्रव्य का विनाश किया हो तथा विनाश करते को अनुश्रोतना करि हो तिस का मुझेमिच्छामि दुक्कह होवे ॥

समीक्षा—मित्रवरो यह किस अहंम का सत्योपदेश है किस सूत्र में अहंत् ने मंदिर के वास्ते धन देने की आज्ञा लिखी है तथा किस केषली ने प्रतिष्ठादि किया करवाई हैं सो यह सर्व मनोक कथन हैं ॥

प्रश्न —भानंद भावक ने श्रीमदुपासकदर्शांग सूत्र में लिखा है जिन पूजा करो है ऐसे हमारे भारमाराम जी सम्यक्त्व शस्योद्धार नामक ग्रंथ में लिखते हैं सो यह क्या उनका असत्य कथन है ॥

उत्तर—हे भण्ड्यगण ! यह भारमाराम जी का असत्य ही कथन है क्योंकि उक्त सूत्र में जिन पूजा का विधान हो नहीं है मयितु हमारे इस लेख को भारमाराम जी भी स्वीकार करते हैं ॥

पूर्वपक्ष —भारमाराम जी ने किस पुस्तक में लिखा है कि उक्त सूत्र में जिन पूजा का विधान नहीं है ॥

उत्तरपक्ष—सम्यक्त्व शस्योद्धार में ॥

पूर्वपक्ष—यह लेख हमको भी दिखलायें ॥

उत्तर पक्ष—देखिये सम्यक्त्व शस्योद्धार प्रथम चार का प्रकाशित हुआ पृष्ठ १११ महारामा जी क्या लिखते हैं यद्यपि उपासक दर्शांगमाते पाठ देखा तो नहीं कारण के पूर्वाचार्योंद सूत्रो सम्प्रैपीनां क्वांछेपिण भानंद भावक के जिन प्रतिमा पूजोदगी इत्यादि ।

मित्रवरो ! जब भारमाराम जी को उपासक दर्शांग में भानंद भावक के मूर्ति पूजा के विषय का पाठ दिखता ही नहीं तो भला भानंद भावक जिन पूजा कर्ता कैसे सिद्ध होवेगा फिर जो यह लिखा है कि ! सत्र कसेपित होगये हैं सो यह कथन भी युक्ति शून्य

ही है क्योंकि जब भानु भावक का सृजकर्ता ने व्यापारादि वा द्वादश व्रत एकादश भावक प्रतिमा इत्यादि सय कथन कर दिये तो महाविचारने की बात है कि एक नित्यनियम रूप जिन पूजा का ही पाठ संक्षेप करना था कि जिसकी भाष के कथनानुकूल परम आवश्यकता थी इस से सिद्ध होता है कि यह कथन ही वृत्त रूप है।

फिर जो आत्माराम जी ने श्री समवायांग जी सूत्र का प्रमाण दे कर स्व सेवकों को आनंद किया है वह भी कथन आत्माराम जी का हासजम्प है क्योंकि :—

श्री समवायांग जी सूत्र में तो केवल उपासक वशांग सूत्र का इतना ही कथन है कि, भावकों के नगर के नाम नगरों के बाहिर के उद्यानों के नाम फिर उद्यानों में जिन देवों के मंदिर थे उनके नाम भावकों के धर्माचार्यों के नाम इत्यादि कथन हैं किन्तु जिन मंदिर का कहीं भी कथन नहीं है इसलिये आत्मारामजी का कथन ममाम्य है। सो श्री पूज्य महाराज आत्माराम जी के साथ शास्त्रार्थ करने वास्ते जयपुर तक पधारे तो नला आत्माराम जी क्या शक्ति रखते थे कि श्री पूज्य महाराज के सम्मुख आते।

क्योंकि जिन लोगों ने आत्मारामजी के साथ प्रश्नोत्तर किये हैं वे कहते हैं कि आत्माराम जी को प्रश्नोत्तर करने की शक्ति बहुत ही न्यून थी।

जैसे कि कुचियामा में आत्माराम जी ठहरे हुए थे और श्री पूज्य महाराज भी कुचियामा में ही विराजमान थे तब भीमानू लाला खलियामल्ल, लाला सोहनलाल यह दो भावक आत्माराम जी के पास गये और पूछने लग कि हेमहात्मम्।

एक पुरुष ने श्रीरामचन्द्र जी का मंदिर बनवाया और एक ने

श्री पार्ष्वनाथ तीर्थंकर का मंदिर बनादिया सो आप कृपा करें कि द्वादशमा स्वर्ग किस के लिये है क्योंकि जैन सूत्रों में लिखा है कि।

श्रीरामचन्द्र जी भीर श्रीपार्ष्वनाथ जी यह दोनों ही महापुरुष मोक्ष में गये हैं।

तब भारमाराम जी ने कहा कि, श्रीपार्ष्वनाथ जी के मंदिर के बनवाने वाला तपस्यम के बल से द्वादशवर्षे स्वर्ग में जासका है किन्तु रामचन्द्र जी के विषय में कुछ नहीं कह सका।

तब धावकों ने कहा कि। क्यों नहीं आप कह सकते जब कि आप मंदिर के उपदेष्टा हैं फिर आपने तपस्यम के साथ द्वादशमा स्वर्ग माना है तो फिर मंदिर की अधिकता ही क्या रही।

इतने कहने पर भारमाराम जी क्रोध के शरण जा प्राप्त हुए। पाठकगण ! यह कैसी निर्युक्तता का लक्षण है जब कि दोनों ही महात्मा मोक्ष में गये फिर एक के पूजक को १२वां स्वर्ग। एक के पूजक को मौन ! याह ! ! !

सो सत्य है जेकर दोनों ही पूजकों को द्वादशमा स्वर्ग भारमा राम जी कहवेंते तब भारमाराम जी का मतही विजयानुमित हो जाता।

सो दठ धर्म को प्राप्त हुआ जीव क्या २ नहीं कार्य करता और जिस २ को नहीं दोषारोपण करता अर्थात् सब को ही दोष देता है।

जैसे कि सम्यक्वच शक्योच्चार नामक ग्रन्थ के १० पं पृष्ठो पर लिखा है कि। मने गृहस्था वास मापण तीर्थंकर सिद्धनी प्रतिमा पूजेछे श्रपादि।

समाशोचना ! प्रथम तो सिद्ध हो जरूरी हैं मर कहिये मरुपी की प्रतिमा कैसे बन सकि है।

फिर तीर्थंकर देव गृहस्थावास में ही ३ नाम के धारक थे

किस प्रकार मजीब में जीव संज्ञा धारण करते होंगे क्योंकि यह मिथ्यात्व कर्म है ।

। क्योंकि आमाराम जी भी सत्य निर्णय प्रासाद नामक ग्रन्थ के ३५२ पन्नोंपर लिखते हैं कि ।

प्रतिमा स्वल्प युद्धीर्णा ! अर्थात् प्रतिमा का पूजन मत्त्व बुद्धिवालों के वास्ते ही है ! सो क्या आमारामजी ने तीन ज्ञान के धारकों को मत्त्व बुद्धिवाले नहीं सिद्ध किया है अवश्य मेव किया है ! सो यह क्या महारामा जी की बुद्धि का परिचय नहीं है ! अवश्य है ।

तथा सदैव कल से जीवों की छान में अधिक रुचि होती है सो छान के वशीभूत हो कर बहुत से भव्यजन धर्म से भी पतित हो जाते हैं ॥

जैसे कि ! आमाराम जी के जीवनचरित्र के १४ व पृष्ठोपर लिखा है कि ! महमदाबाद में एक दिन श्री सच ने सलाह करके श्री महाराज जी साहिब आमाराम जी से प्रार्थना कटी कि आपने देश पंजाब में जो नये आवक बनाये हैं तिन को हम मदद देने चाहते हैं तब आमाराम जी ने कहा कि तुमारी मरको तुमारा धर्म ही है कि अपने स्वधर्मियों को मदद देने इत्यादि पाठकण फिर बहुत से पदार्थ महमदाबाद से पंजाब देश में आप सो कई मददजन मार्ग से पराङ्मुख हुए क्योंकि महंन् प्रभु का पण्डितोपशमभाव का है न तुलोन का ।

किन्तु महारामा आमाराम जी का यह धर्म ही था कि जिस से गुण लिया जावे उसी ही की असत्यरूप निंदा करणी जैसे कि जीवन चरित्र पृष्ठ ६३ पर लिखा है कि ! भीर कितनेक लोकों के दिल म दहकों का अनिष्टा धरण देखने से जैन धर्म के ऊपर छेप हो रहा था दूर किया ! क्योंकि लोकों को मालूम हो गया कि :-

ओ मुखबन्धे हैं ये मलीन हैं और यह पीतांबर धारण करने वाले वरमल धर्म पुरुषक हैं अब इस घण्टा भी किसी क्षत्रीय प्राक्षण के

साथ पात चीत होने लगती है तो उसी वखत ये कहने लग जाते हैं कि पञ्चाय देश के भोसवाळ (भाबडे) तथा खंडरवाळ तो भी भारं विजय (भारमाराम जी) महाराज ने सुधार दिये क्योंकि प्रथम तो यह भाबडे लोक मुहबंदे गधे गुरुओं की खासत से बडे ही मळोन हो गये थे और इसी वास्ते पञ्चाय देश में प्रायः सब जगा यह लंका के बुडे के नाम से प्रसिद्ध थे अब भी जो शेष दूढ़क रह गये हैं उनके लोक घरे समझते हैं और उन से परहेज भी रखते हैं इत्यादि पाठकपुत्र देखिये जिस भी दयेताम्बर स्थानक वाली मुनियों से विद्या पदी और जिस मत में २० या २२ वर्ष व्ययतीत किये उन लोगों का लंका के बुडे के नाम से लिखना ऐसा साहस भारमारामजी बिना कौन कर सका है फिर जो लिखा है कि—बुडोपेगंधे हैं ! इत्यादि—

मित्रवरों ! क्या ही सुन्दर न्याय है कि जो पंच प्रतिक्रमण के अनुसार कार्य करने वाले हैं यह तो मळोन न हुए किन्तु जो दयेताम्बर सूत्रानुसार किया में रहते हैं वे गये हैं धर्म्य है भारमारामजी की बुद्धि ॥

फिर लिखा है कि ! भाबडे लोक भारमाराम जी ने सुधार दिये तो क्या भारमारामजी ने भोसवाळ लोकों का ब्राह्मण क्षत्रीयादिकों से परस्पर कन्या वानादि का छेन देन करा दिया है नहीं तो कहिये मित्रगण ! उनका सम्बन्ध किन के साथ है ॥

फिर लिखा है ! दुँडियों से लोक परहेज भी रखते हैं मित्रगण ! इस विषय में मैं अधिक नहीं लिखता केवल इतना ही आप लोगों को स्मृति कराता हूँ कि गुजरावाले की बात स्मृति करलिया करें जो महाराजा की प्रतिष्ठा पर वर्त्ताय हुआ था जिन समय तपागन्धियों से ब्राह्मण क्षत्रियों ने बहुत सम्बन्ध भी ठोड दिया था तो क्या यही सुधार किया ॥

किन्तु जो पुरुष इनके मत को देखता है ये इन को त्यागता है जैसे कि १७४७ का चौमासा औपग्य महाराज का मालेरकोटले में था और तब ही भारमाराम जी का भी चौमास मालेरकोटले में ही था ।

फिर श्रीपुण्य महाराज ने बहुत से तपागच्छियों के साथ प्रहोत्तर किये । और इस लोकों को आत्यन्त ही निरुत्तर किया ॥

अपितु यह लोग हठाम ही होनेसे स्वागच्छको त्याग नहीं करते हैं किन्तु सुबोध जन इन में रहना स्वीकार भी नहीं करते जैसे कि माळेरकोटलेमें ही एक महाशयने सवेगी'मत को असत्य ज्ञात करके श्री पुण्य महाराज को शरण ली थी जिस का नाम गणेशीलाल था और तब ही लुधियाने से एक सवेगी संघेध मत को त्याग के रायकोट में श्री गणेशदेविक श्री गणपतिराय जी महाराज के पास पहुँच गया जिस का नाम सुशालचंद था इत्यादि और भी कई मध्य जन इसी प्रकार इस मन कद्वित मत के साथ वर्त्ताव करते हैं क्योंकि सूरों में पुनः २ यही कथन है कि ! आत्मा तप संयम से ही पार होता है न तु अन्य पदार्थों से ॥

तो इसी प्रकार योगशास्त्र में हेमचन्द्राचार्य अपने बनायेद्वितीय प्रकाश में लिखते हैं कि ॥

●कचण मणि सोषाण थमतहस्तो सियंभुषणतल
जोकारिज्ज जिणहर तओवि तवसंजमो अहिओ ॥१११॥

अस्वार्थ—हेमचन्द्राचार्य कहते हैं कि ! किसी पुरुष ने सुवर्ण मण्डीयुक्त सहस्रों स्तंभों से विभूषित परम रमणीय ऐसा जिन मंदिर बनाया किन्तु तिस से भी तप संयम का फल महान है ॥

*काम्बजमणिसोषाणं हस्तसहस्रोच्छ्रितं सुवर्णतलम् ।

याकारयेज्जिनपुहंतसाऽपितप' संयमोऽधिका ॥ १ ॥

कच्छदमणतगुणो ।

संघोषसत्तरिपुत्तीतु—

कचणमणिसोषाणेधम्म सहसूसिपसुषन्मतोले ।

आकारयेज्जिणहरेतमोयितवसंजमो मणतगुणोत्ति ॥

पर्यपाठोदपयते ।

देखिये पन्नासाठवें श्री युक्ति में मन्दिर का निषेध ही करते हैं किन्तु यह लोग दूठ धर्म के बश हो कर युक्तियों का कष्ट समझते हैं।

फिर श्री पूज्य महाराज सम्बत् १९४८ में अमृतसर पधारे और आत्मारामजी का बहुत से सवेगी श्री अमृतसर में ही भाये हुए थे किन्तु श्री पूज्य महाराज के सम्मुख किस की शक्ति थी कि ठहर सके। परन्तु परस्पर कितनेक विज्ञापन भी प्रगट हुए जब श्री पूज्य महाराज चर्चा के लिये तय्यार हुए तब ही आत्माराम जी अमृतसर से बलपडे साथ है सूर्य के सम्मुख अंधकार कम ठहरे।

फिर श्री पूज्य महाराज ने चौमासे के पक्षबात् जेजों (पयराबासी) में सवेगीमों को पराजय किया।

इस प्रकार हुशोभारपुर में भी बहुत से प्रदोत्तर होते रहे किन्तु आत्माराम जी प्रतिमा पूजन सूत्रों से नाही सिख कर सके तब ही हुशोभारपुर में लाला यदूराय जी, लाला चौकसमवल, कृपाराम चौधरी इन मारियों ने आत्माराम जी के कथन को सूत्रों से विरुद्ध बात करके श्री पूज्य महाराज से अच्छी प्रकार निर्जय करके श्री पूज्य महाराज से ही सम्यक्त्व धारण करी और तपागच्छ को सूत्रों से विरुद्ध जान के त्याग दिया ॥

पाठकजनों ! हमारे प्रिय संवेगी मारियों को भाय तीर्थकर्तों से भी विष का अधिक राग है और इसी वास्ते भाय तीर्थकर्तों के उप देश का यह लोग अनादर करते हैं और लिखते भी इसी प्रकार हैं जैसे कि सम्यक्त्वशब्दोद्धार के १३४वें पृष्ठ पर श्री आत्माराम जी लिखते हैं कि, भावतीर्थकर धोपण महाकुर्मती सेने उथापे छे पाय छे रावादि।

(समीक्षा) देखिये भाय

सीखी। तब मामना ही पड़ेगा कि आत्मारामजी का जातिही स्वभाव या इसी वास्ते सच्चाई की सूत्र में लिखा है कि, काति कुछ शुद्ध होना चाहिये, पाठकगण हम आत्माराम जी के कथन की कथा समीक्षा करें हम को तो ऐसे कथन भी भाषण करने कल्पते नहीं हैं किन्तु आत्माराम जी शीघ्र ही अपने कहे कथन से पृथक् भी हो जाते थे ? जैसे किसी श्वेताम्बर ने आत्माराम जी से प्रश्न किया कि महात्मा जी अब आप भाव नार्थकर से प्रतिमा को अधिक मानते हो फिर उस प्रतिमा को स्थिर संघट्टा क्यों करती हैं तब इस बात का उत्तर महात्मा जी सम्यक्प्रत्यक्षोंद्वारा के १३६ वें पृष्ठोपरि इस प्रकार लिखते हैं ॥

प्रतिमाछे ते स्थापनाकप छेमाटेतेने स्त्री सघटमां काइपण दोप नयी कारण के ते काई भाषभरहत नयी पण भरहतनी प्रतिमाछे इत्यादि ।

(समीक्षा) पाठकगण देखिये, उक्तप्रश्न होने पर आत्माराम जी ने अपनी लेखनी को किस मोर करलिया है इस से सिद्ध होता है आत्माराम जी परस्पर विरुद्ध लिखने में भी किञ्चित् सकुचित भाव नहीं करते थे, क्योंकि प्रथम लेख में भाव तीर्थकर से प्रतिमा अधिक लिख करी है इस लेख में भावमूर्तप्रतिमा से अधिक लिख दिय है ॥

फिर यह लोग तपकर्म नी सूत्रों से विलक्षण ही करते हैं जैसे कि, जिस नगर में जिन मंदिर नहीं होता वहां पर यह लोग यह भूमिग्रह करके बैठ जाते हैं कि जब तक आप लोग मन्दिर नहीं बन पायेंगे तबतक हम तुम्हारे नगर में पारणा नहीं करेंगे ॥

तब बहुत से मोठे भाई इस प्रपक्ष को ना जानते हुए इस गोरख माल में फंस जाते हैं फिर पट्काया की हिंसा में कटियय होजाते हैं किन्तु विचारशीलगृहस्थ इस बंधन से युक्तिद्वारा मुक्त (छूट) हो जाते हैं ॥

जैसे कि, जीरे नगर के समीप एक खडखड नामक ग्राम
वसता है तिस ग्राम को सिद्ध करने के वास्ते कई सधेगी जन पधार
गये फिर जावे ही तपसा करवी ।

फिर माईयों ने विषयि करि कि स्वामी जी पारणा करो
अर्थात् घरोते दुग्धादि लेभाघो ।

तब सधेगी जन कहन लग कि याधन् काल भाप लोग भी
मंदर जी की नीब यहीं रखेंगे तावत्काल हम यहाँ पर पारणा नहीं
करेंगे तब सुभावकों ने कहा कि यह तो तब हमने किसी भी सूत्र में
नहीं सुना तथा फिर भी हमारी इच्छा भाप के तब हम पी भंतराय
लेने की नहीं है क्योंकि एक तो भाप के तब की हम भंतराय लेयें
द्वितीय पद फाया के बघ करने वाले बनें तृतीय अर्हत् भाषा से
बिदख होयें इसलिये यह काम हमारे से नहीं बन पड़ता सो महाशय
जी जितनी भाप की इच्छा है याधतपद्मास पर्यन्त तपसा करें ।
जब इतना भावकों ने कहा तबही सधेगी साधु तपकर्मको व्युत्पन्न
करके विहार हो करगये । मियपाठ को यह सधेगी लोगोंके तप कर्म हैं ।

अपितु श्री पूज्यमहाराज देश में अवधिज्ञय करते हुए तथा
हांसी भादि नगरीमें जो तेरा पंथीनामक एक जैनमतकी नूतन शाखा
प्रचलित हो रही है जा कि भद्रिस्ताधर्म से विदख कार्य कर
रही है तिस को भी पराजय करके श्री पूज्यमहाराज १९५१ में
लुधियाने में पधार गये किन्तु लुधियाना में परम पूज्य दागित
मुद्रा श्री संघ के द्वितीय परम पण्डित महत् प्रययातिपुत्र
जिन की परमपवित्र धाम् शक्तियो आयाद्वैषय्य श्री मोतीराम जी
महाराज पिराजमान थे । तिस समय में ही श्री छालचन्द्र जी
महाराज श्रीगोविन्दरामजी महाराज । श्रीशिवदयाल जी महाराज ।
श्री गणाधछेदिक श्री गणपतिराय जी महाराज, श्री मयाराम
जी महाराज इत्यादि ४२ साधुओं के अनुमान प्रकाश हुए भीर श्री
मन्निमाध्या पार्यंती जी परमुक्त बहुत श्री आर्याय भी परम

हैं, और अनुमान ७१ नगरों के बहुत से आश्रकजम भी दर्शनाथें
 गये हुए थे और फिर महान् महोत्सव के साथ दो दोहा भी हुई ।
 श्रीपरमाचार्य श्रीमोतीराम जी महाराज ने भी सघ की
 स्मृत्यानुसार भोसोहनलाल जी महाराज का १९५२ चैत्र शुक्र ११
 गुरुवार पक्ष पर स्थापन कर दिया ॥

और श्रीमती आर्यापार्वती जी को गणावच्छेदिका की पदवी
 दी गई पुनः आनन्द को साथ महोत्सव पूर्ण हुआ ॥

किन्तु तिस समय में एक पुरुषोत्तम नाम का सवेगी भारमाराम
 जी के आचार को कुरित देख कर श्रीपूज्य महाराज के पास
 शिखित हुआ ॥

प्रश्न—हमने सुना है आप लोग जिस सूत्र में मूर्ति पूजा का
 विधान आता है वह सूत्र लोगों को सुनाते ही नहीं जेकर सुनाते
 वह पाठ जो मूर्ति पूजा को सिख करता है उसे छोड़ जाते हैं और
 सूत्रों में जो जो पाठ मूर्ति पूजा से सम्बंध रखते हैं उन को
 डवाळ से मिटा देते हैं सो क्या यह कथन सत्य है ॥

उत्तर—हे भग्य ! यह सर्वकथन मिथ्या है उक्त कार्य हम
 ही करते हैं और नाहीं सूत्रों में मूर्ति पूजा का विधान है ॥

सो इस प्रकार भारमाराम जी भी अपने बनाये *महान तिमिर
 नास्कर नामक ग्रन्थ के द्वितीयखंड के २९४ पृष्ठ पक्ष १४वीं से
 इस प्रकार से लिखते हैं ॥

प्रश्न—हमने कहा है जो सूत्रों में कथन करा है सो पुरुषण
 करे जो पुनः सूत्र में नहीं कहा है और विधादास्य लोक में है कोई
 उसे कहता, और कोई किसी तरह कहता है तिस विषयक जो कोई
 ऐसे तब गीतार्थ को क्या करणा उचित है ॥

उत्तर—जो वस्तु अनुष्ठान सूत्र में नहीं कथन करा है करणे

* यह द्वितीयापुष्टि के पत्र का प्रमाण है ।

, योग्य कैयटद्वन आकृष्टकद्विधत और प्राणातिपात की तरह सूत्र में निषेध भी नहीं करा है और लोगों में चिरकाल से रुढिरूप घटा आता है सो भी ससार भौक गीतार्थ स्वमति कल्पित दूषणे करी दूषित न करे गीतार्थों के चित में ये बात सदा प्रकाश मान रखती है सोई दिखाते हैं इत्यादि ॥

फिर पृष्ठ २९६ पक्ति ४थी पर लिखा है कि चिरंतन जनोंमें आचरण करो है तिस को अवधि कहकर के निषेध करते हैं, और कहते हैं यह क्रियाओं धर्माजनों को करने योग्य नहीं हैं किन किन क्रियाओं विषय ॥

चैत्य कृत्येषुस्नाय विषप्रतिमा करणादि तिन विषे पूर्ण पुण्यों की प परा करके जो विधि चली आती है तिस को गविधी कहते हैं और इस काल की चलाई का विधि कहते हैं ऐसे कहने वाले अनेक दिखलाई देते हैं ये महासाहसिक हैं ॥

प्रश्न—तिनोंने जो प्रवृत्ति करी है तिसको गीतार्थ प्रशंसे के नहीं प्रशंसे !

उत्तर—एक प्रवृत्ति को विगुदागम बहुमानसारभया है जिन की ऐसे गीतार्थ सूत्र संवाद न बना अर्थात् सूत्र में जो नहीं कथन करा है तिस विधि वा बहुमान नहीं करते हैं किन्तु तिसका अवधीरण अर्थात् निरादर करके मध्यस्थ भाव से उपेक्षा करके सूत्रानुसार कथन करते हैं ओठा अनोंका उपदेश करते हैं इत्यादि ॥

समीक्षा—पाठनगण उक्त कथन में आमाराम जी स्पष्ट तथा सिद्ध करते हैं कि जैन सत्रों में कैयटद्वन का विधान नहीं है किन्तु चिरकाल से रुढिरूप घटामाना है । सो सत्य है हम इस कथन को सत्य स्वीकार करते हैं । किन्तु जो सवेगीजन, यह कहते हैं कि सत्रों में क्या १ पर मति पजा का विधान है परंतु इन्होंने

दिखाते नहीं हैं सो क्या वे असत्य भाषण नहीं करते तथा क्या वे सूत्रों से अनभिज्ञ नहीं हैं अवश्य हैं ॥

क्योंकि यदि सूत्रों में भारमाराम जी को मूर्ति पूजा का पाठ मिलता तो फिर वे ऐसे क्या लिखते कि सूत्रों में शैत्य चरुन का विधान नहीं है सो एक कथन से सिद्ध ही होगया कि भारमाराम जी को कोई भी मूर्ति पूजा के विषय में सूत्रों से पाठ जब न मिला तब ही भारमाराम जी ने ऐसे लिखा ॥

किंतु जब भारमाराम जी मूर्ति पूजा को रुढ़िरूप जानते हैं तो फिर भद्र जीवों को सूत्रों के नाम से क्या धन में डालते हैं सो यह इन का दृढ है ॥

फिर लिखा है कि यह बात गीतार्थों के धित्त में सदा प्रकाशमान रहती है सो सत्य है क्योंकि गीतार्थ ही इस बात को सूत्रों से विरुद्ध ज्ञानके अर्थ पूजा का निषेध करते हैं !

सो वे स्वर्गी लोगो अब तो भारमारामजी के ही कथन को स्वीकार करके जैन सूत्रों में मूर्ति पूजा खली है इस असत्य रूप वाणी को छोड़ो ! यदि आप लोग भारमाराम जीसे अधिक विद्वान् हो तब तो भारमारामजी के लेख को असत्य रूप सिद्ध करके प्रकाश करो यदि भारमारामजी से स्वल्प विद्वान् हो तब इस असत्य कथन को त्यागो । फिर भारमाराम जी शैत्य चरुन को रुढ़िरूप सिद्ध करते हैं ! सो भी यह कथन युक्ति बाधित ही है ।

क्योंकि यह रुढ़ि भी पदरूपा के वध रूपत्याग्य है जैसे हिंसक पर्य, फिर विचारनीय बात है यदि यह रुढ़ि सत्य रूप होती तो सूत्र कर्ता मूल सूत्र में ही रखते ।

अब सूत्र कर्ता ने मूल सूत्र में उक्त कथन को रखा ही नहीं इस से सिद्ध होगया कि यह कार्य सूत्र कर्ता ने विरुद्ध है अर्थात् सूत्र सम्मत नहीं है । और श्रीपूज्य महाराज का १९५३ का बोनासा

हुशियारपुर में था तिस काल में ही वीर विजय भादि संयोगियों का भी चौमासा हुशियारपुर में था किन्तु कोई भी सवेरी भीमहाराज के सम्मुख नहीं हुआ ।

फिर श्री पूज्य महाराज ने १९५८ का चौमासा मालेरकोटसे में किया । और तिस समय ही श्री परमाचार्य शास्त्रि मुद्रा भान में समुद्रघात श्री पूज्य मोतीराम जी महाराज या श्रीगणपतिदेविक श्री गणपतिरायजी महाराज इत्यादि साधुओं का चौमासा हुशियाने में था तब श्री पूज्य मोतीरामजी महाराज को जबर माने लगा मरितु सर्वास्ती की प्रति वृद्धि हो जाने से तथा आयुस्वल्प होने के कारण से श्रीपूज्य महाराज १९५८ गार्हपत्य कृष्ण द्वादशी को स्वर्ग गमन हो गये ।

तब चौमासे के पद्गात श्री गणपतिराय जी महाराज या श्री लाल चन्द्र जी महाराज इत्यादि २५ साध पटियाले में एकत्र हुए फिर श्री रुघने सम्मति करके भग्याला निघासी लाल उज्जमन्स अल्ला मरुत या मरुतसर निघासी भावरी की सम्मति क साथ या भीमान् छाळाशिशुराम पटियालायालेकी भी सम्मति अनुकूल्योसंधने महान् मानद के साथ, श्रीपूज्य मोतीरामजी महाराज की भाकानुबूझ १९५८ मार्गशीर्ष शुक्ल ८ मी का वृद्धस्पति बार के दिन मर्यान्ध के समय पूर्णक पिपि के साथ श्री रुघने श्री स्वामी सादतलासकी महाराज को श्रीमाचार्य पद पर स्थापन कर दिया तब से ही पर्वों में श्रीपूज्य सोदमलाल जी महाराज ऐसे लिखना आरंभ हो गया और श्री रुघने शास्त्रि के प्रमाण से अनेक धार्मिक कार्य होमे लगे या हो रहे हैं ।

मरितु श्री पूज्य महाराज भगवत पर्यमान स्वामी के ८९ पक्षों परिराजमान हैं ।

श्रीपूज्य महाराजने जैनधर्म का प्रकाश प्राप्त मण्डोमें करके १८९१ वा चौमासा मृतसर में किया ।

फिर श्रीमाता को पश्चात् अघायल क्षीण हो जाने के कारण वा शरीर में उपवास के प्रयोग से श्री पूज्य महाराज अमृतसर में ही श्रीमान् छाळा हरनामदास सतछालकी कोठीमें विराजमान होगये ॥

किन्तु श्री भाचार्य महाराज के पधारने से अमृतसर में धार्मिक अनेक कार्य हुए वा हो रहे हैं ।

प्रिय पाठको ! एक घात और नो तपागच्छियों में बड़ी प्रधानता से चल पड़ी है कि किसी भगवान् मुनि को यह लोग किसी प्रकार के फंदे में घेष्टन करके अनात्म जैनधर्म से पतित कर देते हैं । फिर आपही असत्य रूप निंदा लिख के उस के नाम से मुद्रित कराते हैं पुन कहते हैं, भाग्यो यह प्रथम दूढ़िया था फिर इसने दूढ़ियों का अनिष्टाकरण देख कर तथा जैन सूत्रों में रूपान्तर मूर्ति पूजा के पाठों को पढ़कर (जो पाठ दूढ़िये किसी को सुनाते नहीं) विचार किया फिर सम्यक्त्व शक्त्योद्धार को देखा तब ही इस के चित्त में मूर्ति पूजा अर्हत् मार्गपतस्थित हो गई फिर इसने बड़े २ दूढ़कों के साथ प्रदमोत्तर किये किन्तु किसी भी दूढ़क ने इस को उत्तर नहीं दिया, तो फिर इस ने जान लिया कि यह दूढ़क मत तो स्वयं कपोल कल्पित ही है पुन इसने शुद्ध अनात्म जैनमत मूर्ति पूजा रूप स्वीकार करलिया, प्रियपाठको ! यह सब इनके स्वकपोल कल्पित कथन हैं हम आपको इस विषय का उदाहरण देते हैं ॥

जैसे कि अनुमान १९१४ वर्ष में वल्लभ विजय जीने अमृतसर से एक खूनीलाल दयेताम्बर साधु को किसी प्रकार अपने फंदे में डाल कर बनारस जैन पाठशाला में भेज दिया । और उसको एक लेख भी जैनमत की निंदा रूप लिखकर भेजा और साथ में यह भी लिख दिया कि आप अपने नामोपरि इस लेख को प्रकाशित करा दो तो खूनीलाल जी ने एक पत्र लिखकर वल्लभ विजय जी को भेजा जो पाठकों के जानने वास्ते सर्व पत्र की मकल जैसी है वैसी ही हम इस रूपान्तर पर देते हैं देखिये ।

श्री जिनेन्द्राय नमः ।

विदित हो कि जो मज्झिम यथा कर आपने छपवाने के वास्ते मेरे कु मजा सो ऐसा मित्र रूप जुठा लेख मैं अपने नाम पर नहीं छपवा सकता भागें नि आप को लिखा गया था सख्त लेख मैं अपनी तरफ से नहीं छपवा सकता अगर हरज मरज के जम्मेदार आप बनो तो मेरे को कोई हरकत नहीं ॥

और आपने जो यहाँ मेरे को पढ़ने के लिये भेजा था तो मैंने पहले आप को कहे दिये था कि पढ़कर जो मेरे को साथ लावेगा सो ग्रहण करेगा जब मैं पन्द्र तलाजे मैं था वहा से नि आपको लिखा गया था के मेरे क्याल अजे आपके मज्झिम के नहीं हैं तो आपने एक पत्र में लिखा था कि तुम आचार गुहार मत देना पढ़ने कि तरफ क्याल रक्खा, पढ़करके जा तुम को भड्डा लगेगा सो करता तो फिर आप यां लिखते हो के उनके घरकलाफ छपामो और लोगो को लिखते हो के इसकी दांका ठीक करो इस वास्ते आप को कुछ प्रदन लिखता हूं क्योंकि ! यां तो कोई ठीक करन वाला नहीं हैं सो आप ही छपा करके दांका का समाधान करें जो मैं प्रदन लिखता हूं उनका सुबाष मेरे को मूल पत्राछोस भागों के जरिये आमानद पत्रका छाहीर में छपवा कर प्रगट कर दो क्योंकि मेरी दांका नि ठीक हो आवेगी तदनंतर दुसरे प्राणीयो को लान होगा इन प्रदनों का जबाब पम्प रोम के निष्ठर आमानद पत्रका छाहीर में प्रकाश करवें भागों अनुसार अब प्रदन लिखते हैं ।

प्रदन १—जो पम्प प्रतीकमप्य तुम तथा सुमार सेपक (भाषक) करते हैं वो पंतालिस भागों से किस भागमें हैं ।

२—इच्छाकारिसुहरार, ये जो गुरु को ज्ञाता पुछने का सूत्र हैं सो किस भागमें हैं घळा है ।

३—सामायक पारने का सामायपयमुत्तो जो सूत्र हैं सो क्या है ।

४—अगर्हितामणि शैत्यवन्दन मन्त्र पढ़कर 'मुरती को नमस्कार करनी किष्ट शास्त्र में लिखी है।

५—नमोऽर्हत् सिद्धाचार्यो पाश्याय सर्व साधुभ्य ये मंत्र किस भागम में है।

६—जावति खेरयाह किस भागम में है।

७—उयसगदुर लघुशान्तीस्नव जो प्रतीक्रमण में थोड़ने हो किस शास्त्र में लिखा है के प्रतीक्रमण में स्तोत्र पढ़ने।

८—प्रतीक्रमण में स्तवन और सज्जाय थोड़ते हो सो कोण से भागम में चले हैं।

९—तीर्थ चन्दगा जो तुमरे पंच प्रतीक्रमण में है सो किस शास्त्र के जरीये।

१०—पोसहनुपठघफकाणवा पोसहपारखानी गाया किस भागम में है जो तुमारे मन्त्र में प्रचलित है।

११—सिद्धाचल पर्यंत को शैत्यवन्दन करनी ये कहाँ लिखी हैं।

१२—पाळीठाने के पास जो सेतकंजी नदी है उस में स्नान करना महारम किस भागम से बतलाते हो।

१३—हड्डें और कोपरा जंगहड्डें इत्यादि घस्तु अनाहारक कहते हो सो किस भागम में ऐसी घस्तु को अनाहारक लिखा है साथ इस क ये भी निरणे किया जावे के पूर्वोक्त घस्तुओं को जो तुम रात्री में खाते हो सो तुमारा रात्री भोजन घन मङ्ग होना है या नहीं।

*पत्र जैसे लिखा हुआ था वैसे ही यहाँ पर लिखा गया है किन्तु हमने पत्र को शुद्ध करना ठीक नहीं ज्ञातकरा क्योंकि लेखक की जो भाशा है वह मध्यजन शीघ्र ही जान लेंगे इस प्रकार अन्य पत्र भी शुद्ध नहीं किये गये, तथा यदि शुद्ध करके द्वितीया बार लिखते तो पुस्तक के अतीव बृद्धि होने का भय था।

१४—अथमा धातु की खड़ीवाला हीलहर याने धातु की कलमें और पस्त्र रखने के लिये टोनकीयां घेड़ीया जिनत की खोपा मसवार क लिये और भाने की वस्तु शुद्ध इलायचीयों का तेल हर्बे देवार पैगेरा ये सर्व प्रगरे में दाखल हैं या नहीं और ये कैसेछा किया जावे के जे हैं तो तुमारा पधमा महा प्रस प्रगरे और छठा रात्रो मोजन यन मङ्ग बुमा यां ना लेकर कहां के ये भिजे प्रगरे में सामल नहि तो घतलाभो किन में शामल है भागम से जवाय देना ग्रंथ का हवाला नहीं मजूर ।

१५—हर्बे जो हैं सखित हैं के भवित ।

१६—मूर्ति पूजा का उपदेश चौथी तीर्थकरो में किस तीर्थकर महाराज ने किया ।

१७—मरुत जो न चौथीन तीर्थकरो कोया चौथो मर्चाया घन पाइया बतलाते हा सो किस भागम में लिखा है ।

१८—मूर्ति पर सखित जल वा पुष्प फलादि चढ़ाने से प्राणाती पातादिक दोष लगता है या नहीं ।

१९—जैसे उत्तराश्वयन मगयती जो में प्रस पोषध समाइक पुछना पलेना भादिक का फल लिखा है ऐसे किनि भागम में मूर्ति पूजा का फल लिखा है ज चला है ता लिखो, किस भागम में चला है ।

२०—तुम लोक पेदाय यमानी के वकन इनतेमाल करते हा मीर करते हा देवार में कोइ हरकत नहि तो कहां लिखा है ।

२१—जिस बियाल में पेदाय करते तो उसको फिरना पुछते हो और ना घोते हो ता कथा उम में छनोउम जीय पढ़ने हैं के नहीं ।

२२—देवने धर्मी हैं के मधर्मी हैं मयाय में शास्त्र का पाठ लिखता ।

२३—तीर्थकर बहने का होन कथा है ।

२४—मुह पछी हाथ में रखनी किन भागम में चली है ।

२५—इस्यै कालिक भाचारंग जी में जो घोषन मत मा चावला विक का बला है वो कभी महि लेते क्या कारण ।

दसखतचुनीलाल ।

पाठरुग ! इन ग्रन्थों का उत्तर भारमाराम जीन पथि का मैं प्रकाशित नहीं हुआ है विचारणे की बात है हमारे प्रिय सवेगी भाई सत्यादि ग्रन्थों को त्यक्त करके क्या २ काम कर रहे हैं क्योंकि सवेगमत में *शास्त्राभ्यास तो स्वल्प ही है किन्तु मन कल्पित रूप ग्रंथों का अभ्यास महान है इस वास्ते इन लोगों की बखि बिह्वल हो रही है, और फिर यह हमारे प्रिय भाई इसि वास्त ग्रन्थ का उत्तर न माने से शोध ही क्रोध करने लग जाते हैं मुझ से अपशब्द बोलते हैं ।

उदाहरण ! जैसे कि सम्बन् १९४७ में भारमाराम जी कसूर (कुशपुर) में ठहरे हुए थे तब श्री दयेताम्बर स्यानक वाली भावक समुदाय जैसे कि लाला जोषणशाह गजधामेशाह जीधवेशाह, दिवानचंद, कृपाराम, लाला भासाराम, गुरुविचेशाह, मुनिचंद, मानेशाह, बिच्छेशाह, लाला गीरीनंदरशाह बाबू परमानंद पलीडर मातोराम, इत्यादि भावक भारमाराम जी के पास गये और यह ग्रन्थ किया !

कि आप हमको एक जैन शास्त्र के मूल पाठ से मूर्तिपूजा सिख करके दिखलायें !

भारमाराम जी—जैनशास्त्र में मूर्तिपूजा का विधान है ।

*भारमारामजी के जीवन चरित्र के पढ़ने से भी निश्चय होता है कि। भारमाराम जी ने जो कुछ पठन किया है वे सर्व श्री दयेताम्बर जैन मुनियों से ही किया है किन्तु सवेगमत के धारण करने के पदयात् किसी भी सवेगी से काह मा पुस्तक नहीं पढा है ।

गुरुक नामों से कई भावक जन मा माराम जी के पास नहीं गए थे और कद अन्य मिल गये थे ।

आयकर्मडल—कोनसे सूत्रमें है ॥

आत्माराम जी—दशवै कालिक सूत्र में है ॥

आयकर्मडल—हम भापकी भीमान लाला हरजसराय जी।
महार से दशकालिक ला देते हैं भाप हम को पाठ दिखला दें।

आत्माराम जी—भच्छा लादा।

आयकर्मडल ने जब भीमान् लाला हरजसरायजी को महार में
से श्री दशवै कालिक सूत्र लाकर आत्माराम जी को दिखलाया
और कहा कि भाप इसमें मूर्ति पूजा दिखलाई तब आत्माराम जी ने
श्री दशवै कालिक सूत्र के पोछे जो चूलिका लिखी होती है उसमें
से एक गाथा दिखलाई तब भी आयकर्मडल ने कहा कि यह
सूत्र की गाथा नहीं है और भाप की प्रतिज्ञा यह थी कि हम श्री दशवै
कालिक सूत्र से दिखलायेंगे सो चूलिका न सूत्र है नाहो प्रमाणिक है
और इसका फल कौन है ?

जब इतना आयकर्मडल ने कहा तब आत्माराम जी बोला
तुम्हें होगये फिर अनुचित शब्द बोलन लग गये क्या जाने आयक
मडल भच्छे मुहूर्त में न गया होगा जिस वास्ते आत्माराम जी तपगये।

तथा श्री सूत्रवृत्तग में ठीक कहा कि (भा उसे सरण जति) अर्थात्
हारे हुए पुरुष को काय ही का शरण है, सो इसी प्रकार आत्माराम
जी ने श्री आयकर्मडल के साथ परीक्षा किया ॥

मित्रगण, यह सबेगी लोग चाय शब्द से ही मूर्तिपूजा सिद्ध
करणी चाहते हैं सो यह वही चैय शब्द है जिस के विषय गमरवत्र
में ऐसे उल्लेख है यथा :—

(सत्यमायतन इतिमायतन मन्त्र्य) अर्थात् चाय और आवतन
यह दोनों नाम यज्ञशाला की मूर्ति के हैं ॥

जिस को सबेगी लोग मूर्ति पूजा में व्यवहृत करते हैं शोक ॥

प्रश्न—मूर्ति ध्याय का कारण है इस लिये ही पूजन योग्य है ॥

उत्तर—मित्रवर ! यह भी कथन भाप का हास्ययुक्त है क्योंकि कारण के सदृश ही कार्य होता है सो चेतन का कारण अक्षरूप नहीं हुआ करता यदि मूर्ति कारण मानोगे तो यथा कार्य पर्वत बनावेंगे इसलिये चेतन के ध्यान का कारण जीव अजीवकी अनुप्रेक्षा ही है ॥

प्रश्न—जैसे सामायिक करने में भासनादिक की आवश्यकता है इसी प्रकार ध्यान के समय में मूर्ति की आवश्यकता है ॥

उत्तर—हे मय्य यह भी भाप का कथन अमाननीय है क्योंकि भासनादिक की आवश्यक में केवलजीवरक्षा के वास्ते ही आवश्यकता है ना कि भासन पूज्यनीय है फिर जो महारमा जिनकल्पो होते हैं वे भासनादि के भी त्यागी होते हैं इस लिये यह भापका हतु काय साधिकनहीं है फिर* भासन अपूज्य है इसी प्रकार मूर्ति भी अपूज्य है। तथा तत्त्वनिर्णय प्रासादनामक ग्रंथ में जितने विगम्यरों की ओर से आत्माराम जी ने मूर्तिविषय आक्षेप तो लिखे हैं किन्तु उनका युक्तिपूर्वक एक भी उत्तर नहीं दिया है अपितु उन उत्तरों से मूर्ति अमाननीयही सिद्ध होती है। यथा उदाहरण तत्त्वनिर्णय प्रासाद स्तम ३१ वां ॥

प्रश्न—अब जिन प्रतिमा जिनवर के समान मानने हो तो फिर जिन प्रतिमा के लिङ्ग का चिन्ह क्यों नहीं करते ।

उत्तर—जिनेश्वरके तो भतिशय के प्रभाव से लिंगादि नहीं दीखते हैं और प्रतिमाके तो भतिशय नहीं है इस वास्ते तिस के लिंगादि दिख पड़ते हैं इत्यादि ।

प्रियधरो ! देखिये जब जिन प्रतिमा को कोई भी भतिशय नहीं है तो फिर उस को भाय तीर्थंकर से भी अधिक मानना सो क्या यह हठ धर्म नहीं है अवश्य है । तथा जो पदार्थ भाप ही गूढ रूप है वे शान

* केवल भासना पूज्यनीय नहीं होना है किन्तु भासनारूढ जीव गुरु रूप पूज्यनीय है अर्थात् अद्वितीय है ॥

दाता कैसे बन सका है। हमीलिये यह मूर्तिपूजा युक्ति वा सूत्र द्वारा
 बाधित हो है। तथा जिन प्रकार यह लोग मूर्तिपूजा में हठ करते
 हैं इसी प्रकार मुखपति विषय में भी यत्नाव करते हैं जिस के लिये
 अनक सूत्रों वा ग्रन्थों के पाठ हाते हुए भी यह लोग मुखपति हाथमें ही
 रखते हैं सो शिष्टासूत्रों। इस के प्रमाणार्थे जैमहितेच्छु, पत्र ईस्वी
 सन् १९०६ माह जुलाई, अंक ६ पृष्ठ ६ से देखिये —

भीमान् संपादक यादोलालजी लिखते हैं कि मुखपति का सवाल
 के जिसको हमने यिलकुल छोड़ दिया था उसको छोड़ के गंभीर रूप
 देने वाले भाइयो खुद जिन किताबों का मानते हैं उन किताबों का
 भूमिमाय यहां बतलाते हैं। मुखपति पाटा, दाढ़ी, और जो तरकी
 भिन्नता ॥

हित शिष्टाराज ! श्री विजयसन सूरि के प्रमाणिक आधार में
 संवत् १६८२ में बनाया है उस में लिखा है कि :—

मुखबाधेते मुखपति, हेठीपाटोधार ।

अतिहेठेदाढाथड़, जोतरगलेनिवार । १।

एक कान धज सम कह्यो, खमे पछेवड़ी ठाम ।

केढेखोशीकोथली, नावे पुण्य ने काम ॥ २॥

सब इस हास्य रस युक्त काव्य में मुखपति का हेतु बराबर सम-
 जाया है। टेढ़े में पैसे की कस्तनी बांध रखने से क्या पुण्य होगा।
 पैसे की कम्मो तो नात में रखने से हो उपयोगी भो लघ्वि विनयजी,
 साधु किस को कहते हैं सम्यक् १८१० में श्री लघ्वि विनय जी महा-
 राज ने, हरिबल मच्छी का रास बनाया है उस में प्रमाण संबंधी रूप
 के बारे में उपदेश दिया है कि :—

सुलभग्रोधी जीवडा मांढे निज षट्कर्म,

साधुजन मुखमुपति बाधी कहे जिन धर्म ॥ १ ॥

सुविहितमुनिजानीये मांहे निजषट्कर्म ॥

साधुजन मुखमुपति बाधी कहे जिन धर्म ॥ २ ॥

श्री ओघनिर्युक्ति गाथा १०१६-१४ की पूर्णी ।

चउरगुलविहस्थी पर्यमुहणतगस्सउपमाण बीय
मुहप्पाण गणणपमाणेणइक्किरुं । १ ॥

सपाइमरयेणु पमझणठावयतिमुहपत्ति नासं-
मुहच बधइ तीएवसहिपमज्झतो ॥ २ ॥

सपातिमसत्त्वरक्षणार्थं जलज्जिर्मुखेदियतेरजः स
चितरेणुस्तत्प्रमार्जनार्थं मुखवस्त्रिकावदति नामिकां
मुखचवध्नातिपयासुखवस्त्रिकयावसतिप्रमार्जयन्धे
नयेनमुखादोनरज प्रविशति । श्रीप्रवचनसारोद्धार
गाथा ॥ ५२६ ॥ सपातिमजीवमाक्षिकाया रक्षणार्थं
भाषमाणेर्मुखेमुखवस्त्रिकादीयतेतथारज सचितपृथ्वी
स्तत्प्रमाज्जनार्थं च मुखपातिकां दीयते ।

रेणुप्रमाज्जनार्थं प्रतिपादयति तीर्थंकरादयस्तथा
वसति प्रमाज्जयन् साधुर्नासा मुख च वध्नाति आ-
छादयति । पुरिमट्टका प्रायश्चित्त ।

श्री महानिशीथ में मुखवस्त्रिका यगैरह हरिया पदिया पक्षिक में
वध्ना—प्रति क्रमण मज्झायकरोषावनादे—छेतो पुरिमट्ट का पावदियत
कहा है—योगशास्त्र की दृष्टि में बाधना पृच्छना के वधत मुहपत्ति
बाधना कहा है ॥

ऐसा कह कर पृथक्ता में गौतमस्वामी के एक हाथ की अंगुलि पकड़ के रस्ते में बार्ते करते करते दोनों चले । अब जब एक हाथ में छोड़ी है और दूसरा हाथ पृथक्ता में रोका है तब (जो मुह के भागे मुह, पत्ती नहीं बांधी हो तो) क्या गौतमस्वामी खुल्ले मुह से घात चीत करते गये होंगे ॥

इस तरह से चारों बाजु से विचार करने से मुह पत्ती साधित होती है ऐसा होकर भी एक फलत मत की धान है कि कितने उसको मग्धर उठा देते हैं । व्याख्यान के वक्त भी मुह पत्ती नहीं बांधने वाले वर्ग के साधुओं को बाद मरने के उनके कान छेद के मुह पत्ति बांधनी पड़ती है इससे सुस्थिति तरह से दुराग्रह साधित होता है । जिस मुह पत्ती को शास्त्र स्थापन करता है जिस मुह पत्ती का उपयोग पारसी भाषि अन्य धर्म के गुरु भी धर्म क्या वस्तु करते हैं ॥

जिस मुह पत्ति को हाल के सुधरे हुए जमाने के युरोपियन डाक्टर विरफाड के वक्त मुह के भागे बांधते हैं ॥

जो मुह पत्ति खुद नहीं बांधने वाले आत्माराम जी महाराज वहाँ में मान्य रत्नी और खुद क्यों नहीं बांधते इस के समय बतलाने में पकड़े गये और अपने वर्ग में झूठे पड़े ॥

ऐसी मुह पत्ति जैन मुनि का चिन्ह है । जैन योग्य का हथियार है जैन शासन का झुगार है और सब को माननीय है ॥

नामा में दो वक्त उसका जय हुआ यह कुछ भावपूर्ण बातों नहीं उसका सर्वप्रथम प्रवेश विजय ही है लेकिन जिस का नाम मुह पत्ति मुह पत्ति मुह को कबजे में रखने वाली उसका धर्म का यात्रा चिन्ह मानने वाले लोग उनके निरर्थक के मुवाफिक खर्चा के यहाँ से कमी पड़वा तदुदा मिथ्या भाषण सुकृष्ट श्राव्य बोद्धे ही नहीं मुह ऊपर का यह कबु के जो सज्जनार्थ वा लक्षण है उस को वज्रियाकार लोग निर्बलता ठहराने उससे क्या मुह पत्ति के मऊ निर्धल यम जायेंगे गौतम की छवि से कौण मजात है ॥

प्रिय पाठकगण ! यह सर्व उक्त लेख हमने यथावत् उक्त पत्र से उद्धृत किये हैं सो उक्त कथनों से सिद्ध है कि जैन धर्म के सुनियों का विरुद्ध मूहपत्ति मूहपर बाधना ही सिद्ध है सो इतने प्रमाण होते हुए जा संवेगी लोग मूहपत्ति मुख के साथ नहीं बांधते हैं वे उनका असत्य घट है ॥

तथा जो यह लोग सुपुरुषों को पुनः पुनः कटु शब्द प्रदान करते हैं विस क मूल कारण यही है कि जो कुछ पुरुष शास्त्रानुकूल शुद्धोपदेश करता है उस पुरुष से ही यह लोग प्रतिकूल हो जाते हैं और फिर उस को अनुचित शब्द घोलने वा लिखने लग जाते हैं । उदाहरण । जैसे कि श्रीमान् ध्यायक लोका ओ ने सम्वत् १५०८-९ के वर्ष में श्री महमदाबाद में जैन धर्म का शुद्ध उपदेश किया तब ही वह लोग उसके प्रतिकूल हो गये और लोका जी को अनुचित शब्द लिखने लग गये क्योंकि लोका जी सूत्रानुसार उपदेश करते थे ॥

सा जो उपदेश लोका ओ ने किया था विस समय में ही उन्होंने एकविंश ६८ अक्षर युक्त छिन्न लिया था भवितु उसी पत्रका प्रतिकृति जोर्ण पत्र एक हमारे पास है सो उस (जा गुर्जर माया में है किन्तु यहाँ पर हिन्दी करके लिखते हैं) में से कुछ अक्षर या अन्य विस्तार अक्षर पाठकों के आताये इस स्थान पर लिखता हूँ ॥

१ वेबलो भगवान् बिकालक हैं सो उन्होंने तीन काठ का स्वरूप स्व ज्ञान में ऐसे ही देखा है कि सम्यक् ज्ञान, सम्यक दर्शन सम्यक् चरित्र या नववस्थादि के जाने बिना कोई भी जीव मोक्ष में नहीं गया नहीं जायेगा भवितु प्रतिमा के पूजनों से कोई भी जीव मोक्ष नहीं गया है और नाही जायेगा नाही जाता है ॥

प्रिय पाठकगण ! यह सर्व उक्त लेख हमने वधावत् उक्त पत्र से उद्धृत किये हैं सो उक्त कथनों से सिद्ध है कि जैन धर्म के मुनिवों का बिन्दु मूहपति मूहपर बांधना ही सिद्ध है सो इतने प्रमाण होते हुए जो संवेगी लोग मूहपति मुख के साथ नहीं बांधते हैं वे उनका असत्य बत दे ॥

तथा जो यह लोग सुपुरुषों को पुनः पुनः कटु शब्द प्रदान करते हैं तिस का मूल कारण यही है कि जो कुछ पुरुष शास्त्रानुक्त कुछो पदेश करता है उस पुरुष से ही यह लोग प्रतिकूल हो जाते हैं और फिर उस को अनुचित शब्द बोलने वा लिखने लग जाते हैं । उदाहरण । जैसे कि प्रोमान् धायक लोंका जी ने सम्वत् १५०८-९ के वर्ष में श्री महाम्नावाद् में जैन धर्म का शुद्ध उपदेश किया तब ही यह लोग उसके प्रतिकूल हो गये और लोंका जी को अनुचित शब्द लिखने लग गये क्योंकि लोंका जी सूत्रानुसार उपदेश करते थे ॥

सो जो उपदेश लोंका जी ने किया था तिस समय में ही उग्यों ने एकदिन ३८ अंक युक्त लिग लिया था अपितु उसी पत्रका प्रतिकर जोर्ण पत्र एक हमारे पास है सो उस (जो गर्जर भाषा में है किन्तु यहाँ पर हिन्दी करके लिखते हैं) में से कुछ अंक वा अन्य शिक्षावप अंक पाठकों के हातायें इस स्थान पर लिखता हूँ ॥

१ फेपली नगयाम् बिकालह है सो उग्यों ने वीनकाल का स्वरूप स्व. ज्ञान में ऐसे ही देखा है कि सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन, सम्यक् चारित्र्य वा मयतकशादि के आने पिना कोई भी जीव मोक्ष में नहीं गया नहीं जायेगा अपितु प्रतिमा के पूजने से काह भी जीव मोक्ष नहीं गया है और नाही जायेगा ग्राही जाता है ॥

और नाही सूत्रों में किसी मूर्ति पूजक का अधिकार है कि मनुष्य जीव मूर्ति पूजते पूजने मोक्ष हो गया ऐसे सर्वत्र जानसेना । सो ज्ञान दर्शन चारित्र्य से ही मोक्ष है देखो सूत्रकृताग प्रथम अतएव पृष्ठ ११ पृष्ठा ११ ॥

२ जीयरशि भजीयरशि सूत्रों में यह दोनों ही राशि कहों हैं सो यदि कोई तोखने राशि प्रति पादन करे ता वह निम्न है देखा सूत्र उवघाई जी । प्रश्न १९ ॥

३ जो जीय का नहीं जानता भजीर का भी नहीं जानता तो मला समय माग कैसे जान सका है देखा सूत्र दशवैकालिक भ० ४ ।

४ सम्यक्त्व के बिना सम्यक् ज्ञान नहीं सम्यक् ज्ञान के बिना सम्यक् चरित्र नहीं सा सम्यक् ज्ञान सम्यक् दर्शन, सम्यक् चरित्र के बिना मोक्ष नहीं उपाध्ययन सू० भ० २८ ॥

५ साधु स्वल्प भोर असाधु बहुत्व हैं दशवैकालिक सू० भ० ५ ॥

६ साधुओं के पञ्च महाव्रत सर्वथा प्रकारे हैं देश मात्र नहीं इसीवास्ते साधुओं को मंदिर का उपदेश करना सूत्र विरुद्ध है देखा सू० दशवैकालिक भ० ४ ॥

७ ज्ञान बिना क्या नहीं क्या हो समय है सू० दश० भ० ४ ॥

८ भगवान् ने अपने भक्त से (भदिसा सज्जमातवा) यही धर्म धत लाया है नतु मूर्ति पूजा ॥

९ भगवान् श्री चर्यमान स्वामोजी न शांत माहार ग्रहण किया तथा अन्य मुनियों को ग्रहण करने का उपदेश दिया देखो सूत्र आचारंग प्रथम श्रुतस्कंध भ० ९ उपाध्ययन भ० ८ ॥

१० आयक केवली भगवान् का ही प्रति पादन किया हुआ धर्म ग्रहण करे देखो सूत्र उवघाई प्रश्न २० भविष्यु हिंसा धर्म न ग्रहण करे ।

११ जो प्रयत्न है सो भय है किन्तु शेष भय भगर्थ रूप है देखो सू० उवघाई प्रश्न २० ॥

१२ साधु गृहरूपादिसे कोईभी कार्य न कराये सू० नशीय उद्देश १ ॥

१३ *मिथ भाग्य भाषण करने वाला जीव महा मोहमो कर्म की

* भामाराम जी के जीवन चरित्र में जो गुजरानाले के विषय में स्पष्ट लिखे हैं वे सर्व अनुचित हैं ॥

प्रकृति पाघता है सू० समवायांग जी स्थान ३० वां अथवा सत्र दशा
श्रुतस्वयं ॥

१४ मित्र माया सधया ही स्याज्य है देखो सू० द्वायै० म० ७ ॥

१५ सप्तमय चतुर्निक्षेप का स्वरूप अनुयोग द्वार जी सूत्र में है
किन्तु भावनिक्षेप ही बंदनीय है नतु अन्य ॥

१६ साधुके अष्टावश पाप सेवनका त्याग सर्वथा प्रकारे है नतु
देश । सो सब सर्वथा त्याग है तब ममिग्रहादि धारण करके मदिरादि
का घनघामा जिन पूजा का उपवेश करना जैसे हो सकता है, सावध
कर्म सूत्र विरुद्ध है देखो सूत्र० उच्छाद जी साधुवृत्ति ॥

१७ जिस धस्तु पर मूर्च्छां भाव है यही परिग्रह है देखो सू०
द्वायैकालिक म० ६ ॥

१८ भगवान् ने दोनों प्रकार का धर्म प्रतिपादन किया है सूत्र
स्थानांग स्थानद्वितीय ॥

१९ गृहस्थ धर्म में द्वादश प्रत्येकावश प्रतिमा ही हैं नाकि
मूर्त्ति पूजा, देखिये उपासक दशांग सूत्र या दशाश्रुतस्वयं सूत्र ।

२० महर्षि प्रभु ही सूर्यवत् हैं देखो सूत्र उत्तराख्ययन म० २३ ।

२१ साधु के मणिकोटि प्रयासमान है तो बतलाव्ये प्रतिमा का पूजन
किस भांगे में है नवक्रोटी का स्वरूप देखो सू० स्थानांग स्थान ९ ॥

२२ राग द्वेष ही पाप कर्म के बीज हैं उक्ता० सू० म० ३१ ॥

२३ तपादि सुकर्म केवल निर्जरायें हो करे नतु मय्यार्थे ॥

२४ पाप पुण्य यह दोनों ही जब सब होयेंगे तब ही मोक्ष होवेगी
देखो सू० उक्ता० म० २१ ॥

२५ भयम से पतिव दृष्ट की प्रशंसा करो तो मायदिबत भाता
है देखो सूत्र मशीय ॥

२६ दोनों प्रकार का मूल भगवान् ने बतलाया है बाक मूल

पण्डित मृत्यु सो किन किन जीवों का कौन कौनसा मृत्यु होता है
देखो सू० उच्चा० म० ५ ॥

२७ केवली वा १४ पूर्वधारी से लेकर १० पूर्वधारी पर्यन्त सर्व
समभूत है मंदी ओ सूत्र में देखा छीजिये ॥

२८ ओ केवली भगवान् ने अजाधीर्ण कहे हैं वे सर्व मुनियों
को त्यागनीय हैं देखो सू० उच्चा० म० ३ ॥

२९ भगवान् का प्रतिपादन किया हुआ धर्म एकान्त हितकारी
है देखो सू० प्रश्न व्याकरण ॥

३० क्याका ही नाम पूजा है वा यह है प्रश्न व्याकरण सू० म० ६

३१ सर्वैय ही शान्ति का उपदेश करना देखो सू० उच्चा० म० १० ॥

३२ ज्ञानदर्शन चारित्र्य ही यात्रा है ज्ञाता ओ सूत्र वा भगवती ओ
सूत्र में इस का वर्णन है ॥

३३ भगवान् ने सत्ता से पार होने के मार्ग पञ्च संघर्षी
कहे हैं प्र० व्या० ॥

३४ श्री भनयोग्यद्वार जी सूत्र में उभय (दोनों) काष्ठ साधु
साध्वी आवक आविका को पढावश्यक करने की भाषा है नतु मंदिर
पूजने की ॥

३५ सूत्रों में पुनः २ यह उपदेश है कि विद्या चारित्र्य से ही
मोक्ष है नतु मन्त्र से सू० स्थानांग स्थान द्वितीय ॥

३६ जिन वचनों में किञ्चित् मात्र भी सावध उपदेश नहीं है
देखो सूत्र भाष्यकादि ॥

पाठकगण अब श्रीमान् लोकाशाहजी ने इत्यादि प्रश्न पूछे वा
सूत्रोक्त लोगों को सत्योपदेश सुनाया तब ही मूर्ति पूजक जन वा
शिष्याचार्य लोकाशाहजीको निर्वा करने लग गये और उनके लिये
मनुषित शब्द लिखने लगे सो वह वर्त्ताय हम लोगों का दृष्ट धर्मसिद्ध
करता है क्योंकि शुद्ध पूजा मुक्ति मार्ग के देने वाली है नतु द्रव्य पूजा
शुद्ध पूजा कहो वा भाव पूजा कहो दोनों का एक ही अर्थ है दखिये

भाय पूजा। विधानमन्माधि तत्र ग्रन्थमें पुन्यकुम्भाचार्यके शिष्यपर्यंत नामक मुनिने समाधि तत्रके घालायाधर्म इस प्रकारसे लिखा है ॥

मैं शान्त जाल से भ्रमण करता ० थी गुरु के उपदेश से सत्य सन्न रूप देय भपने ही पान देखा है भोग आ गुरु के ही। उपदेश से उपशम रूपी सरोवर के बीच मैंने स्नान किया है जित के करने से मेरा भ्रमण रूपी दाह नष्ट हो गया है और फिर मैंने भपन ही पास सिद्ध क्षेत्र देखा है पन भमूचि (जीव) को मूर्तिमान शरीर में मली प्रकार स निणय कर लिया है फिर मैंने अमूर्तिमान जीव को शान्ति रूपी जल से शुद्ध किया है और शुद्ध भाय रूपी पुष्पांसे मैंने पूजा भी कर ली है फिर सम्यक् रूपी दीपक जलाकर मैंने आरती भी उतारी है और फिर मैंने भानद रूपी घोड़ी (कद्विबंधन) यदन के भाय पूजा करी है सो इस पूजा से भमादिनाल की दाह नष्ट करके प्राप्ति मोक्ष में जा विराजमान होता है ॥

प्रियसुप्तपुरुष ! यही आत्म पूजा है इस के करने से आत्मा शान्ति के मंदिर में विराजमान हो जाता है । और जन्म मरण के दुर्गों से नो मुक्त होजाता है सो है मध्य इना पूजा का श्री भास्वार्थ महाराज ने उपदेश किया है इसलिये ही मध्य जीवों के बोधार्थ श्री महाराज का जीवन चरित्र लिखा है किन्तु हमारा म सर्व्वविस्तो के चित्त को नोदित करने का नहीं है । ना माशा है मध्य जन श्री मदगाचार्य पर्व श्रीममरसिंह आ महाराज के जीवन चरित्र को निष्पक्षता से पढ़ के भयदय ही भपन भमदय ननु य जग्य का सफल वर्णन ॥

✽ उपसंहार ✽

मान्यवर महाशयो ! सत्य विचार होत दुर्गों को मन्त्रुप्य जन्म प्राप्त करने योग्य है कि ये परोपकार हितैषिता भावि मनुष्यों द्वारा भपने पौरुषिक कृष्ण से उद्भवाथ सदैव काल परिभ्रममें बचत रहें जैसे

कि श्री आचार्य जी महाराज ने परोपकार किये हैं अर्थात् जिन्होंने परोपकार की भाशा से असारः ससारोऽयं, गिरि नदी वेगोपम यौघन, तृणाग्निसमजीवतं, शरद्वृक्षच्छाया सदृशमोगा' स्वप्न सदृशो मित्र पुत्र कलत्र भृत्यवर्गसम्बन्ध', इत्यादि सद्बिचारों द्वारा परम वैराग्य तथा सुशीलता को उपार्जन कर इस क्षण संगूर ससार को त्याग दिया और मुनि वृत्ति ग्रहण की क्योंकि कहा है :—भावीचितेतत् कायेसर्ता सम्पद्यतेजरा, मसर्तातु पुनः कायेनैवधिते कदाचन इति ॥ पुनः आपने महत् योग्यतासे स्वल्प कालमें ही भूत पिपाक इन्द्र तथा गूढाक्ष्य को ग्रहण किया पुनः तप क्षमा, दया, शान्ति इनकी महान् स्वरसे उद्धोषणा की, और मृदु सकोमल सत्योपदेश रूपी तोक्ष्ण शस्त्र से मर्त्य जीवों के हृदयों से मिथ्यात्व रूपी कठिन तरुओं को उत्पाटन किया, पुनः सुयोम्य मनोहर व्याख्यानोसे अर्हन्मत का वसेजन किया, प्रेमभाव तथा सम्पद् की वृद्धि की, देश देशान्तरों में पर्यटन करके अनेक ही प्राणियों का महान् भाषित सत्य धर्म में उपस्थित करके उड़ किया, और स्व आत्म शुद्धयर्थे महान् तप किया पुनः अभ्यासम योग द्वारा आत्मा को निर्मल और पवित्र बनाया और अंत में अर्हन् ग्रहण करने तथा मा हनो, मा हनो, ऐसा उपदेश करते हुए स्वर्ग गमन हो गये ॥

इसलिये प्रियधरो, ऐसे महान् आचार्य के गुणानुवाद करने से तथा इनके गुणों का अनुकरण करने से या इनका जीवनचरित्र पढ़नेसे और पापरूपी मल को दूरस्तुन करने हैं इसलिये प्रार्थना है कि ऐसे, महात्मा के नाम को चिरस्थायी करके मोक्षाधिकारी बनो ॥ सुप्रवेक्ष्यदुमा ।

ॐ शान्ति ! शान्तिः ॥ शान्तिः ॥



● भीजिनाय नमः ●

प्रस्तावना ।

सर्व विद्वज्जनों को विदित हो ! कि भीजैन मिदान्त प्राय' भद्र मांगधी भाषा में ही प्रतिपादन किए हुए हैं । क्योंकि जैन सूत्र (शास्त्र) भी प्रदत्त स्थाकरण के द्वितीय सूत्र स्वरूप के द्वितीयाश्रय में लिखा है कि—

(तहयकम्मणुणाहुंसिदुवालसविहाय होइ भासा)

अर्थात्—द्वादश प्रकारकी भाषायें होती हैं यथा—*प्राकृत १ संस्कृत २ मागधी ३ पिशाचकी ४ सूरसेनी ५ अपभ्रंश ६ यही षट् षण् रूप और षट् ही षण् रूप षण् द्वादश प्रकार की भाषायें हैं । तथा जैन शास्त्रों (सूत्रों) से यह भी प्रगट होता है कि—प्राकृतादि षट् भाषायें मत्तादि से आर्य्य लोगों की भाषा हैं । इसीवास्ते जैन आर्य्यों ने प्राकृत या मागधी आदि भाषाओं के धातु उपसर्ग उच्चादि प्रकरण प्राय' संस्कृत में ही रचे हैं । तथा वेदाङ्ग शिखा में भी दोनों (प्राकृत संस्कृत) भाषाओं को तुल्य वर्जन किया है जैसे कि—

● षट् षट् भाषाओंके गम्यान्वयषट् ही प्रकार के प्रयोग सिद्ध होते हैं यथा, सूरिनी यह शब्द प्राकृत भाषा में सूर्य्यवा बाधक है १ मङ्गल यह संस्कृत भाषा में कस्याण का नाम है २ शिमाळा मागधी भाषा में शृगाल को कहते हैं ३ उसनं पिशाच की भाषा में यह शब्द भीष्म का बाधक है ४ कण्ठो सूरसेनी भाषा में इसक अर्थ बुरा है ५ उडकी अपभ्रंश भाषा में मञ्जुत का बाधक है ६ इत्यादि । किन्तु पञ्चही भाषाओं के प्रयोग प्राकृत से मिलते जुलते हैं अर्थात् इनका किञ्चित् ही भेद है ॥

त्रिषष्टिः चतुः षष्टिर्वा वर्णाः शम्भु मते मताः ।

प्राकृते सस्कृतेचापि, स्वयंप्रोक्ताः स्वयं भुवा ॥१॥

सो सप्रति काल में श्रितमे संस्कृत भाषा के व्याकरण उपलब्ध होते हैं तिससे अति प्राचीन स्वल्प परिभ्रम तथा बहु फल प्रद भी शाकटायन व्याकरण है अतः पाणिनीय व्याकरण की भट्टाध्यायी के तृतीय अध्याय के चतुर्थे पाद के १११ वें सूत्र में शाकटायन मुनिका मत तथा सूत्र में नाम ग्रहण किया है यथा—

(लङ् शाकटायनस्यैव) अपितु स्वामी दयानन्द सरस्वती जी भी भट्टाध्यायी के कारक प्रकरण के हिन्दी भाष्य के ४८ वें पृष्ठ में ऐसे लिखते हैं कि—(उपशाकटायनं वैयाकरणा) अर्थात् न्यून हैं अन्य व्याकरण शाकटायन व्याकरण से । सो सुख पुरुषो ! भीशाकटायनाचार्य जैन मतानुयायिही सिद्ध हो चुके हैं । क्योंकि इस व्याकरणोपरि अनेक टीकायें जैनाचार्यों ने ही करी हैं । अपितु शाकटायनाचार्य भी अपने भाष्यो भूत केवली देशीयाचार्य ऐसे नामसे लिखते हैं । जोकि जैनधर्मके उक्तसांकेतिक शब्द हैं । तथा जैन मतानुसारही प्रक्रिया है और चिन्ता मणि नामक टीकाभेयभूषर्मा चार्य ऐसे प्रति पादन करते हैं कि—अत्योपयोगी यही व्याकरण है जैसे कि —

• श्लोकः •

स्वल्पग्रन्थं सुलोपाय, सपूर्णयदुपक्रमम् ।

शब्दानुशासनसार्व महच्छासनवत्परम् ॥ १ ॥

इन्द्रचन्द्रादिभि शब्दैर्यदुक्तशब्दलक्षणम्

तदिहास्तिसमस्तच यन्नेहास्तिनतत्कचित् ॥२॥

इत्यादि बहुत से कथनों से स्पष्ट सिद्ध होगया कि—धी शाक्त टायनाचार्य पूर्ण जैनानुयायी थे, सा भधुना र्म धी शाकटायनाचार्य कृत शाकटायन व्याकरण वा हेमचन्द्राचार्य कृत सिद्ध हेमानुशासन (मपर नाम हेमचन्द्राचार्य कृत प्राकृत व्याकरण है) भट्टभाष्याय के सूत्रों से मध्य जोषों के प्रमोदार्थ मीमकार युक्त महामन्त्र के घात्यादि का स्वरूप लिखता है । क्योंकि जैन मत में उक्त मन्त्र को मरण मन्त्र माना है । सा इस महा मन्त्र को व्याख्या पूर्ण नीति से करने के लिये तो महान् समय की आवश्यकता है किन्तु इस समय मैं न दिग्वर्धन मात्र व्याख्यापरिदोष्यः लेखनी को मारुड किया है आकाङ्क्षा है, कि सज्जन जन इस महा मन्त्र को अध्ययन करके भवद्वयमेव ही आत्मनस्त्व को प्राप्त करेंगे ॥

मैं सद्यः सशुद्धि पुरुषों से नम्रता पूर्वक प्रार्थना करता हूँ कि यदि इस व्याख्या में किन्ही प्रकार की त्रुटि का देखें तो इस महा मन्त्र के घात्यादि को शुद्ध ढालें या सूत्रों द्वारा सूचित करें ॥

* महाशय । महा मन्त्र को (ममाकार) मन्त्र भी कहते हैं अर्थात् द्वितीय नाम महा मन्त्र का ममाकार मन्त्र भी है परन्तु पाई ९ पदप ममाकार के स्थानोपरि नमकार मन्त्र ऐसे भी उच्चारण करते हैं सो यह भी सत्य है क्योंकि प्राकृत व्याकरण में इसका विवेचन ऐसे किया है यथा —

रुद्रनमोर्वं ॥ प्रा० व्या० अ० ८ पा० ४ सू० २२६॥

अनयोरन्त्यस्यषो भवति ॥

अर्थात् इस सूत्र से रुद्र और नम घातु के मन्त्र घर्ज को प्रकार हो गया जैसे कि—(रुद्र) (नम) इत्यादि, इस सूत्र से (नमकार) ऐसे सिद्ध हुआ पुनः नमस्कार शब्द ने ममाकार इस प्रकार से सिद्ध होगा है जैसेकि —

अतः इस महा मन्त्रके धात्वादि की अधिक तर आवश्यकता है किन्तु कोई भी पुस्तक उक्त विस्तार युक्त दृष्टिगोचर नहीं हुआ इसी प्रयोजन से प्रेरित हो कर मैंने उक्त दो व्याकरणों के सूत्रों से इस की व्याख्या की ली है। सो महामाशा तथा हृद् विद्वास है कि पण्डित मन इस महामन्त्र की व्याख्या को पठन कर मेरे परिश्रम को सफल करेंगे ॥

उपाध्याय जैनमुनि आत्मारामजी पजावी ।

नमस्कारपरस्परद्वितीयस्य ॥ प्रा० अ०८ पा०१
सू०६२ ॥ अनयाद्वितीयस्य अनमोत्व भवति ॥

इस सूत्र से नमस् शब्द के द्वितीय शब्द के मकार को अर्थात् नमस् शब्द के मकार के मकार को मोकार हो गया जैसे कि (नमो स्कार) पुनः—

क-ग-ट-ठ-त-द-प-श ष स-क-पामूर्ध्वलुक् ॥
प्रा० अ०८ पा०२ सू० ७७ ॥ एषांसयुक्तवर्ण सम्बन्धि
मूर्ध्वस्थितानां लुक् भवति ॥

इस सूत्र से सकार का लोप हो गया, तब (नमोकार) ऐसे रहा पुनः—

अनादौ शेषादशयोर्द्वित्वम् ॥ प्रा० अ०८ पा०२ सू० ८९ ॥
पदस्यानादौ वर्तमानस्य शेषस्य चादेशस्य द्वित्वं भवति ।

इस सूत्र से ककार छिन्न हो गया तब परिष्कृत प्रयोग (नमोकार) ऐसे सिद्ध हुआ, अतः एया ङ ङं ग से म गे मान्ति तीनों प्रयोग शुद्ध सिद्ध हुए ॥

• श्री वर्तमानाय नमः •

॥ अथ महा मन्त्रः ॥

नमो अरिहताण । नमा सिद्धाण ।

नमा आयरियाण । नमो उवब्झायाण ।

नमोलोए सव्व साहूण । इति ।

भगवति सूत्र शक्तक १ उद्देश १ ॥

अर्थाभ्यय—(नमो)(नम) नमस्कार (अरिहताण) (अहंभ्य) अहंप्रजायां धातु से जो शतृ प्रत्ययान्त हो कर अहत् शब्द बनता है तिसका नाम प्राकृत नापा में अरिहत् है सो तिन अरिहत् भगवत्तों के ताई नमस्कार हो अर्थात् उन को नमस्कार दा (नमा) (नम) नमस्कार हो (सिद्धाण) (सिद्धभ्य) विघ्नमराधी धातु से जो क प्रत्ययान्त हो कर सिद्ध शब्द बनता है अर्थात् जो सिद्ध पुद्गल, भज्ज, भमद, भशरीरी, सर्वज्ञ सर्व वशी हैं तिनके ताई नमस्कार हो (नमो) (नम) नमस्कार दा (आयरियाण) (आयार्येभ्य) जो भाट् उपसर्ग पूर्वक अर्थात् मक्ष्मणे धातु से अहम्भ्य प्रत्ययान्त हो कर सिद्ध होता है अर्थात्

• पाई २ पुरुष पक्षपात की माह्मन को स्मरण में ध्याज कर के तथा दृढ करके उसे भी नापण करते हैं कि (नमोस्कार) शब्द शुद्ध है अर्थात् जिस के पर्यं जकार होय वही शुद्ध है अन्य सर्व मज्जु हैं परन्तु ये माह्मन ध्याकरण से अनभिज्ञ हैं क्योंकि प्राकृत व्याकरण में वेसेलिगादे यथा -

वादी । प्रा० अ० ८ पा० १ सू० २२३ । असंयुक्तस्या
दी वर्तमानम्यणो वा भवति ॥ णरो नरो णई नई इति ॥

भाषार्थोंके ताई नमस्कार हो, (नमो) (नम,) नमस्कार हो (उपज्ज्ञायाण)
(उपाध्यायेभ्य) जो कि उप अधि उपसर्ग पूर्वक इह अभ्ययने धातुसे
छन्द का घञ् प्रत्ययान्त हो कर बनता है अर्थात् उपाध्याया क ताई
नमस्कार हो (नमो) (नम) नमस्कार हो (छोप सम्ब साहूण) (लोक
सर्वसाधुभ्य,) जो छोकृदर्शने धातु से छोक शब्द और छु गती धातु
से सर्व तथा साध् संसिद्धी धातुसे छण् प्रत्ययान्त हा कर साधु शब्द
इन सबकी एकस्थता से (छोप सम्ब साहूण) ऐसे पद सिद्ध होना है
अर्थात् यावत् लोक में साधु हैं तिन को नमस्कार हो ।

नावार्थ —इस महा मन्त्र में यह वर्णन है कि अनन्त गुण युक्त
धनुर्धाति कर्मों के मण्ड कर्त्ता और जिनके द्वादश गुण प्रगट हुए हैं
परम पूज्य ऐसे गुणगुणालङ्कृत श्री भरिहत श्री महा राजों को नम
स्कार हो पुनः जिनके अशरीरीसिद्ध घुआजराम रेत्यादि अनेक नाम
सुप्रख्याति युक्त प्रसिद्ध हैं जिन के सर्व कर्म क्षय हो गये हैं अर्थात्
जो कर्म रूपिरजसे विमुक्त हो गये हैं और जिन के मण्ड गुण प्रादुर्भूत
हुए हैं इत्यादि अनेक सुगुणों सहित श्री सिद्ध महाराजों को नमस्कार
हो अपितु जो षट् त्रिंशति गुणों युक्तमर्यादा से क्रिया करने वाले जिन
को ज्ञानमें गति अधिक है तथा जो सम्पद प्रकार से गच्छ (साधु
समुदाय) की सारणा (रक्षा करना) धारणा (स्थिराचार होते हुए
को) लावधान करना) साधु मण्डल को हित शिक्षा देना तथा वस्त्र
पादादि द्वारा भी ममियों को सहायना देना वा परम्परा शुद्ध शास्त्रार्थ
पठन कराना और आ दुयल अथात जघायलक्ष्मीण रोगादि युक्त साधु
हों उन की यथा योग्य सहायता करना इत्यादि अनेक गुणों से युक्त हैं
और उक्त धार्ताओं के पूर्ण करने में सदैव कटिबद्ध हैं ऐसे श्रीभाषार्थों
को नमस्कार हो, तथा जो पंचविंशति गुणों से अलङ्कृत हो रहे हैं
अर्थात् जो एकादशाङ्ग तथा द्वादशोपाङ्ग को स्वयं पढने हैं औरोंका
पढाते हैं तिन शास्त्रों के नाम यह हैं यथा:—

अथाह्नसूत्राणि ।

- (१) श्री माताराह्न जी ।
- (२) श्री सूर्यगहाह्न जी ।
- (३) श्री ठाणाह्न जी ।
- (४) श्री समयायाह्न जी ।
- (५) श्री विवाह प्रशस्ति जी ।
- (६) श्री शांताधर्मकथांग जी ।
- (७) श्री उपासक दशाह्न जी ।
- (८) श्री अंतगद् जी ।
- (९) श्री अनुश्रवणार्ह जी ।
- (१०) श्री प्रश्नव्याकरण जी ।
- (११) श्री विपाक जी ।

अथोपाह्नसूत्राणि ।

- (१) श्री उष्यार्ह जी ।
- (२) श्री रायपशोणी जी ।
- (३) श्री जीवामिगमजी ।
- (४) श्री पण्यन्ता जी ।
- (५) श्री अम्बुद्वोपप्रवृत्ति जी ।
- (६) श्री सद्गुणप्रवृत्ति जी ।
- (७) श्री सत्यप्रवृत्ति जी ।
- (८) श्री निरावृत्ति जी ।
- (९) श्री पुष्पिका जी ।
- (१०) श्री काप्यका जी ।
- (११) श्री पुष्पयुक्तिका जी ।
- (१२) श्री वणिहृदा जी ।

अर्थात् जो पूर्वोक्त शास्त्रों का अभ्यास स्वयं करते हैं और भारत
 पर यथा भयकाश या यथाऽवसरप्रवृत्तिरभ्यास करवाते हैं और जिस के
 द्वारा धर्म तथा विद्या की वृद्धि हो सही कार्य करके परिशुद्धित
 होते हैं ऐसे परम पण्डित महान् विद्वान् दीर्घदर्शी परमोपकारी श्री
 उपाध्याय जी महाराज का नमस्कार हा, जो कि भूत विद्या की भाषा
 से अनेक ही मध्य जीवों को संसार रत्नाकर से उद्योत करते हैं
 भक्त्यन्त नमस्कार हो सर्व साधुओं का जो जोर म सुगुणों से परिपूर्ण
 तथा विमूर्षित हैं सदा ही पराधरते हैं और ज्ञान के द्वारा स्वयंभूत
 या सगुणमात्रों के कार्य सदैव काम सिद्ध करते हैं अतः सत्त्व
 शक्ति गुण युक्त हैं निज भूमिओं को पुनः पुनः नमस्कार ही ॥

*वस्तुतः जो शास्त्राह्न हैं विष्णु वर्तमान भाग की अपेक्षा पद्य
 पद्याह्न ठीके हैं ॥

प्रियवरो ! इस महा मन्त्र का पाठ मथवा यह महा मन्त्र श्री भगवती भवदयकादि सूत्रों (शास्त्रों) में विद्यमान है यदि कोई इसे देखने की भूमिका करे तो उस को योग्य है कि जैन शास्त्रों का अभ्यास करे क्योंकि सूत्रों के पठन से उसे स्वयमेव ही उपलब्ध हो जायगा ॥

॥ अथोक्त मन्त्र के धात्वादि ॥

प्रियसुहृदों ! अब उक्त महा मन्त्र के धात्वादि को लगा कर आपके सम्मुख करता हूँ । जैसे कि —(नमस्) शब्द भव्य है सो नमस् शब्द के लकार को—

सजूरहस्सोऽतिष्पक स्रनसुध्वनसोरि ॥

शा० व्या० अ० १ पा० १ सू० ७२ ॥

सजुषू अहन्नित्ये तयोरन्त्यस्य पदान्ते सकारस्य च रिरादेशो भवति क्वत्स्रन्सुध्वन्सु इत्येतान् वर्जयित्वानतिपि ॥ इति सस्यरि इदित् ॥

इस सूत्र से रिकार हो गया, पुनः रिकार की इत्तहा होने से तिस का लोप हुआ अतः पदमात रेफ रहा । तब ऐसे रूप बना, जैसे (नम+र) पुनः—

रः पदान्ते विसर्जनीयः ॥ शा० अ० १ पा० १ ।

सू० ६७ ॥ पदान्ते रेफस्य स्थाने विसर्जनीयादेशो भवति ॥

*श्लोक —शृङ्गवहालव्रत्सस्य, कुमारीस्तनयुग्मवत् ॥

नेत्रवत्कृष्णतर्पस्य, विसर्गोऽयमिति स्मृत ॥१॥

इस सूत्र से पदाम्बु के रेफ को विमर्जनीय वा भादेश हुआ, तब (नम) ऐसे रूप सिद्ध हुआ पुनः—

अतोऽहो विसर्गस्य ॥ प्रा० व्या० अ० ८ पा० १ सू० ३० ॥
सम्भूत लक्षणोत्पन्नस्य अतः परस्य विसर्गस्य
स्थानेऽहो इत्यादेशो भवति ॥

इस सूत्र से ससृज लक्षणोत्पन्न के अन्त से परे विसर्जनीय के स्थान में भर्गात् विसर्ग को ओ का भादेश हो गया, तब ऐसे रूप बना यथा—(नम+ओ) पुनः—इकार को इस्सम्भू हो जाने के कारण से विसर्ग का लोप हो जाता है और साथ में अस्सम्भू का लोप भी होता है तब ऐसे प्रवाग हुआ, यथा (नम+ओ) फिर—

(ममच्छ शब्द रूप पर वर्णमात्रयेत इति मन्त्रिकर्ष) इस वर्णन से व्यञ्जन रूप मकार आकार के माध्यम हुआ तो ऐसे रूप बना (नमो) भर्गात् एक रूप ऐसे सिद्ध हुआ ॥

इसके अनन्तर (भरिहतापी) इस की व्याख्या लिखते हैं यथा—
मर्मे ऐसा घात है विसर्ग को—

सल्लङ्घित्स्य लृटोवाऽनितो ॥ शा० अ० १ पा० ४
सू० ७८ ॥ मनिलटा भविष्यति लृटश्च अतद्धवत्
शतृवा भवति तड वदानशनेतो ॥ ऋश। धिनो ॥

इस सूत्र से वर्णमान छट् में भद्र घात को शतृमात्रय हो गया तब (मर्ह+शतृ) येन रूप बन गया पुनः णकार ऋकार की समझ होने से तिन का लोप हुआ, तब (महत) ऐसे रूप बना, फिर—

उच्चारति । प्रा० व्या० अ० ८ पा० २ सू० १११ ॥

अर्हन् शब्दे संयुक्तस्यान्त्य व्यञ्जनानां पर्युत्त

अवि तो च भवतः ।

। इस सूत्र में यह कथन है कि अर्हत् शब्द में सयुक्त के 'अन्त' । व्यञ्जन से पूर्व अर्थात् विदलेष करके फिर हकार से पूर्व इकार उकार मकार यह तीन हो जाते हैं तब ऐसे रूप बने यथा —

(अर्हन्) (अर्हन्त) (अर्हन्त्) पुन (अर्हत्) (अर्हन्त) (अर्हन्त्) अपितु ऐसेही *दूटिका धृति में भी उल्लेख है पुनः—

शत्रानश ॥ प्रा० अ० ८ पा० ३ सू० १८१ ।

शतृ आनश् इत्येतयो प्रत्येकन्तमाण इत्येता वा देशौ भवत ॥

इस सूत्र में यह विधान है कि शतृप्रत्यय को स्त और माण द्वि भादेश होते हैं । किन्तु षष्ठी का किया हुआ कार्य अत के मलोपरि होता है अर्थात् अर्हत् शब्द के तकार को (न्) ऐसे भादेश हो गया तब (अर्हन्त + अर्हन्त + अर्हन्त) ऐसे बन गये । तो —

ह अ ण नो व्यञ्जने । प्रा० अ० ८ पा० १ सू०

२५ ॥ ह अ ण न इत्येतेषास्थाने व्यञ्जने परे

अनुस्वारा भवति ॥

*दूटिका—उत ११ न अर्हत् ३१ अर्हन्त अर्हन्तीति अर्होष् अष् प्रत्ययः । लोकात् अर्ह इतिजाते र्ह इति विदलेषे अनेम प्रथमेह पूर्व उ द्वितीये ह पूर्वम तृतीये ह पूर्व इ सर्वत्र लोकात् ११ अत सेडों अरहो । अरहो अरिहो । अर्हन्तीति अर्हन्त ध्रुगक्षिपार्ह शतृशतृस्तृत्ये शम्ह तृ प्रत्ययः अतलोकात् अर्हन्तमाणा अत स्थानेत् व्यञ्जनाद्वन्तेऽत लोकात् अनेम र्ह इति विदलेषे प्रथम ह पूर्व उ द्वितीय म तृतीये ह लोकात् ११ अर्हन्तो अर्हन्ता अर्हन्तोः ॥ १११ ॥

†द्वितीय विधि इस प्रकार से भी है यथा (अर्हन्त् + अर्हन्त् + अर्हन्त्) ऐसे प्रयोग स्थित हैं फिर—

इस सूत्र से मकारको भगवत्कारादेश हो गया तब (मरिहंत + मरहंत + मरहंत) ऐसे प्रयोग बने, पुनः नमस्कारार्थ में —

शक्तार्थवपणूनम स्वस्तिस्वाहा स्वधाहिते ॥ शा०
अ० १ पा० ३ सू० १४२ । शक्तार्थवपडादिभिश्च
युक्तेऽप्रधानात्त्येवर्तमाना चतुर्थी नित्यभवति ॥
चैत्रायशक्तोमैत्र । मल्लायप्रभवतिमल्ल । पुरुषायाल
यवति । अग्नयेवपट् । अर्हतेनम धर्मायस्वस्ति ।
इन्द्रायस्वाहा । गुरुभ्यस्स्वधा । सर्वस्मैहित ॥

उगिदचोऽनधादे ॥ शा० अ० १ पा० २ सू० ११४ ।

उगितोऽञ्च तेऽचनम् भवति शावनत्सुटि परे
नै धादे ॥

इस सूत्रमें यह विधान है कि जिसका उर (उ + क) इत्संज्ञा पाछा
हो तिसको और भव्यधातु को भी नम् हो जाता है शि और नमत्सुट्
परे होने हुए भपित् यथादिकों को नदी होता तिस कारण से भव
भी कदित होने से नम् हुआ (मित्रा दमयादम यम भपति) इस
कथन से ऐसे रूप सिद्ध हुए यथा (मरिहन्मत् + मरहन्मत् +
मरहन्मत्) फिर (भमापिता) इस कथन से मकार मकार को इसम्भा
हुई पुनः शाय रूप (महिन्त्) इत्यादि ऐसे रहे फिर—

व्यञ्जनादवन्ते ॥ प्रा० अ० ८ पा० ४ सू० २३९ ॥

व्यञ्जनान्ताद्धातोरन्ते अकारो भवति ।

इस सूत्र में यह विधान है कि व्यञ्जनान्त (द्वयम्) धातु के
भग्न में मकार का आगम होता है तब हल् लकार स्वरात्म्य हुआ तो
इस प्रकार रूप बने यथा—(मरिहन्त, मरहन्त, भवहन्त) इति ॥

शाकटायन व्याकरण के इस सूत्रसे चतुर्थी विभक्ति के बहुवचन म्यस् प्रत्ययकी मन्त्रप्राप्ति थी, किन्तु —

चतुर्थ्या षष्ठी ॥ प्रा० ङ्या० अ० ८ पा० ३
सू० १३१ ॥ चतुर्थ्या स्थाने षष्ठी भवति ।

प्राकृत व्याकरण के इस सूत्र से चतुर्थी विभक्ति के स्थानोप रिषष्ठी विभक्ति हुई, तब (भरिहस्त) शब्द को षष्ठी का बहुवचन भाम् प्रत्यय होने से (भरिहत + भाम्) ऐसे रूप होगया पुनः —

जस् शस् षसित्तोदोद्दामिदीर्घ ॥ प्रा० अ० ८
पा० ३ सू० ११ ॥ षष्णु अतो दीर्घो भवति ॥

इस सूत्र से भरिहत शब्द के तकार का भत् दीर्घ होजाने से (भरिहता + भाम्) ऐसे बन गया तदनन्तर —

टा आमोणं ॥ प्रा० अ० ८ पा० ३ सू० ६ ॥
अत परस्य टाइट्येतस्य षष्ठी बहुवचनस्य च
आमोणो भवति ॥

इस सूत्र से भाम् प्रत्यय को णकारावेश होगया तो (भरिहता + ण) ऐसे रूप बन गया, तत्पश्चात् —

क्त्वा स्यादेर णस्त्रोर्वा ॥ प्रा० अ० ८ पा० १
सू० २७ ॥ क्त्वाया स्यादीनांच योणसूतयोरनुस्वारो
ऽन्तोवा भवति ॥

इस सूत्र से णकार को विकल्प से अनुस्वार भी हो जाता है तब एक पक्ष में (नमोभरिहताणं + नमोभरुहताणं + नमोभरुहताणं) और द्वितीय पक्ष में (नमोभरिहताण + नमोभरुहताण + नमोभरुहताण) इत्यादि तीन प्रयोग इस प्रकार सिद्ध हुए ॥

टा आसोर्ण ॥ प्रा० व्या० अ० ८ पा० ३ सू० ६ ।

इस सूत्र से पूर्ववत् भाम् प्रत्यय को णकारादेश हुआ यथा (सिद्ध + ण) फिर —

जस् शस् ङसित्तो दोहामि दीर्घः ॥ प्रा० व्या०
अ० ८ पा० ३ सू० १२ ॥

इस से सूत्र प्राग्वत् सिद्ध शब्द का भकार दीर्घ हो गया जैसे (सिद्धा + ण) प्राग्वत् ।

क्त्वास्यादेरणस्वोर्वा ॥ प्रा० अ० ८ पा० १ सू० २७ ॥

इस सूत्र से णकार को विकल्प से अनुस्वार हो गया वह यदि पङ्कज (नमा सिद्धाण) वा (नमा सिद्धाण) ऐसे सिद्ध हुए ।

अपितु “मिद्ध” शब्द पिथो शास्त्रे माङ्गस्ये च

इस धातु से मा यत्न जाता है किन्तु यह विधिविधान पूर्ववत् ही है ।

॥ इति सिद्धाणं पदकी साधनिका ॥

॥ अथ आचार्य शब्द की साधनिका ॥

नमस् शब्द पूर्ववत् ही सिद्ध होगा है अतः आचार्य शब्द मात्र उपलब्ध मर्यादा युक्त मर्थ में जो व्यवहृत है सो पूर्व होने से पुनः चरगति मक्षम्योः धातु को रुद्रन्त का द्यप् प्रत्यय करने से आचार्य शब्द बनता है जैसे पि (मा + घट्) ऐसे रूप है पुनः —

द्यप् ॥ शा० व्या० अ० ४ पा० ३ सू० ६ ॥

धातोर्द्यप् प्रत्ययो भवति ॥

इस सूत्र से आर्य पूर्वक घट् धातु को द्यप् प्रत्यय हो गया, जिस यथापिथो अर्थात् धातु णकार की इत्यादि होने से तत्त्व का ओ

है मपितुस्कार की भी इत्सम्भा होती है तब (भाङ्+घर्+यण्) ऐसे रूप से (भा+घर्+य) ऐसे रूप शेष रहा फिर :—

ङित्यस्याः ॥ शा० अ० ४ पा० १ सू० २३० ॥

धातो रुपान्त्यस्यात् आङ्गवति । अितिणिति च प्रत्ययेपरे ॥

इस सब में यह विधान है कि जिस प्रत्यय का ञ् षोप हो गया होतो धातु के उपान्त (अन्त्यस्समीपमुपान्त्यम्) भत् को भात हो आवे, इस रीत्यनुसार उपान्त वकार के भत् को भात् हुमा जैसे.—

(आ+चार्+य) पुन (अनञ्कशब्दरूपपर वर्ण माश्रयेत्) ॥

इस वाक्य से ऐसे शब्द बन गया, यथा (भाचार्य) फिर —

नमस् शब्द पूर्व करने से तथा नमस्कारार्थ में चतुर्थी विभक्ति का बहु वचनान्त होने से ऐसे सिद्ध हुमा, (नम आचार्येभ्यः) इति ॥

नब प्राकृत में इस के रूप बनाकर दिखाते हैं उपसर्ग, धातु, प्रत्यय यह तो सर्व प्राग्वत हो है मपित आचार्य शब्द के वकार के वास्ते प्राकृत के व्याकरण में यह सूत्र प्रति पावन किया गया है जैसे कि —

आचार्योच्च ॥ प्रा० अ० ८ पा० १ सू० ७३ ॥

आचार्य शब्दे चस्यात् इत्वम् अग्वचभवति ॥

अर्थात् आचार्य शब्द के वकार को भत् इत् यह दो भावेष होते हैं पुनः—

ऐसे रूप हुए, यथा, (भाचार्य) भाष्यी) पदधात्—

क-ग-च-ज-त-द-प-य-वा प्रायोलुक् ॥

प्रा० अ० ८ पा० १ सू० १७७ ॥

स्वरात्परेषामनादि भूतानामसंयुक्तानां कग च
जतदपयवानां प्रायोलुग् भवति ॥

इस सूत्र से (भाष्य) ऐसे रूप के जो चकार के लोप होगया,
जैसे (भाष्य) (भाष्य) फिर,—

अवर्णोयध्रुति ॥ प्रा० ङ्या० अ० ८ पा० १ सू०
१८० ॥ कगचजेत्यादिनालुक्सति, शेष.
अवर्ण अवर्णात्परोलघुप्रयत्नतरयकार ध्रुति
र्भवति ॥

इस सूत्र में यह ध्यन है कि जिसके क ग च त द प य इत्यादि
लोप हो गए हों। शेष जो अकार रह जाये, जो उस के स्थान पर
यकार जो हो जाता है सा इसी नियम से इस स्थान में शेष अकार के
स्थानोपरि यकारादेश होगया, तब ऐसे रूप रूप (भाष्य) (भाष्य)
(भाष्य) पुनः—

स्यान्नव्यचैत्यचौर्यसमेपुयात् ॥ प्रा० अ० ८ पा०
२ सू० १०७ ॥ स्यादादिपुचौर्य शब्देन समेपु-
चस्युक्तस्य यात् पूर्वइद् भवति ॥

इस सूत्र में यह ध्यन है कि स्याद् भव्य चौर्य चौर्य इत्यादि
शब्दों में द्विष्य शब्द से पूर्व इत् हा जाता है इसी व्यापक रेफ चकार
के योग भर्गात् द्विष्य होने से रेफ का इत होने से ऐसे रूप रूप,
(भाष्य) पुनः चष्टी का बहु ध्यन भाम् प्रायय रूप, तो (भाष्य
रिप + भाम्) ऐसे रूप रूप पुनः भाम् के (आ आ मोर्णः) इस सूत्र
से भाम् के चकार दोहाने से (भाष्य + च) रूप, परवाना,—

(जस् शम् ङमिन्नोदोदामि श्रीर्घः)

इस सूत्र से दृढ चकार श्रीर्घ होगया, यथा (भाष्य + च) पुनः—

(कृत्वास्यादर्णस्योर्णा) इस सूत्र से णकार का विकल्प से अनु-
स्वार हो गया, फिर परिपक्व रूप ऐसे हुए (नमो भायरियाणं) वा
(नमो भा मरियाणं) वा (नमो भाइरियाण) तथा (अर्णैवयश्रुति)
इस सूत्र से यकार को अकार भी हो जाता है तब (भायरिण) ऐसा
रूप बना, किन्तु —

अतोरिआरिज्जरीअ ॥ प्रा० अ० ८ पा० २ सू०
६७॥ आइच्चर्येअकारात्परस्ययंस्यरिअ अर रिज्ज
रीअइत्येते आदेशा भवन्ति ॥

इस सूत्र की मन्त्र प्राप्ति नहीं है और छोप कार्य प्राप्ति ही है ॥

॥ इति भायरियाण शब्द की साधनिका ॥

॥ अथ उपाध्याय शब्दकी साधनिका ॥

उप और अधि उपसर्ग पूर्वक इक् मन्त्रयने धातु को घञ् प्रत्य
यान्न हो कर उपाध्याय शब्द बनता है जैसे कि (उप+अधि+इक्)
ऐसे स्थित है पुनः—

इक् । शा० अ० ४ पा० ४ सू० ४ ॥ इक्कोऽकर्तरि
घञ् भवति । अध्याय । उपाध्याय ।

इस सूत्र से इक् मन्त्रयने धातु को घञ् प्रत्यय की प्राप्ति हुई
तब (उप+अधि+इक्+घञ्) ऐसे बना पश्चात् क् घ् झ् इन की
इत्सम्भा होने से छोप हुआ और शेषः—(उप+अधि+इ+अ)
ऐसे हो रहा, मरितु अकार की इत्सम्भा होने से—

आरौचोऽक्षवादे । शा० अ० २ पा० ३ सू० ८४ ॥ प्रकृ
तेरचा मादेरच आ आर् ऐच् इत्येते आदेशा
भवन्ति ऋति णिति च तद्धिते प्रत्यये परे ॥

इह् धातु को इकार को इस सूत्र से ऐकार हो गया पुनः—
(उप+मधि+ऐ+म) ऐसे प्रयोग हुआ फिर—

एचोऽच्य यथायाव् ॥ शा० अ० १ पा० १ सू० ६९ ।
एचः स्थानेयथा सख्य अय् अच् आय् आव्
इत्येते आदेशा भवन्ति अचि परे ॥

इस सूत्र से ऐकार के स्थान में आय् होने से (उप+मधि+माय्
+म) ऐसा प्रयोग बना तो (मनस्क शब्द रूप पर ण माभयेत्)
इस वक्षानुसार (उप+मधि+माय्) ऐसे रूप बन गया फिर—

दीर्घ ॥ शा० अ० १ पा० १ सू० ७७ ॥

अक स्थानेपरेणाचा सहितस्य तदासन्नो दीर्घो
नित्य भवत्यचि परे । यथा दण्ड अग्र दण्डाग्र ॥

इस सूत्र से उप उपमर्ग के पक्षरका मकार आर मधि उपमर्ग
के आदि का मकार उभय मिलकर दीर्घ होने से (उपमधि+माय्) ऐसे
रूप बना पुनः—

अम्वे । शा० अ० १ पा० १ सू० ३ ॥

इक स्थाने यआदेशा भवन्ति अस्वेऽनि परे स य
अथवा इकः परोयञ् भवन्ति अम्वेऽचि परे ।
दण्ड ॥

इस सूत्र से इकार को यकार हो गया अब (उप+य प्+माय्)
ऐसे रूप बना पुनः—

मनच्छाशब्देति ध्वनन से (उपाध्याय) रूपद्वया, पुनः नमस्कारार्थं प्र
(शक्तार्थं वषण्णम स्वस्ति स्वाहा स्वधाहितै)

शाकटायन व्याकरण के इस सूत्र से चतुर्थी विभक्ति का बहुवचन
भ्यस् प्रत्यय होने से तथा नमस् भव्यय पूर्व होनेसे (नमः उपाध्या ये
भ्यः) ऐसा परिपक्व रूप संस्कृत भाषा में ता सिद्ध होगया किन्तु अब
प्राकृत में जिस प्रकार रूप बनता है सो देखिये। यथा (उपाध्याय)
ऐसे स्थित है तब—

ह्रस्व संयोगे ॥ प्रा० अ० ८ पा० १ सू० ८४ ॥

दीर्घस्य यथादर्शनं संयोगे परे ह्रस्वो भवति ॥

इस सूत्र से (उपा) का प्रकार ह्रस्व होगया तो (उपाध्याय) ऐसे
रूप बना पुनः—

साध्वस व्य ह्याद्वा ॥ प्रा० अ० ८ पा० २ सू० २६ ॥

साध्वसेसयुक्तस्यव्यह्यायोश्चक्षोभवति ॥

इस सूत्र से (व्य) मात्र को छ हुआ फिर (उपाध्याय) ऐसा प्रयोग
बना तो :—

पोव' ॥ प्रा० अ० ८ पा० १ सू० २३१ ॥ स्वरारप-

रस्यासयुक्तस्यानादेः पस्थप्रायोवो भवति ॥

इस सूत्र से प्रकार को धकार हाजाने से (उपाध्याय) ऐसे रूप
बना, पुनः—

अनादौशेषादशयोर्द्वित्वम् ॥ प्रा० अ० ८ पा० २ सू० ८९

पदस्यानादौवर्तमानस्यशेषस्यादेशस्यचद्वित्वभवति

इस सूत्र में यह धर्णन है कि आदि भिन्न आदेश रूप धकार
के दो रूप होजाते हैं जैसे कि :—(उपाध्याय) पदवान् ।

द्वितीयतुर्ययोरुपरिपूर्व ॥ प्रा०अ०८ पा०२म् १० ।
 द्वितीयतुर्ययोद्वित्वप्रमगेउपरिपूर्वोभवत् द्वितीयस्यो
 परिप्रथमश्चतुर्थम्योपरितृतीय इत्यर्थ ॥

इस सूत्र में यह कथन है कि चतुर्थ यण जो द्वित्व किया है सो पूर्वचतुर्थ के स्थान में तृतीय यण होजाना है । जैसे (उवग्झाय) पुन'-
 भाम् प्रत्यय करने से (उवग्झाय + भाम्) फिर (टामामोर्भ) इस सूत्र
 से भाम् को णकार होगया तो (उवग्झाय + ण) ऐसे बना तदन्तर
 (कत्वास्यादर्लस्थोर्ण) इस सूत्र से अनुस्वार होगया । यथा (उवग्झा
 य + ण) पुनः—(जसूदासट्विचोदोद्गामिदीर्घः) इस सूत्र से यकार
 दीर्घ होगया । तब (नमोउवग्झायाणं) (नमोउवग्झायाण्य) ऐसे दो रूप
 सिद्ध हुए अर्थात् जो श्रुत विद्या के पढ़ाने वाले हैं तिन को गम
 स्कार हो ॥

॥ इति उपन्यायाणं षट् की साधनिका ॥



अथ नमोलोए सव्वसाहूण शब्दकी साधनिका



ममस् भव्य पूर्ववत् हो है भवितु "लोह" वर्तने पातु को ।—
 ण्वुप्रजिह्वादिभ्यश्च । शा०अ०४पा०३ सू०८५।
 धानार्लिहादिभ्यश्च ण्वुत् अच प्रत्यया भवन्ति
 णच्चायिनो ॥

इस सूत्र में भव् प्रापण्य करके लोह शब्द बना, जि
 सप्रत्यय (लोके) येम पाठ हुआ फिर ।—

कगचतदयवांप्रायो लुक् ॥ प्रा० अ० ८ पा० १
सू० १७७॥स्वरास्परेषामनादिभूतानामसंयुक्ता
नां कगचतदपयवाना प्रायोलुग् भवति ॥

इस सूत्र से ककार का छोप होने से शेष एकार अर्थात् (छोप)
ऐसे प्रयोग हुआ, फिर 'सघ' शब्द को:—

सर्वप्रलवरामवन्द्रे ॥ प्रा० अ० ८ पा० २ सू०
७९ ॥ वन्द्रे शब्दादन्यत्र लवरासर्वत्र संयुक्तस्यो
र्ध्वमधश्चस्थितानांलुग् भवति ॥

इस सूत्र से संयुक्त रेफ का छोप हागया जैसे (सघ) अपितु
(अनादौ शेषादयार्हित्वम्) इस सूत्र से शेष वकार द्वित्व हो
गया यथा:—(सघ) अर्थात् (नमोछोपसम्भ) रूप बना फिर (राध-
साधससिद्धौ) इस साध् धातु को:—

कृवापाजिमिस्वदिसाध्यशूभ्यउण् ॥

शा० उणादि० पा० १ सू० १ ॥ ङुङुञ् करणे । वा
गतिगन्धनयो । पा पाने । जि अभिभवे । ङमिञ्
प्रक्षेपणे । ञ्वद् आस्वादने । साधससिद्धौ ।
अशूल्याप्तौ । एभ्योऽष्टधातुभ्यउण् प्रत्यय
स्यात् ॥ साधनोतिपरकार्यमिति साधुः सज्जन' ॥

॥ सर्वनिदृष्वरिष्वलष्व शिषपद्मप्रहेष्वामतन्त्रे ॥
उणादिष्विति । पा० १ सू० १५३ ॥ सर्वादयोवन
प्रत्ययान्नानिपात्यतेऽतन्त्रेऽकर्तरि सृगतौ । सर्व,
निरवशयम् ॥

इस सूत्र से उण् प्रत्ययान्त होने से खाधु शब्द सिद्ध हुआ, फिर—
 ख घ य धभाह ॥ प्रा० अ०८ पा०१सू०१८७ ॥
 स्वरात्परेषामसंयुक्ता नामनादि भूताना खघय
 धभ इत्येतेषावर्णाना प्रायोहो भवति ॥

इस सूत्र से धकार को हकार होगया, तथा (नमोछोपसभ्यसाह) से
 ऐसे रूप बना, पुनः—

पण्टो का बहु पचम माम् प्राग्यव हुआ, तिस को (टा आसोर्णः)
 इस सूत्र से णकार का भाव था हुआ, यथा, (नमोछोपसभ्यसाह
 +ण) फिर —

(जस् शस् छसिचोदोद्दामिदीर्घ) इस सूत्र से पूर्व स्वर
 दीर्घ होगया, यथा,—

(नमोछोपसभ्यसाह+ण) पून —

(कत्यास्यादेर्णस्याशी) इस सूत्र से णकार को विकल्प से अनु
 स्वार हो गया, तथा यह तथा छुद प्रयोग (नमोछोपसभ्यसाहण) का
 (नमोछोपसभ्यसाहण) ऐसे सिद्ध हुआ, अपितु अर्थ प्राग्यन् हो है ॥

॥ इति नमोछोपसभ्यसाहणं पद की स्थापनिका ॥

* अथोक्तरूपसमच्चयः *

१-(नमो अरिहताण) (णमो अरिहताणं)

(नमो अरिहताण) (णमो अरिहंताण

(नमो अरुहताण) (णमो अरुहताण

(नमो अरुहताण) (णमो अरुहताण)

(नमो अरहंताण) (णमो अरहंताण)

(नमो अरहंताण) (णमो अरहंताण)

२-(नमो सिद्धाण) (णमो सिद्धाण)

(नमो सिद्धाण) (णमो सिद्धाण)

३-(नमो आयरियाण) (णमो आयरियाण)

(नमो आयरियाण) (णमो आयरियाण)

(नमो आयरिआण) (णमो आयरिआणं)

(नमो आयरिआण) (णमो आयरिआण)

(नमो आइरियाण) (णमो आइरियाण)

(नमो आइरियाण) (णमो आइरियाण)

४-(नमो उवज्झायाण) (णमो उवज्झायाणं)

(नमो उवज्झायाण) (णमो उवज्झायाण)

५-(नमो लोएसव्वसाहूण) (णमोलोएसव्वसाहूण)

(नमो लोएसव्वसाहूण) (णमो लोएसव्वसाहूण)

अथ चूलिकापञ्चपदों का माहात्म्य रूप गाथा ।

एसोपच नमोकारो, सव्वपावपणासणो ।

मगलाणच सव्वेसिं, पढम हवइ मगल ॥

अर्थान्वय — (एसो) (एषः) यह (पच) (पञ्च) पञ्च (नमोकारो) (नमस्कारः) नमस्कार रूप पद (सव्व) (सर्वे) नारे (पाव) (पाप) पापों के (पणासणो) (प्रणाशन) प्रणाशन द्वार हैं अर्थात् पापों के नष्ट करने वाले हैं (मगलाण) (मगलाणां) मंगलीक है (व) (व) और भवितु चाप्पय है (सव्वेसिं) (सर्वेषां) सर्वस्थाना परि पढे हुए (पढमं) (प्रथमं) प्रथम अर्थात् दयादि पक्षों से स पूर्व (हवइ) (भवति) होता है (मगलं) (मङ्गलम्) मङ्गलीक ॥

माथार्थ — इस महा मन्त्र के पाञ्च ही नमस्कार रूप पद सर्व पापों के नाश करने वाले हैं तथा मगलीक और सर्व स्थानोंपरिपठन किये हुए दयादि पक्षों से भी पहिले मगलीक है क्योंकि अमृत गुण युक्त महा मन्त्र है ।

॥ अथ ओम् शब्द निर्णयः ॥

त्रिपुञ्ज पुद्गलो — पाञ्च पदों का ही बीज रूप ओम् शब्द बनता है जैसे कि—

॥ गाथा ॥

अरिना असरीरा, आयसिय उवज्झागा ।

मुणिणो पचक्खर निप्पण्णो ओंकारो पचपरमेही ॥

अर्थान्वय,—(अरिहंता) (अहंन्ता) अहंन् शब्द का आद्यवर्ण
 अकार है (असरीरा) (अशरीराः) अशरीरी शब्द ओकि सिद्ध
 पद का ही वाचक है तिसका भी आद्य वर्ण अकार है पुन (आयरिया)
 (आचार्या) आचार्य पद का आद्यवर्ण अकार है तथा (उषज्ज्ञाया)
 (उपाध्यायाः) उपाध्याय पद का आद्यवर्ण उकार है और (मुष्णिगो)
 (मुनिनः) मुनि पद का आद्यवर्ण स्वर रहित अर्थात् व्यञ्जन रूप
 मकार है इन पाँचों को एकत्र करना (पञ्चक्षर) (पञ्चाक्षर) पाँचा
 क्षर जैसे कि (अ + म + मा + उ + म्) (निष्पन्नो) (निष्पन्नः) निष्पन्न
 (ओक्षरा) (ओक्षरः) ओम् शब्द है तो (पञ्च परमेष्ठो) (पञ्च परमेष्ठि)
 पञ्चपरमेष्ठि का हो वाचक है ॥

नावाद्यः—पाँच पदों में से पूर्व के दो पदों के आद्य वर्ण अकार
 हैं तृतीय पद का आद्यवर्ण अकार है तथा चतुर्थ पद का आद्य वर्ण
 उकार है और पञ्चवें पद का आद्यवर्ण मकार है अब पाँचों की एक
 त्वता से,—

(अ + म + मा + उ + म्) ऐसा प्रयोग स्थित है पुनः—

दीर्घः ॥ शा० अ० १ पा० १ सू० ७७ ॥

अक स्थाने परेणाच्चा सहितस्य तदासन्नो दीर्घो
 नित्य भवत्यचि परे ॥

इस सूत्र से अकार दीर्घ होगया, तब (अ + मा + उ + म्)
 ऐसे रूप हुआ, तो —

ओमाङिपर ॥ शा० अ० १ पा० १ सू० ८६ ॥

अवर्णस्य स्थाने साचः परोऽजादेशो भवतिओं
 शब्दे आळादेशेचपरे ।

इस सूत्र से आचार्य एह वा आकार पर रूप होगया तब ०नेप
(भा+उ+म्) ऐसे रहा ॥

इक्चेडर् ॥ शा० अ०१ पा०१ सू०८२ ॥

अवर्णस्यस्थानेपरेणाचासहितस्यक्रमेण एह् अर्
इत्यादेशाभवन्ति हकिपरे ॥

इस सूत्र से अर्ण उपर्ण एकरव होने पर आकार होगया । तब
ऐसे रूप हुआ ।

जैसे कि —(ओ+म्) पुनः —

मम्मोहलितो ॥ शा० अ० १ पा०१ सू० १११ ॥

ममागमस्ययदान्तस्यच मकारस्य परस्वोऽनुना-
सिकोऽनुस्वारश्चपठ्यायेण भवन्ति हलिपरे ।

इस सूत्र से मकार आ स्वर रहित व्यञ्जन रूप ह तिस का
अनुस्वार होगया । तब (मी) ऐसे रूप बन गया । पुनः—

आम प्रारम्भे ॥ शा० अ०२ पा०३ सू०२१ ॥

प्रारम्भेवर्तमानस्याम प्लुतोवाभवन्ति ॥

ओ३म् ऋपमपवित्रम् । आ३म् श्री शान्ति
रम्तु सुखमस्तु । प्रारम्भेति किम् ओम् इत्यादि ॥

इस सूत्र से यह विधान है कि प्रारम्भ(आदि)में वर्तमान ओम्

● किसी २ व्याकरण पर ऐसा भी लेख है यथा—

श्लोक —अदीर्घादीर्घनांयाति, ताम्निदीर्घम्पदीर्घना ।

पूर्वदीर्घस्वरदृष्ट्वा, परलापोविधोपते ॥ १ ॥

विकल्प से मलुत हो जाता है ॥
 वक्त सूत्रों से ओम् शब्द पञ्च पद का ही वाचक सिद्ध हुआ ॥
 इस लिये विद्वानों ने ओम् शब्द को पाँच पदों का भी माना है।

॥ इति शुभम् ॥

॥ इति महामन्त्र तत्त्व प्रकाशः समाप्तः ॥

श्लोक - जानुप्रदक्षिणीकृत्य, नद्रतनविलम्बितम् ।
 अङ्गलिस्फोटनकुर्यात् सामात्रेतिप्रकीर्तिता ॥ १ ॥
 षट्कोरौत्येकमात्र द्विमात्रंरौतिवायस ।
 त्रिमात्रतुशिखीरोति ह्रस्वदीर्घप्लतक्रमात् ॥ २ ॥
 ॥ इति ॥

* प्रार्थना *

प्रियमातृ गणों यह अमूल्य महिसामय, सत्यपदार्थों का उपदेष्टा
 श्री जैनमत आपके हाथ में किस प्रकार से आया है । जिस के धारण
 करने से आप जगत में सदाचारी बनते हैं । जिस के धारण करने
 से आप परोपकारियों के सम्प्रणीय बनते हैं । जिस के धारण करने से
 आप मोक्षमार्ग के साधक होते हैं । जिस के प्रभाव से आप सम्यक
 ज्ञान सम्यक दर्शन, सम्यक चारित्र के भोलाधिर होना चाहते हैं ॥

मित्रो-यह धर्म केवल गह्रें वेषकों भावित् पूर्णवाच्यों को
 ही कृपा से आप के हाथ में आया है । देखिये आपके पूर्णवाच्यों ने
 अनेक प्रकार के सबूत सहन करके हम पवित्र जैनधर्म की रक्षा करो
 और सद्वर्तों मूलन प्रथ रचे समक विरट पादों से विजय करी जैन
 मत की श्रद्धा पद्धति । अनेक अवाधिये परमेश पादों से जय करके
 ली, सदैव फल जिनमार्ग के तत्त्वोंको सर्वोत्तम बतलाया । इस पवित्र
 जैनमत के वास्ते अपनी आयु भक्षण करी ॥

बड़ाहरण भगवन् श्री पद्मनाभ स्वामी के १८० वर्ष के
 पदपात श्री वेपथिंगणी क्षमा भजन श्री महागज न महाभारत श्री
 चतुर् संपद सनादवापिन की जिस में धाम के पण्डित दोन के
 अनेक धारण पतसाये । फिर श्री संप की आशानुसार मूख दूरगता
 कह दिये शिक्की कृपाले आज दिन हम लोग जैनसिद्धान्त को जन्मने
 हैं । फिर जिन भाषाओं में मन्त्री गिरा धारा बनने शक्तिशाली
 अनेक पद्धतों की जय कर के, अनेक पादों छोड़ा है । प्रति शोधक यह
 पद पवित्र अक्षराक्षर पद (माहटे) बचावन किया ॥

जिन के महान् परिश्रमका फल आप लोगों की दृष्टि गोचर हो रहा है। अपि तु शोक से कहना पड़ता है जिन आचार्यों ने आप लोगों पर इतना परोपकार किया किन्तु आप लोगों ने उन के भूमूल्य परिश्रम का फल कुछ भी न दिया शोक !!

भला क्या आप लोगों ने उनके नाम की कोई संस्था स्थापन की? क्या आप लोगों ने उन आचार्यों के रचित पुस्तकों को पढ़ा? या उनका पुनरुद्धार किया? कुछ भी नहीं तो क्या यह शोक का स्थान नहीं है? अवश्य है ॥

भला आप दूर की बात जाने दीजिये। किन्तु समीप काल को लीजिये। वन्हीं आचार्यों में से एक महान् आचार्य परम जैनोद्योत करने वाले जिन्होंने अनेक ही कष्ट सहन करके इस पवित्र जैन धर्म का स्थान रक्षित किया फिर पारंपरिक मत को पराजय किया पञ्जाब देश में जिन्होंने विशेष करके जैनधर्म का प्रचार किया। सत्यभार्गव भव्य जनों को युक्ति पूर्वक बतलाया। ऐसे महान् गुणों के धारक भीमदत्त आचार्य ममर सिंह जी महाराज हुए हैं। तो भला आप लोगों ने उनका नाम धिरस्यायि बनाने का क्या प्रयत्न किया 'शोक'। ऐसे परमोपकारी महारत्ना के नाम से कोई भी संस्था न हो ॥

देखिये विशाल हृदय के धारक महान् आचार्य की देया इस दुःखावसर्पिणी काल के प्रभाव से मिथ्यास्यको सदैवकाल ही धृद्धि है इसी कारण से कितनेक भ्रातृजन यह कहने लग गये थे कि गृहस्थों लोगों को सूत्र पठन करने नहीं कल्पते हैं क्योंकि उन लोगों के मन में यह विचार था कि यदि गृहस्थ लोग भी सूत्र पठने लग जायेंगे तो उस का फल हमारे लिये शुभ न होगा इसलिये यह लोग सूत्र के पठन का गृहस्थ लोगों को निषेध करते थे ॥

अपितु उक्त विशाल हृदय महर्षि ने सभी द्वारा यह सिद्ध किया कि भर्तृमान के चार ही सब अधिकारी हैं चार ही सब योग्यता धारण करते हुए सूत्रों को पढ़ सकते हैं। सो देखिये उक्त महर्षि ने कैसी

दया भाव लोगों पर की है। कि भाव लोग शास्त्र मधी प्रकार से बन सके हैं। फिर भीर भी भेगिये उक्त महारमा के परिधम का पत्र इस पत्राप देशमें जिनके साथोपदेश के द्वारा अनुमान १०० लाख ६० या ७० लाखों के अनुमान स्थान २ में जैन धर्म का प्रचार कर रहे हैं भीर मन्व जीशों का भर्तृन् के उपदेश के द्वारा सम्यक्त्व लाभ दिया रहे हैं सो यह सर्व धीमन् भचार्य भमरनिह जा महाराज के परिधम पर हो फल है जिस प्रकार उन महारमामों ने हमारे ऊपर दया भाव किया है ॥

इसी प्रकार हम भी उक्त महारमा के नामों परि को पवित्र धर्म कार्य करें जिस के करने से हम अनाच्छीन होयें तो वह पूर्य यह है स्थान २ उन के नाम से धर्म मर्यादें स्थापन करें जैसे कि भमर जैन पाठशाला भमर स्कूल, भमर दारुशाला भमर कोवित्र, भमर पुस्तकालय, भमर औषधालय, भमर जीव दया फल, भमर विपदा भ्रम, भमर अनाथाश्रम, भमर शुद्धूल भमर प्रपचारि भाधम, भमर तार्जिशाला, भमर व्यावशाला भमर पिद्याशाला, भमर सर्व सिरी सख्या शयादि भाधम उक्त महर्षि के नामों परि स्थापन किये जयें तो हम काम से उत्तीर्ण हो सके हैं ॥

इसीलिये हमारी सर्व स्नातृमणों से प्रार्थना है कि वे भी प्र ही दया भावदयकता उक्तस्थान स्थापन करें भीर हमारी इच्छा इस समस्त भमर जैन दारुशाला स्थापन करने का है सो हमें पूर्ण प्रकार से हमारे स्नातृगण सहायक हैं जित करण हम शीघ्र ही उक्त स्थापना का काम सधे कर्षीरि यह सनायता भाव लोगों की भगने परमाचार्य के नाम को भमर करने वाली भीर धी मन्वन् प्रजोत धर्म के प्रकाश करने वाली है।

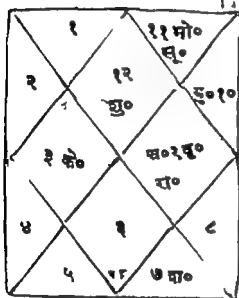
भयदीयानुचरो

श्रामान् द्याधू परमानन्द जैन, श्री० ए० एल० एल० श्री०
वकील कसूर, पालाला फत्तुराम (त्रिपदशी), जैन लुचिपाना

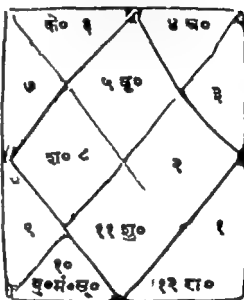
अथ शुद्धि पत्रम् ।

प्रियस्तुत जनों ! पृष्ठ ८ ३४ ८६ की जमकुण्डलियों में किम्बित् मात्र भग्नियें रह गई हैं इस कारण से निम्न लिखित कुण्डलियों को अनुक्रमता से शुद्ध सात करना चाहिये । यथा :-

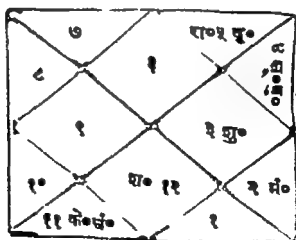
पृष्ठ ८ की



पृष्ठ ३४ की



पृष्ठ ८६ की



पृष्ठ पङ्क्ति अनुलि श्रुति

१	१३	परमा	परे
२	९	वृत्तार्थे	वृत्तार्थे
३	१४	प्रकाश	प्रकाश
४	१५	द्वयेताम्रपर	द्वयेनाम्बर
५	१७	जनमतोपर	जनमतकपर
६	१७	भौमो	भो
७	४	हे	हे
८	६	हे	हे
९	७	शुशोमित	सुशोमित
१०	१२	कुसुम	कुसुम
११	२१	गणिक	गणक
१२	२३	मपण	मपण
१३	२५	पित्तही	पित्तही
१४	२६	मृत	मृत
१५	२८	त्रिनक्ष	त्रिनक्षे
१६	२०	क्षत्री	क्षत्रिय
१७	१	जप	जप
१८	१२	वप्टम	वप्टम
१९	१८	सपष्ट	सपष्ट
२०	३	परपारक	प्रपारक
२१	१२	कप	कपी
२२	१४	मिच्छात	मिच्छात
२३	१४	दे चीये	देनिये
२४	१९	परवा	कर्पा
२५	२१	परवा	कर्पा

पृष्ठ	पंक्ति	मनुसि	शुद्धि
१३	२	घडिष	घडियं
१६	४	सूत्रानसार	सूत्रानुसार
१७	२	ह	है
१७	४	सगे	सबोदर
१८	११	फिरोजपुर	फोरोजपुर
१८	१३	घौमास	घौमास है
२०	१७	पज्य	पूज्य
२०	२३	भमिष्ट चरण को	भमिष्टाचरण को
२१	१४	विक्रमाब्द	विक्रमाब्द
२१	२५	क	के
२२	१२	क	कि
२४	१२	करके	करि कि
२४	१९	सूत्र	सूत्र
२६	२२	साति के	०
२७	११	पञ्चम	पञ्चम
२८	२४	पद्मात्	पद्मात्
२९	४	कण्धोरी	कधोरी
३०	१३	कशर	केशर
३०	२५	जैन समाचार	जैन समाचार
३६	२१	प्रकृत्य	प्रकृति
३६	२२	खसे	खसे
३६	२६	खड	खेद
३७	११	मिथ्यात	मिथ्यात्व
३७	२१	जीका	जीकी
३८	५	चातराहार	चतुपहार

पृष्ठ	पंक्ति	मनुसि	शुसि
४०	१	कल्पित विनाशुह के	कल्पित
४०	४	हे	हे
"	१०	आमापि	आमापि
"	११	सुखमर्दन	सुखमर्दन
४१	१०	मच्छेह	मच्छेह
४१	११	वषाय	वषाय
"	२१	जैन	जैनमत के
४४	२५	अनुकठ	अनुकठ
४५	१	यदने	यदने
"	५	मासिगिज	मासिगिज
"	१०	२	२२
"	२३	अहार	अहार
४६	१०	साधियर्ण	साधियर्ण
४७	९	हे	हे
"	१३	उद्योतन	उद्योतन
"	१४	निरुप	निरुप
"	१५	आस्थाप्य	आस्थाप्य
"	१६	श्रितियाध्याय हे	श्रितियाध्याय हे ।
"	१७	तुनिषा	तुनिषा
४८	४	आधुमी	आधुमी
४९	९	आधुन	आधुमी
५०	२१	गनमी	मी
"	२३	आनगाध्यायिज	आनगाध्यायि
५१	११	आधुमी	आधुमी
५२	२६	दिव	दिव

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
५६	२५	बूटेराय	बूटेराय
५७	७	तपागच्छ	तपागच्छ
"	१८	भोद्यवाळ	भोद्यवाळ
५८	१५	बूटेराय	बूटेराय
"	१८	से	से
"	१९	सेसे	सेसे
५९	२	पूर्वोक्त	पूर्वोक्त
"	२	कितनाहा	कितनाही
"	२३	साधु	साधु
"	२५	कदसकते	कदसकते
६०	१६	पूजन	पूजन
६०	२४	भगवान्	भगवान्
६१	१	महिजा	महिजा
६१	२०	सर्षो	सर्षो
६१	२०	पूर्ण	पूर्ण
६२	१०	पूज्य	पूज्य
६३	१०	कपर	कपर
६३	२३	हं	हं
६३	२	छद्य	छद्य
६३	९	वसूत	वसूत
६३	१	को	को
६३	२३	को	को ।
६७	२	भीर	भीर
६७	१७	लिखते	लिखते
६७	२१	नमस्कार	नमस्कार

पृष्ठ	पंक्ति	मनुस्मृति	ह्यस्मि
३८	९	पिद्मपद्म	पिद्मपद्म
३८	११	न	ते
३९	१५	पश्य	दृश्य
७०	३	रस्य	दृश
७०	५	विहार	विहार
७०	२४	छाड	छोड
७१	७	भाइया	भाइयो
७१	१३	उत्तर	उत्तर
७२	२२	लिङ्गिय	लिङ्गिये
७४	१३	प्रकृत्यानुकूल	प्रकृत्यानुकूल
७५	२	निषित	निषिद्यत्
७६	२२	जट्टमन्त्र	जट्टमन्त्र
७७	३	धर्माद्योत	धर्मोद्योत
७८	३	जना	जनो
७८	१६	जन	जैन
८८	१	जुषो	जुषो
७९	१४	रथया	रथया;
८०	३	जीहा	जीह्ये
८०	८	जा	जे
८२	१४	मुष	मुषे
८२	१०	परोपरि	पर
८२	२५	पल	पल
८२	२३	पर्व	पर्व
८४	१४	जोरो	जोरो
८५	१	पञ्च	पञ्च

(१७१)

पृष्ठ	पङ्क्ति	अष्टाक्षरि	शुद्धि
८६	८	११क	११के
८७	७	१	हे
८८	१	लल,	लौल
८९	५	लिखिने	लिखने
८९	२३	आत्मराम	आत्माराम
९०	२१	आयर्हे	आपधे
९१	१२	के	'के'
९१	१९	होगया	होगये
९२	३	होषगा	होषेगा
९२	७	लिष्ट	लिष्टे
९२	७	जम	जैन
९४	१७	पदचान	पदचात
९५	१७	पर्वत्	पर्वत
९९	३	जिनक	जिनके
९९	२	छोगो	छोगों
९९	१६	षष्टम् अष्टम्	षष्टम अष्टम
१००	६	१	१
१००	१६	श्रीवान्	श्रीमान्
१०१	२१	होयेगे	होयेंगे
१०२	५	ह	है
१०३	८	करनेसे	करनेसे
१०४	४	को	की
१०४	५	मर्हन्	मर्हन्
१०४	२६	सम	सूत्र
१०५	२३	छा	छगे

(१७२)

पृष्ठ	पंक्ति	अनुदि	दुदि
१०७	१२	घ	घे
"	१५	ह	हे
"	२२	म	मे
१०९	२४	सुधन्मतोले	सुधन्मतले
१११	२१	मही	महीं
११२	१	घटघण	घटघण
"	२७	भापाप	भापापे
११३	४	सम्मत्पानुसार	सम्मत्पानुसार
११३	४	१९५२	१९५१
"	६	गन्नापच्छेदिका	प्रपच्छिन्न
"	२३	एसे	ऐसे
११४	११	पं परा	परंपरा
"	२५	मतिपूजा	मृतिपूजा
११५	२१	मही हे	मही है
११६	३	मोहोरम	मोहोराम
११६	२१	१९११	१९१२
११७	१४	मृति	मृति
११८	४	मै	मै
"	५	घ	घे
"	१३	लोप्ये	लोप्ये
"	१८	म	मै
११९	१९	क	के
१२०	१९	मृत्पूजा	मृतिपूजा
११२	२०	पूजा	पूजा

पृष्ठ	पंक्ति	मशुद्धि	शुद्धि
१२२	२	सज	सूत्र
"	३	जी	खोके
"	१०	झी	छो
"	१७	अर्थात्	अर्थात्
"	२०	अस्य	अस्य
"	२१	शब्द	शब्द
"	२१	करणी	करणी
"	२३	अस्य	अस्य
"	२३	अस्य	अस्य
"	२५	मूर्ति	मूर्ति
१२३	८	क	के
१२४	४	अनेक	अनेक
१२५	३	१०६३	१०६३
"	६	रेणु	रेणु
१२६	२४	द्वितीय	द्वितीय
१२७	२४	कमियाकार	कमियाकार
१२८	१	सूत्र	सूत्र
१२९	३७	पूजा	पूजा
१३०	१३	होता है	होता है
१३१	१९	जीव	जीव
१३५	८	आटावन	आटावन
१३६	२३	दण्ड	दण्ड
१३७	२१	येसे	येसे
१३९	४	छोक	छोके
१४०	११	गौर	गौर

('१७४)

पृष्ठ	पंक्ति	मनुसि	ग्रन्थि
१४२	३	सम	सूत्र
१४३	१३	६०	सू०
१४४	१५	मू	मू
१४७	८	यत्	यत्
१४८	२	इससेसत्र	इससबने
१५०	२१	एसे	देसे
"	२२	पुन बाम्को	पुन
१५१	१	या	को
"	३	(मपणैपपद्यति)	(मपणैपपद्यति)
१५३	१८	दाजान	दोमाने
१५५	५	शम्भ	शम्भ
"	९	सब	सब
१५५	१०	डोपाद्या	डोपाद्यापो
१५६	१२	पुना	पुना
१५९	१३	भीर	भीर
१६०	१८	सत्र	सूत्र



